उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

समाज मनोविज्ञान (बीएपीवाई(N) -102

Social Psychology (BAPY(N)- 102)

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
खण्ड 1.	**समाज मनोविज्ञान का परिचय (Introduction to Social Psychology)**	
इकाई-1	समाज मनोविज्ञानः स्वरूप, कार्यक्षेत्र, उपयोगिता,सामाजिक व्यवहार के नियम-अनुकरण, सुझाव एवं सहानुभूति (Social Psychology: Nature, Scope and Utility, Principles of Social Behavior-Imitation, Suggestion, Sympathy)	1-18
इकाई-2	व्याहारिक विज्ञान के रूप में समाज मनोविज्ञान (Social Psychology as Applied Sciences)	19-34
इकाई-3	समाज मनोविज्ञान की विधियां(Methods of Social Psychology)	35-51
खण्ड 2.	**अभिवृत्ति, पूर्वाग्रह, विभेद एवं साम्प्रदायिकता (Attitude, Prejudice, Discrimination and Communalism)**	
इकाई-4	अभिवृत्ति का अर्थ और विशेषताएँ, अभिवृत्ति का निर्माण एवं परिवर्तन (Meaning and Characteristics off Attitude, Formation and Change of Attitude)	52--65
इकाई-5	पूर्वाग्रह; अर्थ, विशेषताएँ एवं प्रकार (Prejudice; Meaning, Characteristics and Types)	66-78
इकाई-6	पूर्वाग्रह के कारण, पूर्वाग्रह के प्रभाव पूर्वाग्रह एवं विभेदन में भेद(Causes of Prejudice, Effects of Prejudice, Difference between Prejudice and Discrimination)	79-86
इकाई-7	पूर्वाग्रह एवं विभेद को दूर करने की विधियाँ, भारत में साम्प्रदायिकता(Methods of reducing Prejudice and Discrimination, Communalism in India and it's Causes)	87-95
खण्ड 3.	**सामाजिक प्रभाव प्रक्रम (Social Influence Processes)**	
इकाई 8.	सामाजिक प्रभाव स्वरूप, अवयव एवं प्रकार अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के सिद्धांत(Social Influence: Nature, Components and Kind, Theories of Interpersonal Attraction)	96-113
इकाई 9.	प्रसामाजिक व्यवहार ,परोपकारी व्यवहार , परोपकारी व्यवहार सिद्धान्त(Pro-Social Behavior and Altruistic behavior, Theories of Pro-Social behavior)	114-128
इकाई-10	आक्रामकता तथा हिंसा, आक्रामकता के सिद्धांत हिंसा के कारण (Aggression and Violence, Theories of Aggression, Causes of Violence)	129-140

इकाई 1-समाज मनोविज्ञानः स्वरूप, कार्यक्षेत्र, उपयोगिता,सामाजिक व्यवहार के नियम-अनुकरण, सुझाव एवं सहानुभूति (Social Psychology: Nature, Scope and Utility, Principles of Social Behavior-Imitation, Suggestion, Sympathy)

इकाई संरचना-

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 समाज मनोविज्ञान परिचय
1.3.1 परिभाषा एवं विशेषता
1.4 समाज मनोविज्ञान का स्वरूप
1.5 कार्यक्षेत्र
1.6 उपयोगिता
1.7 सामाजिक व्यवहार के नियम
1.7.1 अनुकरण
1.7.2 सुझाव या संसूचन
1.7.3 सहानुभूति
1.8 सारांश
1.9 शब्दावली
1.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न एवं उनके उत्तर
1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। परिस्थितियों के अनुसार भिन्न-भिन्न अवसरों पर उसके व्यवहार बदलते रहते हैं। व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार को समझने के लिए ही समाज मनोविज्ञान का प्रादुर्भाव हुआ है। मानव सामाजिक व्यवहार का अध्ययन प्राचीन काल से ही किया जाता रहा है। यह कहा जा सकता है कि इस विषय का उदय पाश्चात्य दर्शन से हुआ है। प्रारम्भिक विचारकों का दृष्टिकोण दार्शनिक या आत्मनिष्ठ हुआ करता था। आधुनिक दृष्टिकोण वस्तुनिष्ठता एवं वैज्ञानिकता पर बल देता है। स्पष्ट है कि समाज मनोविज्ञान का आधुनिक स्वरूप अतीत की तुलना में अधिक वैज्ञानिक हो गया है। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में समाज मनोविज्ञान का विकास मुख्यतः अमेरिका में हुआ।

वहाँ के विद्वानों ने सामाजिक समस्याओं और आवश्यकताओं के समाधान के लिए समाज मनोविज्ञान नियमों और सिद्वान्तों का सहारा लिया। द्वितीय विश्व युद्ध से उत्पन्न व्यवहार सम्बन्धी अनेक समस्याओं का समाधान समाज मनोविज्ञान के नियमों व सिद्धान्तों द्वारा किया गया। वर्तमान में यह विषय तीव्र गति से विकसित हो रहा है। समाज मनोविज्ञान की परिभाषा, स्वरूप, कार्यक्षेत्र, उपयोगिता तथा सामाजिक व्यवहार के नियम-अनुकरण सुझाव एवं सहानुभूति का समावेश करते हुए स्व-अध्ययन पाठ्य सामग्री की प्रथम इकाई का निर्माण किया गया है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप-

1. समाज मनोविज्ञान से परिचित हो सकेंगे। इसकी परिभाषा, स्वरूप, कार्यक्षेत्र एवं उपयोगिता को समझ सकेंगे।
2. सामाजिक व्यवहार के नियम के अन्तर्गत अनुकरण, सुझाव एवं सहानुभूति से अवगत हो सकेंगे।
3. समाज मनोविज्ञान के उपर्युक्त आधारभूत विषय वस्तु के अध्ययन के उपरान्त अग्रिम अध्ययन के साथ-साथ व्यक्तिगत जीवन की व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में समक्ष हो सकेंगे।

1.3 समाज मनोविज्ञान का परिचय

मनोविज्ञान कभी चेतना के तो कभी आत्मा के, कभी मन के तो कभी मनुष्य के व्यवहार से जोड़ा गया। परन्तु वास्तविक विषय वस्तु को समझना प्रायः जटिल साबित हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक तक समाज मनोविज्ञान का स्वरूप दार्शनिक था। इसके अन्तिम दशक में यह दार्शनिक चिन्तन से स्वतंत्र होकर मनोविज्ञान की एक शाखा के रूप में आ गया। समाज मनोविज्ञान का इतिहास 1908 से प्रारम्भ होता है जब विलियम मैकडूगल ने समाज मनोविज्ञान की प्रथम पाठ्य पुस्तक प्रकाशित की। वर्ष 1908-1939 तक समाज मनोविज्ञान का प्रारम्भिक काल माना गया। वर्ष 1940-1970 में अनेक शोध कार्य हुए। इसका कार्यक्षेत्र और विकसित हुआ। वर्ष 1970 के बाद पहले से शुरू किए गये शोध कार्यों को जारी रखते हुए नई-नई सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जा रहा है। समाज मनोविज्ञान के अन्तर्गत विशेष रूप से प्राणी के सामाजिक व्यवहार का ही अध्ययन किया जाता है।

1.3.1 समाज मनोविज्ञान की परिभाषा एवं विशेषता

समाज मनोविज्ञान एक ऐसा वैज्ञानिक क्षेत्र है जो सामाजिक परिस्थिति में व्यक्ति के व्यवहार एवं चिन्तन के स्वरूप एवं कारणों को समझने की कोशिश करता है। *Baron & Byrne and Branscombe*, **के अनुसार** "व्यक्ति दूसरों के बारे में किस तरह सोचता है, दूसरे को कैसे प्रभावित करता है तथा एक दूसरे को किस तरह सम्बंधित करता है का वैज्ञानिक अध्ययन ही समाज मनोविज्ञान है"।

Myers के अनुसार समाज मनोवैज्ञानिकों ने समाज मनोविज्ञान को अपने दृष्टिकोण के अनुसार परिभाषित किया है। एक समानता सभी में पायी जाती है। करीब-करीब सभी लोगों ने समाज मनोविज्ञान के विषयवस्तु के रूप में

व्यक्ति द्वारा सामाजिक परिस्थिति में किए गये व्यवहार को स्वीकृत किया है। न्यूकाम्ब (Newcomb 1962) ने ऐसे व्यवहारों को अन्तःक्रिया की संज्ञा दी है। इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषाओं एवं समानता को दृष्टिगत रखते हुए मनोविज्ञान की सामान्य परिभाषा निम्नवत् है।

"समाज मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार तथा अनुभूतियों का सामाजिक परीस्थिति में अध्ययन करने का एक विज्ञान है"।

इस सामान्य परिभाषा का विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य प्राप्त होते हैं-

i. समाज मनोविज्ञान एक विज्ञान (Science) है तथा मनोविज्ञान की एक शाखा है।
ii. समाज मनोविज्ञान में व्यक्ति के व्यवहारों एवं अनुभूतियों का अध्ययन किया जाता है।
iii. एक समाज मनोवैज्ञानिक इन व्यवहारों एवं अनुभूतियों का अध्ययन सामाजिक परिस्थिति में करता है।

1.4 समाज मनोविज्ञान का स्वरूप

समाज मनोविज्ञान की परिभाषाओं पर विचार करने पर स्पष्ट होता है कि समाज मनोविज्ञान एक विज्ञान है। यह भी स्पष्ट होता है कि इसमें व्यक्ति के उन व्यवहारों तथा अनुभवों का अध्ययन किया जाता है। जिनका प्रदर्शन या उत्पत्ति सामाजिक परिस्थिति के कारण होता है। ऐसे व्यवहार जिनकी उत्पत्ति सामाजिक कारणों से नहीं होती है वे समाज मनोविज्ञान की परिधि में नहीं आते हैं। विभिन्न परिभाषाओं के विश्लेषण करने पर समाज मनोविज्ञान के स्वरूप को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है-

- समाज मनोविज्ञान में व्यक्ति ही अध्ययन का केंद्र बिन्दु होता है।
- इसमें व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार तथा अनुभव का अध्ययन किया जाता है।
- सामाजिक कारणों से भिन्न व्यवहार समाज मनोविज्ञान की विषय वस्तु नहीं होती है।
- सामाजिक व्यवहार को समझाना तथा कारणों को स्पष्ट करना इसका मूल उद्देश्य होता है।
- सामाजिक व्यवहार का अध्ययन वैज्ञानिक विधि से किया जाता है, ताकि व्यवहार तथा उसको उत्पन्न करने वाले कारण के बीच वस्तुनिष्ठ संबंध स्थापित किया जा सके।
- सामाजिक व्यवहार सामाजिक अन्तक्रिया या सामाजिक प्रभाव का परिणाम होता है।
- सामाजिक उद्दीपक परिस्थिति का निर्माण अन्य व्यक्ति, अन्य व्यक्तियों के समूहों तथा सांस्कृतिक कारकों से होता है। इनसे प्रभावित होने पर सामाजिक व्यवहार प्रदर्शित होता है।

समाज मनोविज्ञान के स्वरूप से संबंधित बिन्दुओं से स्पष्ट होता है कि मानव अध्ययन का मुख्य केन्द्र विन्दु होता है। इसमें मानव के सामाजिक व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। इससे यह स्पष्ट है कि मानव व्यवहार का ही अध्ययन इसमें किया जाता है। मानव व्यवहार की व्यवस्था उसके स्वयं के व्यक्तित्व सामाजिक सम्बन्ध तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर निर्भर करती है।

1.5 कार्यक्षेत्र

समाज मनोविज्ञान का क्षेत्र बहुत व्यापक और विस्तृत है। इसके अन्तर्गत समाज में व्यक्ति के व्यवहार, सामाजिक दशा में व्यवहार, सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित व्यक्ति के व्यवहार तथा इन सभी क्षेत्रों से सम्बन्धित सामाजिक अन्तःक्रियाओं और सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। समस्याएँ एक व्यक्ति से, एक समूह से, कई समूहों से या अनके व्यक्ति से सम्बन्धित हो सकती हैं। इन समस्याओं का अध्ययन, विश्लेषण और व्याख्या ही मूल रूप से समाज मनोविज्ञान का क्षेत्र है। विकास के साथ-साथ समाज मनोविज्ञान का क्षेत्र भी विस्तृत होता जा रहा है। अतः इसका क्षेत्र स्थाई व निश्चत नही है। इसके क्षेत्र तथा समस्याओं को सीमाबद्ध करना कठिन है। फिर भी संक्षेप में इसे निम्नवत् स्पष्ट किया जा रहा है-

i. **व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार**-मानव के अधिकतर व्यवहार पर सामाजिक कारणों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। मनोविज्ञान विभिन्न परिस्थितियों में व्यवहार का विश्लेषण करके व्यवहार तथा कारण के बीच नियमपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करता है। अतः जीवन के प्रत्येक पहलू में समाज मनोविज्ञान का क्षेत्र निहित हैं।

ii. **बालक के सामाजीकरण**-शिशु जैसे - बड़ा होता है वैसे-वैसे उसमें सामाजिक समझ भी बढ़ती है। तदनुसार वह सामाजिक व्यवहार भी करने लगता है। शिशु के सामाजिक अधिगम प्रक्रम का जीवन में अत्यधिक महत्व है। अतः बच्चों में अच्छे गुणों का विकास तथा अवांछित व्यवहारों को नियंत्रित करने हेतु उपर्युक्त परिस्थितियाँ उत्पन्न करना सामाजिक मनोवैज्ञानिकों का मुख्य कार्य है।

iii. **सांस्कृतिक कारकों का मूल्यांकन** -सांस्कृतिक परिवेश की जो विशेषताएँ होंगी उसी के अनुरूप व्यक्ति में गुणों का विकास होगा। उदाहरणार्थ-धार्मिक परिवेश में पले बच्चों में दया, धर्म तथा सहनशीलता अधिक होगी और आक्रामक परिवेश में पले बच्चे झगड़ालू असहिष्णु एवं अवांछित हो सकते हैं। इन समस्याओं का अध्ययन समाज मनोविज्ञान का ही कार्य है।

iv. **वैयक्तिक एवं समूह भिन्नता**-किसी विशेष समूह के सदस्यों में समानता के साथ-साथ असमानता भी पायी जाती है। वह समूह भी विशेषता से प्रभावित तो रहता ही है साथ में उसमें उसके अपने विशिष्ट गुण भी होते हैं। उनका अध्ययन एवं विश्लेषण करना समाज मनोविज्ञान के ही कार्य क्षेत्र में आता है।

v. **सामूहिक प्रक्रमों का अध्ययन**-समूहों की रचना कैसे होती है। समूह क्यों स्थिर/अस्थिर हो जाते हैं? समूह स्तरीकरण का विभिन्न सदस्यों के व्यवहारों पर कैसा प्रभाव पड़ता है। विभिन्न समूहों के पारस्परिक सम्बन्ध किस प्रकार बनते हैं। समूह सम्बन्धी इन सभी घटनाओं एवं प्रक्रमों का अध्ययन समाज मनोविज्ञान का एक प्रमुख कार्य है। इसी प्रकार नेतृत्व एवं मनोबल आदि का भी अध्ययन एक महत्वपूर्ण कार्य है।

vi. **सामूहिक व्यवहारों का अध्ययन**-भीड़ (Crowd) एवं श्रोतागण (Audience) आदि जैसी सामूहिक या परिस्थितिजन्य स्थितियों का अध्ययन समाज मनोविज्ञान द्वारा किया जाता है। इनकी विशेषताओं, इनके निर्धारकों तथा व्यक्ति के वैयक्तिक व्यवहार इनके प्रभावों का मूल्यांकन करना समाज मनोविज्ञान का ही कार्य है।

vii. **अभिवृत्ति एवं पक्षपात-**समाज मनोविज्ञान में अभिवृत्तियों के स्वरूप निर्माण तथा परिवर्तन पूर्वाग्रहों (Prejudice) एवं रूढ़िबद्ध धारणाओं (Stereotypes) के भी अर्जन तथा उनके निर्धारकों का अध्ययन समाज मनोविज्ञान में होता है। व्यवहार को एक निश्चित रूप मे प्रदर्शित करने में इनकी अहम् भूमिका होती है। इनके निराकरण का उपाय सुझाना, समाज मनोविज्ञान का मुख्य उद्देश्य होता है।

viii. **सामाजिक व्याधिकी (Social Pathology)-** आज पारिवारिक विघटन, अपराध, बाल विवाह, समूह संघर्ष, बाल अपराध, युद्ध, भिक्षावृत्ति, सामाजिक अशांति, साम्प्रदायिक दंगे धार्मिक असहिष्णुता, शोषण तथा मानसिक विकृतियाँ आदि बहुत साधारण बातें हो गई हैं। अन्य समस्याओं के मानवीय एवं सामाजिक पहलुओं का विश्लेषण करना तथा इनके समाधान के लिए विकल्प तैयार करना समाज मनोविज्ञान की आवश्यक विषय वस्तु है।

ix. **प्रचार** (**Propaganda**)- आज प्रचार का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। इसके द्वारा व्यक्ति के राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं अन्य प्रकारों के व्यवहारों का निर्देशन तथा नियंत्रण होता है। विषयवस्तु लोकप्रिय बनाने के लिए उपयोगी सुझाव देना साथ ही कुप्रचारों से बचने का भी सुझाव देना समाज मनोविज्ञान का कार्य है।

x. राजनैतिक उपयोगिता-आज का युग राजनीतिक युग है। अतः लोगों के विचारों तथा व्यवहारों को प्रभावित करने, समूह संगठनों, दलों के गठन और अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए समाज मनोवैज्ञानिक नियमों एवं सुझावों का उपयोग किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त विभिन्न संगठनों तथा राष्ट्रों के बीच व्याप्त तनाव तथा दूरी को कम करने के लिए भी समाज मनोवैज्ञानिक उपक्रमों का उपयोग किया जा सकता है।

1.6 उपयोगिता/महत्व

मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यावहारिक एवं सैद्धान्तिक दोनों प्रकार के पक्षों का अध्ययन करता है। अतः मनोविज्ञान की इस शाखा की उपयोगिता को निम्नलिखित दो भागों में बाँटा जा सकता है-

i. व्यावहारिक उपयोगिता
ii. सैद्धान्तिक उपयोगिता

व्यावहारिक उपयोगिता

- सुखद सामाजिक जीवन स्थापना
- स्वस्थ औद्योगिक विकास
- भेदभाव से मुक्त सामाजिक विकास एवं
- स्वस्थ सामाजिक समायोजन में समाज मनोविज्ञान की उपयोगिता बहुत महत्वपूर्ण है।

i. **सुखद सामाजिक जीवन स्थापना-** प्रत्येक समाज की अपनी-अपनी संस्कृति होती है। अतः प्रत्येक समाज के व्यवहार भी भिन्न-भिन्न होते हैं। सामाजिक व्यवहार भिन्नता के कारण सामाजिक तनाव (Tension), युद्ध, शीत युद्ध, पूर्वाग्रह, रूढ़ियाँ, साम्प्रदायिक दंगे, अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध होते ही रहते हैं। इनसे

हमारा सामाजिक जीवन कुप्रभावित होता है। समाज मनोविज्ञान हमें सामाजिक तनाव को समाप्त कर एक सुखद सामाजिक जीवन कायम करने में मदद करता है।

ii. **स्वस्थ औद्योगिक विकास-** प्रचार एवं जनमत ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ कुशल प्रचार के द्वारा औद्योगिक माल के प्रति अच्छा जनमत तैयार किया जा सकता है। इससे उत्पादित वस्तु की माँग बढ़ जती है। इस प्रकार समाज मनोविज्ञान राष्ट्र के औद्योगिक विकास में मदद करता है। बड़े-बड़े औद्योगिक संस्थानों में समाज मनोवैज्ञानिक मजदूरों एवं मालिकों के बीच उत्पन्न तनाव को कम करके उनके बीच एक सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करते हैं। इससे औद्योगिक विकास को बल मिलता है।

iii. **भेदभाव मुक्त सामाजिक विकास**- वर्तमान सामाजिक जीवन में पूर्वाग्रह एवं रूढ़ियाँ काफी व्याप्त हैं। जातीय पक्षपात अपनी चरम सीमा पर है। इनसे सामाजिक जीवन नीरस सा हो गया है। समाज मनोविज्ञान इस नीरसता को दूर करने में काफी सहायक सिद्ध हो रहा है।

iv. **स्वस्थ सामाजिक समायोजन-** आधुनिक समाज में गतिशीलता बहुत अधिक है। परिवर्तन की गति बहुत तीव्र है। सामाजिक जीवन को सजग, सरल एवं सफल बनाए रखने के लिए व्यक्तियों का समायोजन सामाजिक परिवर्तनों के साथ-साथ होना आवश्यक है। समाज मनोविज्ञान सामाजिक मूल्यों, सामाजिक मानको, सामाजिक शक्ति आदि के बारे में यथोचित ज्ञान उपचार कराकर उन्हें स्वस्थ सामाजिक समायोजन करने में मदद करता है।

सैद्धान्तिक उपयोगिता

समाज मनोविज्ञान की कुछ सैद्धान्तिक उपयोगिताएं भी हैं जिसके कारण मनोविज्ञान की यह शाखा काफी लोकप्रिय हो गई है।

- सामाजिक परिस्थिति में व्यक्तियों के अन्तःक्रियाओं का अध्ययन कर समाज मनोवैज्ञानिकों द्वारा ऐसे नियम एवं सिद्धान्त तैयार किए जाते हैं जिससे स्वस्थ सामाजिक क्रम (Social order) बना रहे। निश्चित सामाजिक क्रम एवं सामाजिक व्यवस्था के परिणामस्वरूप व्यक्तियों में खुशहाली छाई रहती है।
- प्रत्येक समाज का एक मानक (Norm) तथा मूल्य (Value) होता है, जिसके अनुसार व्यक्तियों को व्यवहार करना पड़ता है। इन मानकों के आधार पर समाज मनोवैज्ञानिक यह बताने की कोशिश करते हैं कि अमुक व्यक्ति का व्यवहार समाज विरोधी क्यों है। इसके कारण क्या हैं। इनका उपचार कैसे हो सकता है।
- समाज मनोविज्ञान व्यक्तित्व के स्वस्थ विकास में मदद करता है। समाज मनोविज्ञान व्यक्तियों को एक सफल, सजग एवं सुन्दर नागरिक बनाकर एक आदर्श समाज की स्थापना करने में मदद करता है।
- समाज मनोविज्ञान दूसरे व्यक्तियों का सही सही प्रत्यक्षण करने तथा उनके बारे मे सही-सही निर्णय लेने में मदद करता है। सामाजिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यक्ति प्रत्यक्षण (Social perception) के क्षेत्र में अनेक सिद्धान्तों एवं नियमों का प्रतिपादन किया गया है। जिनसे अन्य व्यक्तियों को समझने एवं उनके साथ सामाजिक अन्तःक्रिया करने में मदद मिलती है।

इस तरह समाज मनोविज्ञान मानव के लिए बहुत उपयोगी मनोविज्ञान है। इन व्यवहारिक एवं सैद्धान्तिक उपयोगिताओं के आधार पर समाज मनोविज्ञान, आज मनोविज्ञान की एक लोकप्रिय शाखा के रूप में उभर कर लोगों के सामने आ सका है।

1.7 सामाजिक व्यवहार के नियम

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इन व्यवहारों को समझने के लिए समाज मनोवैज्ञानिकों ने कुछ नियमों का प्रतिपादन किया है। इन नियमों के आधार पर सामाजिक अन्तःक्रिया होती है। मैकडूगल (Mc. Dougal, 1919) के अनुसार इन नियमों को तीन भागों में बांटा जा सकता है-

- अनुकरण (Imitation)
- सुझाव (Suggestion)
- सहानुभूति (Sympathy)

1.7.1 अनुकरण (Imitation)

अर्थ एवं स्वरूप - साधारण भाषा में अनुकरण का अर्थ नकल करना होता है। जब एक बच्चा या व्यक्ति दूसरों के व्यवहार को देखकर वैसा ही व्यवहार करता है तो इस प्रक्रिया को अनुकरण की संज्ञा दी जाती है। नकल किए जाने वाले व्यवहार का मतलब नकल करने वाला व्यक्ति जानता भी न हो तो भी वह नकल करता है।

उदाहरण-

i. पिता को लिखते हुए देख कर बच्चा भी पेंसिल से रेखाएं खीचना प्रारम्भ कर देता है।
ii. पिता को किसी मूर्ति के सामने झुकते हुए देखकर बच्चा भी सिर झुकाने लगता है।
iii. पिता को चश्मा लगाते देख कर पुत्र भी मौका देखकर चश्मा चढ़ा लेता है।
iv. सिनेमा में अभिनेता एंव अभिनेत्रियों के पहनावा को देखकर युवक-युवतियां उनकी नकल करने लगती हैं।
v. किसी मधुर संगीत को सुनकर व्यक्ति स्वतः अपनी उंगलियों से तान या थाप देना प्रारम्भ कर देता है।

- **चेतन अनुकरण (Conscious Imitation)** - जब कोई व्यक्ति जानबूझकर किसी अन्य व्यक्ति के व्यवहार का अनुकरण करता है तो उसे चेतन अनुकरण कहते हैं। उपर्युक्त 1 से 4 तक के उदाहरण चेतन अनुकरण से सम्बन्धित हैं।
- **अचेतन अनुकरण (Unconscious Imitation) -** अचेतन अनुकरण में व्यक्ति जान बूझकर दूसरे का अनुकरण नहीं करता है। अज्ञात रूप से अपने आप ही नकल हो जाती है। मिलर तथा डोलार्ड ने इस तरह के अचेतन अनुकरण को समेल निर्भरता (Matched Dependent) कहा है। जैसे-किसी मधुर संगीत को सुनकर लय के अनुसार व्यक्ति स्वतः अपनी उगलियों से तान या थाप देने लगता है। अनुकरण इतना स्वाभाविक एवं व्यापक होता है कि मैकडूगल (Mc. Dougal 1909) ने इसे एक मूलप्रवृत्ति की श्रेणी में रखने की संस्तुति की। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों जैसे-मिलर तथा डोलार्ड, एवं मर्फी तथा मर्फी

एवं न्यूकाम्ब ने असहमति जताते हुए कहा कि अनुकरण एक मूल प्रवृत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि यह एक अर्जित प्रक्रिया (Learnt process) है।

परिभाषाएं

- "एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति के क्रिया कलाप और शरीर संचालन की नकल मात्र को अनुकरण कहते हैं"।

  "Imitation is applicable only to the copying by one individual of the actions, the bodily movements of another."- William Mc. Dougal (1909)

- "अनुकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें किसी दूसरे व्यक्ति की समान क्रियाएं उद्दीपक का कार्य करती हैं"।

  "Imitation is a reaction for which the stimulus is the perception of another's similar reaction."

- "वह व्यवहार जिसका प्रतिरूपण किया जाता है या अन्य किसी की नकल उतारना अनुकरण है"।

  "Behavior that is modeled upon or copies of this imitation"

इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी के व्यवहार को स्वेच्छा अपना लेना या वैसा ही व्यवहार करने लगना अनुकरण है। बच्चे अपने जीवन में अनुकरण द्वारा ही विभिन्न व्यवहारों को सीखते हैं। किशोर-किशोरियाँ तथा वयस्क लोगों में भी अनुकरण देखने को मिलता है। पहले इसे एक तरह की मूलप्रवृत्ति माना जाता है। आजकल इसे अर्जित व्यवहार माना जाता है। इसके बारे में निष्कर्ष निम्नवत है-

i. अनुकरण एक क्रियात्मक प्रक्रिया है।
ii. अनुकरण में किसी अन्य व्यक्ति के कार्य या व्यवहार की पुनरावृत्ति होती है।
iii. अनुकरण यंत्रवत होता है।
iv. अनुकरण व्यक्ति द्वारा प्रयास करके किया जाता है।
v. अनुकरण अधिगम की सरल तकनीक है।
vi. अनुकरण में तदात्मीकरण भी निहित हो सकता है।
vii. व्यवहार या शारीरिक क्रिया ऐसी हो जिसे अनुकरण करने वाला व्यक्ति महत्व देता हो।
viii. अनुकरण चेतन तथा अचेतन दो प्रकार से किया जाता है। जब अनुकरण जानबूझकर या चेतन ढंग से किया जाता है तो उसे नकल (Copy) कहते हैं। अनजाने में या अचेतन रूप से किया जाने वाला अनुकरण समेल निर्भरता (Matched dependent) कहलाता है।

अनुकरण के प्रकार-

i. **सहानुभूति पूर्ण अनुकरण (Sympathetic imitation)-** किसी के दुख, पीड़ा या कष्ट को देखकर व्यक्ति वैसी ही अनुभूति करके उसके जैसा व्यवहार करता है। जैसे किसी को रोता देखकर स्वयं भी रोने लगना।

ii. **विचार चालक अनुकरण (Ideo-motor imitation)-** किसी के व्यहार या कार्य को देखकर कोई अन्य व्यक्ति आन्तरिक रूप से प्रेरित होकर स्वतः वैसा व्यवहार करने लगता है। जैसे- गीत या नृत्य से प्रभावित होकर सिर हिलाना या पैर का थिरकना। इसे स्वाभाविक (Spontaneous) अनुकरण भी कहते हैं।

iii. **आरम्भिक अनुकरण (Rudimentary Imitation)-** ऐसे अनुकरण छोटे बच्चों में प्रायः दिखाई पड़ते हैं। जैसे-किसी के हँसने पर बच्चों का हँसना, जीभ निकालने पर जीभ निकालना या मुँह चिढ़ाने पर मुँह चिढ़ाना आदि इसके उदाहरण हैं। इसे निरर्थक अनुकरण भी कहते हैं।

iv. **तार्किक अनुकरण (RationalImitation) -** इसमें अनुकरणकर्ता किसी व्यक्ति के व्यवहार का सोच समझ कर पुनरोत्पादन करता है। जैसे-किसी प्रशिक्षु द्वारा अपने प्रशिक्षक के व्यवहार का अनुकरण करना।

v. **ऐच्छिक अनुकरण (VoluntaryImitation)-** यदि कोई बालक या व्यक्ति किसी अन्य का अनुकरण अपनी इच्छा से करता है तो उसे ऐच्छिक या उद्देश्यपूर्ण (Deliberate) अनुकरण कहते हैं। इसे चेतन अनुकरण भी कहते हैं।

vi. **अभिनयात्मक अनुकरण (Dramatic Imitation)-** किसी के व्यवहार का अभिनय करना अभिनयात्मक अनुकरण कहा Deliberateहै। जैसे-बच्चों द्वारा पिता का चश्मा पहनना या राजा का व्यवहार आदि करना।

अनुकरण के नियम (Laws of Imitation)

टार्डे (1903) ने अनुकरण संम्बन्धी तीन नियमों का प्रतिपादन किया है:

i. अनुकरण ऊपर से नीचे की ओर चलता है:- समाज के धनी या प्रतिष्ठित वर्ग या वरिष्ठों द्वारा जो कार्य या व्यवहार पहले किया जाता है, उसका अनुकरण बाद में निचले स्तर के लोगों या बच्चों द्वारा किया जाने लगता है।

ii. अनुकरण अन्दर से बाहर की ओर चलता है:- अनुकरण पहले अपने परिवार तथा पड़ोस के लोगों का किया जाता है। इसके बाद ही बाहर के समूहों के लोगों का अनुकरण किया जाता है।

iii. अनुकरण ज्यामितीय क्रम में चलता है:-इसका आशय यह है कि अनुकरण की गति काफी तीव्र होती है। अर्थात् अनुकरण की गति प्रारम्भ में जितनी होती है बाद में उससे ज्यादा और आगे चलकर और भी आधिक हो जाती है।

अनुकरण के सिद्धान्त (Theories of Imitation)

i. **थार्नडाइक का सिद्धान्त (Thorndike's Theory) -** व्यक्ति प्रायः उन्हीं कार्यों या व्यवहारों का अनुकरण करना चाहता है जिनके द्वारा उसकी किसी आवश्यकता की पूर्ति होती है। अनुमोदित व्यवहारों का अनुकरण अधिक एवं तिरस्कृत व्यवहारों का अनुकरण कम होता है। प्रयत्न एवं त्रुटि (Trial & Error) सिद्धान्त के आधार पर करते हैं। अतः यदि बालक या व्यक्ति सीखने के लिए तत्पर एवं समुचित

अभ्यास करता है तो अनुकरण सरल हो जाता है। यदि अनुकरण प्रभाव सुखद होगा तो उस व्यवहार की पुनरावृत्ति होगी। यदि परिणाम कष्टदायक होगा तो उसका दमन कर दिया जायेगा।

ii. **मिलर एवं डोलार्ड का सिद्धान्त (Miller and Dollard's theory)-** मिलर एवं डोलार्ड (1941) के अनुसार अनुकरणमूलक व्यवहार पर पुरस्कार तथा दण्ड का प्रभाव पड़ता है। पुरस्कृत व्यवहार का अनुकरण शीघ्रता से किया जाता है। दण्डित व्यवहार का अनुकरण नहीं किया जाता है। बच्चों द्वारा किए गये अनुकरण व्यवहार पुरस्कृत करने पर अनुकरण तीव्र गति से होने लगता है।

iii. **बन्दूरा का सिद्धान्त (Bandura's Theory)-** बन्दूरा (1963, 1966, 1969) के अनुसार बच्चे ऐसे व्यक्तियों या प्रतिमानों (Models) के व्यवहारों का अनुकरण करते हैं जो व्यवहार करते समय पुरस्कृत किए जाते हैं। जिन व्यवहारों के लिए वे दण्डित किए जाते हैं उन व्यवहारों का बच्चों द्वारा अनुकरण नहीं किया जाता है। बन्दूरा ने प्रयोग द्वारा यह बताया कि आक्रमकता का व्यवहार करने पर प्रतिमान (Model) को पुरस्कृत किया गया तब बच्चों ने भी आक्रामकता का अनुकरण किया। दण्डित करने पर आक्रमकता व्यवहार का अनुकरण नहीं किया गया।

अनुकरण का महत्व

i. **सामाजिक अधिगम एवं समायोजन (Social Learning and Adjustment)-** सामाजिक अधिगम के लिए बच्चे अपने मित्रों तथा वरिष्ठों के कार्यों का अनुकरण करते हैं।

ii. **व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality)** -अनुकरण के अध्ययन से व्यक्ति साहस एवं धैर्य की भावना विकसित करता है और सामाजिक मूल्यों एवं आदर्शों को ग्रहण करके व्यक्तित्व को गत्यात्मक संगठन (Dynamic organization) का रूप प्रदान करता है।

iii. **आवश्यकता संतुष्टि (Need satisfaction) -**व्यक्ति अपनी जिन आवश्यकताओं की पूर्ति अपने स्वयं के प्रयासों से नहीं कर पाता है, उनकी अपूर्ति अन्य लोगों के व्यवहारों का अनुकरण करके करता है। अतः व्यक्ति के जीवन में अनुकरण का प्रभाव तथा महत्व का काफी व्यापक है।

iv. **सामाजिक प्रगति (Social Progress)-**बच्चे, किशोर या प्रौढ़ व्यक्ति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति के पथ पर अग्रणी लोगों के कार्यक्रमों का अनुकरण करके स्वयं को भी प्रगति के पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरणा प्राप्त करते हैं। यह प्रेरणा एक समूह या राष्ट्र दूसरे समूह या राष्ट्र से भी ग्रहण करते हैं।

v. **अनुरूपता (Conformity)-**बालक अपने परिवार समूह या समाज के रीति-रिवाजों, नियमों तथा आदर्शों का अनुकरण करते हैं। इससे उनके व्यवहार में एक-रूपता आती है। सामजिक मानकों (Norms) के प्रति सम्मान बढ़ता है।

1.7.2 सुझाव या संसूचन (Suggestion)

सुझाव एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति अपना विचार या राय इस उम्मीद से दूसरे व्यक्ति के सामने रखता है कि दूसरा व्यक्ति उसे स्वीकार कर लें। इससे स्पष्ट है कि सुझाव में दो पक्ष होते हैं। एक सुझाव देने वाला एक दूसरा स्वीकार करने वाला। सुझाव में दोनों पक्ष क्रियाशील होते हैं।

उदाहरण:- माता-पिता अपने बच्चों को समय पर खाने, पढ़ने, सोने एवं स्कूल जाने का सुझाव देते हैं। शिक्षक अपने छात्रों को गृहकार्य करके लाने भी राय देते हैं। पति अपने पत्नी को सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध बनाएं रखने का सुझाव देता है।

परिभाषाएँ

- **William Mc. Dougall (1909) के अनुसार** "सुझाव, संचार या संप्रेषण की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके फलस्वरूप एक व्यक्ति द्वारा दी गई राय उपर्युक्त तरकीब के आधार के बिना ही दूसरे के द्वारा विश्वास के साथ स्वीकार की जाती है"।
- **Kimbal Young (1957)** "सुझाव शब्दों, चित्रों या ऐसे ही किसी अन्य माध्यम द्वारा किये गये प्रतीक संचार का एक ऐसा स्वरूप है जिसका उद्देश्य प्रतीक को स्वीकार करने के लिए प्रेरित करना होता है"। Kimbal Young (1957)
- सुझाव एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति में आलोचना करने की मानसिक क्षमता को कम कर दिया जाता है और व्यक्ति दूसरे स्रोत से मिलने वाली सूचनाओं को बिना संदेह, तर्क तथा आलोचना के ही स्वीकार कर लेता है।

उपर्युक्त परिभाषा के संयुक्त विश्लेषण करने पर हमें सुझाव प्रक्रिया के सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य प्राप्त होते हैं-

i. सुझाव के दो महत्वपूर्ण पक्ष होते हैं। एक सुझाव देने वाला दूसरा सुझाव स्वीकार करने वाला।
ii. दोनों ही पक्ष सक्रिय एवं सचेत होते हैं।
iii. सुझाव देने वाला व्यक्ति स्वीकार करने वाले व्यक्ति की तार्किक योग्यता एवं आलोचना करने की क्षमता को कमजोर कर देता है।
iv. सुझाव की प्रक्रिया में स्वीकार करने वाला व्यक्ति बिना तर्क, शंका तथा आलोचना के ही दिए गये विचारों को स्वीकार कर लेता है।
v. सुझाव प्रायः किसी व्यक्ति के कार्य, घटना, तथा विचार से सम्बन्धित होता है।
vi. सुझाव एक संज्ञानात्मक मानसिक प्रक्रिया है।
vii. संसूचन/सुझाव का एक निश्चित उद्देश्य होता है।
viii. संसूचन सुझाव एक निष्क्रिय प्रक्रिया है। क्योंकि तार्किक शक्ति का उपयोग नहीं किया जाता हैं।
ix. संसूचन की सफलता पर व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ता है ।क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति संसूचनों को समान रूप से स्वीकार नहीं करता है।

सुझाव का वर्गीकरण (Classification of suggestion)-

सुझाव/संसूचन को निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता हैं-

i. **भावात्मक संसूचन (Ide motor suggestion)-**इसकी उत्पत्ति मानसिक भावनाओं से होती है। व्यक्ति के मन में कोई भाव आते ही यदि क्रिया भी प्रारम्भ हो जाय तो इसे भाव चालक संसूचन कहते

हैं। यथा-रेडियो द्वारा संगीत सुनकर सिर को हिलाना भावचालक संसूचन है। यह क्रिया अचेतन स्तर पर भी होती है।

ii. **आत्म संसूचन (Auto Suggestion)-**यदि कोई व्यक्ति आपने आप को स्वयं संसूचन देकर उसके अनुरूप कार्य करने लगता है तो उसे आत्म संसूचन कहते हैं। इसमे संसूचन देने वाला तथा सूचना ग्रहण करने वाला एक ही व्यक्ति होता है। जैस- किसी छात्र द्वारा स्वयं यह सोचना कि अध्ययन करना आवश्यक है अन्यथा परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो पाऊँगा।

iii. **प्रतिष्ठा संसूचन (Prestige suggestion)-**यदि कोई बात कहते समय उसके साथ प्रतिष्ठित व्यक्तियों का नाम जोड़ दिया जाय तो उसका प्रभाव बढ़ जाता है जैसे-गांधी जी ने कहा था-गरीबों की सेवा नारायण की सेवा है। शेवर (1977) के अनुसार प्रतिष्ठा संसूचन अनुनयात्मक सम्प्रेषण की वह विधि है जिसमें किसी वस्तु के जाने-माने एवं महत्वपूर्ण व्यक्तियों द्वारा अनुकूल बातें कही जाती हैं। वोट के लिए बड़े नेताओं का नाम लेना, सामानों की बिक्री बढ़ाने के लिए फिल्मी कलाकारों के नाम का प्रयोग करना आदि प्रतिष्ठा संसूचन के उदाहरण हैं।

iv. **समूह संसूचन (Mass Suggestion)-**यदि किसी व्यक्ति को सामूहिक सुझाव दिया जाय तो वह संभवतः शीघ्रता से सुझाव को मान लेगा। ऐसी परिस्थिति में वह समझ सकता है कि जो बात इतने लोग कह रहे हैं वह अवश्य ठीक होगी। प्रतिष्ठा संसूचन की तुलना में समूह संसूचन अधिक प्रभावशाली होता है। यथा-भीड़ एवं आन्दोलन में व्यक्ति अपने विवेक का उपयोग न करके तत्कालीन परिस्थिति के अनुरूप व्यवहार करने लगता है।

v. **विपरीत संसूचन (Contra Suggestion)-**इसमें अभीष्ट व्यवहार या कार्य कराने के लिए सीधा सुझाव न देकर विपरीत ढंग से सुझाव दिया जाता है। यदि कोई बालक दूध पी रहा हो तो यह कहिए कि तुम दूध पियो मत नहीं तो अर्पिता पी जायेगी तो वह बालक तुरन्त दूध पी जायेगा।

vi. प्रत्यक्ष संसूचन (Direct Suggestion)-प्रत्यक्ष संसूचन देते समय अभीष्ट वस्तु के बारे मे संसूचन ग्रहणकर्ता के समक्ष जो भी बात कहनी है वह साथ-साथ कही जाती है। यथा- आप किसी कपड़े की दुकान पर जाइए। व्यापारी आपको नमस्कार करेगा और आपको एक से एक माडल के कपड़े दिखाना शुरू करता है और सभी कपड़ों की जमकर तारीफ भी करता है। यह प्रत्यक्ष संसूचन है।

vii. **अप्रत्यक्ष संसूचन (Indirect Suggestion)-**अप्रत्यक्ष संसूचन देते समय अभीष्ट लक्ष्य को तुरन्त सामने नहीं लाया जाता है बल्कि उसका बिना नाम लिए लंबी चौड़ी भूमिका बनायी जाती है तथा तारीफ की जाती है। यथा-बाजार में डालडा वनस्पति की कमी हो जाने पर जाइए तो दुकानदार यह कहता मिलेगा कि साहब आप बड़ी-बड़ी कम्पनियों का चक्कर छोड़िये। देखिए मेरे पास एक नया माल आया है। मेरा निवेदन है कि एक बार इसे आजमाइए और गारंटी है कि दुबारा इसी की माँग करेंगे। ग्राहक उसकी बात से प्रभावित होकर नये सामान की खरीद कर लेगा।

viii. **सकारात्मक संसूचन (Positive Suggestion)-**यदि सुझाव स्वीकारात्मक भाषा में व्यक्त किए जाते हैं तो उन्हें सकारात्मक संसूचन कहते हैं। यथा- किसी छात्र से यह कहना कि अधिक परिश्रम करो ताकि अच्छे अंक से उत्तीर्ण हो जाओ।

ix. **निषेधात्मक संसूचन (Negative suggestion)-**यदि किसी सुझाव में किसी वस्तु का परित्याग करने या किसी कार्य को न करने का निर्देश दिया जाता है। तो उसे निषेधात्मक संसूचन कहते हैं। यथा-सिगरेट मत पिओ। इससे कैन्सर हो सकता है या सिगरेट पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

सामाजिक जीवन में सुझाव का महत्व (Role of Suggestion in social Science)

संसूचन के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार को उचित दिशा प्रदान की जा सकती है। इसके द्वारा सामाजिक संरचना एवं सामाजिक प्रक्रियाओं को बल प्रदान किया जा सकता है।

i. **सुझाव से सामाजिक एकता होती है-**सामाजिक सुझाव में व्यक्ति अधिकतर व्यक्तियों के व्यवहारों के अनुकूल अपना व्यवहार करता है। इसका परिणाम यह होता है कि जब व्यक्ति अन्य लोगों के करीब आता है तो अपने आप ही एक तरह की सामाजिक एकता या समानता आती है। सामाजिक सुझाव हमें सामाजिक समूह से प्राप्त होते हैं जो व्यक्तियों के व्यवहारों को समाज की विशेष प्रथा, परम्परा, धर्म, आदर्श के अनुरूप बनाता है।

ii. **सामाजीकरण एवं संसूचन (Socialization and Suggestion)-**व्यक्ति के समाजीकरण में संसूचन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वास्तव में संसूचन द्वारा छोटे-छोटे बच्चों में वांछित विचारों एवं गुणों का बीजारोपण किया जा सकता है। उनके परिवार में गलत संसूचन या सुझाव प्राप्त होने के कारण बालकों का व्यक्तित्व दोषपूर्ण हो जाता है। उनमें अपराधी प्रवृत्तियां विकसित हो जाती है।

iii. **सामाजिक नियंत्रण एवं परिवर्तन (Social Control and Social Change)-**संसूचन द्वारा व्यक्ति के अवांछित व्यवहार को समाप्त या नियमित किया जा सकता है और सामाजिक परिवर्तन को उचित बल प्रदान किया जा सकता है। यदि संसूचन किसी विश्वसनीय एवं प्रतिष्ठित वयक्ति द्वारा दिया जाय तो सामाजिक नियंत्रण एवं परिवर्तन को और भी सरल बनाया जा सकता है। यही कारण है कि समाज सुधारक बड़े-बड़े साधुसंत, नेतागण आदि अपने सुझाव द्वारा हमेशा लोगों के व्यवहारों को एक खास दिशा में नियमित करते हैं।

iv. **शैक्षिक एवं व्यावसायिक उपयोग (Educational and Vocational Use)-**छोटे बच्चों को समुचित संसूचन प्रदान करके उनमें अध्ययन के प्रति रूचि पैदा की जा सकती है। यदि शैक्षिक वातावरण यथोचित है तो बच्चे उससे प्रभावित होते हैं और उनमें शैक्षिक गुणों का विकास होता है। शिक्षकों द्वारा कही गई बातों का प्रभाव छात्रों पर अधिक पड़ता है। अतः शिक्षकों को उनके लिए क्रोधपूर्ण तथा आक्रोशपूर्ण शब्द जैसे नालायक, मूर्ख, उल्लू आदि का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इससे सम्भव है कि बच्चे अपने आप को ऐसा ही समझने लगें।

v. **राष्ट्रीय संकट में उपयोग (Use in National Crisis)-**राष्ट्रीय संकट के समय नागरिको में घबराहट हाने लगती है। संसूचन के द्वारा इनको दूर किया जा सकता है। बच्चों के मनोबल को उठाया जा सकता है।

vi. **सामाजिक प्रगतिएव संसूचन (Social Progress and Suggestion)-**सामाजिक प्रगति को प्रतिष्ठा संसूचन द्वारा और भी अधिक गति प्रदान की जा सकती है। जैसे-नेहरू जी ने आजादी प्राप्त होने

पर देश को प्रगति की ओर ले जाने में 'आराम हराम है'का नारा देकर देशवासियों को राष्ट्र की पुर्नसंरचना एवं प्रगति के लिए प्रेरित किया। जिसके फलस्वरूप भारत ने अनेक क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की।

vii. **वाणिज्य एवं व्यापारिक उपयोग (Commercial & Trade Uses)**-वाणिज्य एवं व्यापार में सफलता बहुत हद तक विज्ञापनों पर निर्भर करती है। विज्ञापनों के सहारे ही बहुत तरह के नये-नये सुझाव आम जनता को दिए जाते हैं।

चूंकि इस तरह का सुझाव सीधे न देकर किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति या लोकप्रिय अभिनेता या अभिनेत्री द्वारा दिलवाया जाता है। फलतः उसका प्रभाव जनता पर अधिक पड़ता है तथा जनता उसे तत्परता से स्वीकार कर लेती है। जिसका स्पष्ट परिणाम यह होता है कि उस वस्तु की माँग बढ़ जाती है।

1.7.3 सहानुभूति (Sympathy) अर्थ एवं स्वरूप

जब हम दूसरे के दुख से स्वयं दुखी होकर उसके प्रति दया का भाव अभिव्यक्त करते हैं तो इसे साधारणतः सहानुभूति की संज्ञा दी जाती है। व्यापक अर्थ में सहानुभूति से मतलब समान भावना के संचार या संप्रेषण से होता है। यह समान भाव सिर्फ दया या दुख का ही नहीं होता है बल्कि क्रोध, द्वेष, घृणा का भी हो सकता है। उदाहरण के लिए हम अपने मित्र के दुश्मन के प्रति क्रोध, घृणा तथा द्वेष व्यक्त कर मित्र के प्रति सहानुभूति प्रकट कर सकते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि सहानुभूति प्रकट करने वाले व्यक्ति में वैसा ही भाव या संवेग होना चाहिए जो उस व्यक्ति में होता है जिसके प्रति सहानुभूति प्रकट की जा रही है। सहानुभूति का गुण जानवरों में भी अधिक देखने को मिलता है । जैसे- एक बन्दर को संकट मे फंसा देखकर अन्य सारे बन्दर इकट्ठा हो जाते हैं। एक कौवे के बीमार हो जाने पर बहुत सारे कौवे इकट्ठा हो जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वे सहानुभूति में एकत्र होते हैं।

परिभाषाएं-

- ***William Mc. Dougal 1908*** "साधारण अर्थों में सहानुभूति एक प्रकार की कोमलता है जो उस व्यक्ति के प्रति होती हैं जिसके साथ सहानुभूति प्रकट की जाती है। दूसरों के दुख में दुखी होना या दूसरे किसी व्यक्ति या प्राणी में एक विशेष भावना या संवेग का देखकर अपने मे भी उसी तरह की भावना या संवेग का अनुभव करना ही सहानुभूति है।''
- -जेम्स ड्रेवर (1983) "दूसरों के भावों एवं संवेगों के स्वाभाविक अभिव्यक्तिपूर्ण चिन्हों को देखकर उसी प्रकार के भावों एवं संवेगों के अनुभव करने की प्रवृत्ति को सहानुभूति कहते हैं"।
- ***Evan (1978)*** "दूसरों के संवेगों की अभिव्यक्ति के प्रति अनुक्रिया करने की क्षमता को सहानुभूति कहा जाता है"।

इन परिभाषाओं को विश्लेषण करने पर हमें सहानुभूति के स्वरूप के बारे में निम्नांकित तथ्य प्राप्त होते हैं-

i. सहानुभूति में दो पक्ष होते हैं-एक पक्ष सहानुभूति दिखाने वाला तथा दूसरा पक्ष सहानुभूति प्राप्त करने वाला होता है।
ii. सहानुभूति में व्यक्ति के संवेगों एवं भाव की प्रधानता उसकी क्रियाओं एवं व्यवहारों से अधिक होती है।

iii. सहानुभूति में सहानुभूति प्रकट करने वाले व्यक्ति में ठीक उसी तरह का संवेग या भाव उत्पन्न होता है जिस तरह का भाव या संवेग सहानुभूति प्राप्त करने वाला व्यक्ति दिखलाता है।

सहानुभूति के प्रकार (Types of Sympathy)

i. **सक्रिय सहानुभूति (Active Sympathy)**-यदि किसी की दशा देखकर उसकी सहायता आगे बढ़ कर की जाती है या उसके साथ सहयोग किया जाता है तो उसे सक्रिय सहानुभूति कहते हैं। जैसे-किसी को रोता हुआ देखकर उसे चुप कराना, दुर्घटना में घायल व्यक्ति के कष्टों का अनुभव करते हुए कोई व्यक्ति अस्पताल तक ले जा कर उसकी चिकित्सा में मदद करना, किसी भिखारी की दयनीय दशा को देखकर एवं उसके शारीरिक कष्टों का अनुभव करते हुए उसे खाने के लिए भोजन तथा पहनने के लिए वस्त्र देना।

ii. **निष्क्रिय सहानुभूति (Passive Sympathy)**-यदि किसी के साथ सहानुभूति अनुभव की जाय परन्तु कुछ किया न जाय तो इसे निष्क्रिय सहानुभूति कहते हैं। यह भावना प्रधान होती है। तात्पर्य यह है कि निष्क्रिय सहानुभूति भावना प्रधान, मौखिक तथा क्रिया रहित होती है। जैसे-कोई व्यक्ति भिखारी की दयनीय दशा देखकर कहता है कि उसे ऐसी दशा में कितनी तकलीफ होती होगी, परन्तु उसकी तकलीफ दूर करने का कोई उपाय नहीं करता है।

iii. **व्यक्तिगत सहानुभूति (Personal Sympathy)**-किसी व्यक्ति या प्राणी विशेष को कष्ट में देख कर उसके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित की जाती है तो उसे व्यक्तिगत सहानुभूति कहते हैं। जैसे-किसी कराह रहे व्यक्ति के प्रति हमदर्दी प्रकट करना।

iv. **सामूहिक सहानुभूति (Collective Sympathy)**-लोगों में किसी-किसी समूह को कष्ट में देखकर उनके प्रति सहानुभूति की अनुभूति सामूहिक सहानुभूति कही जाती है। जैसे-शरणार्थियों के शिविर को देखकर पीड़ा अनुभव करना।

सहानुभूति का महत्वः-

i. **सामाजिकता (Sociability)**-सहानुभूति की प्रवृत्ति व्यक्ति में सामाजिकता, मिलनसारिता, मैत्रीभाव, सामूहिकता, एकता तथा संगठन की भावना पैदा करती है। (मैंक्डूगल, 1914).

ii. **मानवता (Humanity)**-सहानुभूति की भावना से व्यक्ति में मानवता बढ़ती है और वह दूसरे की सहायता तथा सेवा को महत्व देने लगता है। वह किसी को कष्ट पहुँचाना अनुचित मानने लगता है। उसमें परिवार की भावना बढ़ती है। यही प्रवृत्ति लोगों को गरीब, यतीमों, विकलांगों की सेवा के लिए प्रेरित करती है।

iii. **आक्रामकता में कमी (Reduction in Aggression)**-सहानुभूति की भावना व्यक्ति में हिंसा, आक्रामकता तथा शोषण की प्रवृत्ति को नियंत्रित करती है। सहानुभूतिपूर्ण भावना से प्रभावित व्यक्ति दूसरों के दुख से उसी तरह दुख अनुभव करता है जैसे कि वह स्वयं के दुख से कष्टित अनुभव करता है।

iv. **भेदभाव में कमी (Reduction in Discrimination)**-सहानुभूति सामाजिक एवं प्रजातीय भेदभाव कम करने में सहायक है। जिनमें यह प्रवृत्ति प्रवल रूप में पाई जाती है वे जाति धर्म या भाषा के आधार पर लोगों में भेदभाव नहीं करते हैं।

1.10 अभ्यास प्रश्न

1. समाज मनोविज्ञान का वैज्ञानिक इतिहास_____से प्रारम्भ होता है।
2. उचित तर्क के अभाव में किसी बात को मान लेना _____कहा जाता है।
3. सामाजिक परिस्थिति में किए गये मानव व्यवहार को न्यूकाम्ब (1962) ने _____की संज्ञा दी है।
4. अनुकरण_____दोनों प्रकार से किया जाता है।
5. सुझाव के _____होते हैं।
6. सहानुभूति में व्यक्ति के_____की प्रधानता रहती है।

1.8 सारांश

उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक तक समाज मनोविज्ञान का स्वरूप दार्शनिक था। समाज मनोविज्ञान का वैज्ञानिक इतिहास 1908 से प्रारम्भ होता है। समाज मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानव व्यवहार का ही अध्ययन किया जाता है। मानव व्यवहार की व्यवस्था उसके स्वयं के व्यक्तित्व, सामाजिक संबध तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर निर्भर करती है। अनुकरण सुझाव तथा सहानुभूति नियमों के आधार पर सामाजिक अन्तः क्रिया होती है। सामाजिक व्यवहार इन्हीं अन्तःक्रियाओं का परिणाम होता है।जब कोई बच्चा या व्यक्ति दूसरों के व्यवहार को देख कर वैसा ही व्यवहार करता है तो इस प्रक्रिया को अनुकरण कहते हैं। अनुकरण चेतन भी हो सकता है अचेतन भी हो सकता है। अनुकरण ऊपर से नीचे, अन्दर से बाहर एवं ज्यामितीय क्रम में चलता है। बच्चे या व्यक्ति किसी व्यवहार का अनुकरण "प्रयत्न एवं त्रुटि" (Trial & Error) के आधार पर करते हैं। पुरस्कृत व्यवहार का अनुकरण किया जाता है। दण्डित व्यवहार का अनुकरण नहीं किया जाता है। संसूचन (सुझाव) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति अपना विचार या राय इस उम्मीद से दूसरे व्यक्ति के सामने रखता है कि दूसरा व्यक्ति उसे स्वीकार कर ले। इसकी उत्पत्ति मानसिक भावना से होती है। संसूचन द्वारा व्यक्ति के व्यवहारों को सही दिशा दी जाती है। सहानुभूति से मतलब समान भावना के संचार या संप्रेषण से होता है। यह समान भाव सिर्फ दया या दुख का ही नहीं हो सकता है बल्कि क्रोध, घृणा, द्वेष का भी हो सकता है। सहानुभूति से सामाजिकता, एकता, मिलनसारिता, मानवता आती है तथा पक्षपात एवं आक्रामकता में कमी आती है।

1.9 शब्दावली

1. **संसूचन-** सुझाव
2. **अनुकरण-** नकल
3. **आत्म -** स्वयं
4. **अभिनात्मक-** नाटकीय
5. **समेल निर्भरता-** अनजाने में किया गया अनुकरण
6. **नकल -** जानते हुए किया गया अनुकरण

7. **अर्जन -** प्राप्ति
8. **सामाजिक परीस्थिति -** ऐसी परिस्थिति जिसमें दो से अधिक व्यक्तियों या समूहों में अन्तःक्रिया होती है।

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. वर्ष 1908
2. संसूचन या सुझाव
3. अन्तःक्रिया
4. चेतन तथा अचेतन
5. दो पक्ष
6. संवेग एवं भाव

1.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह आर0एन0 (2007-208) आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा 7.
2. सिंह आर0एन0-(2005) आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. सिंह ए0के0 (2010)समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसीदास दिल्ली-1.
4. सिंह0ए0के0(2002) उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, मोती लाल बनारसीदास दिल्ली-1.
5. श्रीवास्तव, डी0एन0 एवं अन्य (2000-2001) आधुनिक समाज मनोविज्ञान एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
6. श्रीवास्तव डी0एन0 (दसवाँ संस्करण) सामाजिक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन आगरा।
7. त्रिपाठी आर0बी0 एवं सिंह, आर0एन0 (2002) व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, गंगासरन एवं एण्ड ग्रैन्ड सन्स, बांसफाटक वाराणसी।
8. अग्रवाल विमल (2010-11): मनोविज्ञान, एस0 वी0 पी0 डी0 पब्लिकेशन आगरा।
9. राबर्ट ए0 बैरन एण्ड डोन वाइरने (9वाँ संस्करण)सोसल साइकॉलोजी, पीयर्सन एजूकेशन (सिंगापुर) प्रा0लि0 इण्डिया ब्रांच दिल्ली।
10. Baron & Byrne and Branscombe, 2006 social psychology 1987 p-14
11. Myers, Social Psychology 1988 P.3

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अनुकरण का क्या आशय है ? इसके प्रकार तथा महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. संसूचन (सुझाव) से क्या तात्पर्य है ? इसके प्रकार तथा महत्व का वर्णन कीजिए।
3. सहानुभूति से आप क्या समझते हैं ? इसके प्रकार तथा सामाजिक जीवन के महत्व पर प्रकाश डालिए।
4. समाज मनोविज्ञान के स्वरूप एवं कार्यक्षेत्र का वर्णन कीजिए।
5. समाज मनोविज्ञान को परिभाषित करते हुए उसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

6. टिप्पणियां लिखिए:
   i. अनुकरण के सिद्धान्त
   ii. समाज मनोविज्ञान की उपयोगिता
   iii. सुझाव वर्गीकरण

इकाई 2. व्याहारिक विज्ञान के रूप में समाज मनोविज्ञान (Social Psychology as Applied Sciences)

इकाई संरचना-

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 समाज मनोविज्ञान की सैद्धान्तिक नींव
  2.3.1 अभिप्रेरणात्मक सिद्धान्त
  2.3.2 अधिगम सिद्धान्त
  2.3.3 संज्ञानात्मक सिद्धान्त
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 संदर्भग्रन्थ सूची
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

समाज मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार तथा अनुभूतियों का सामाजिक परिस्थिति में अध्ययन करने का विज्ञान है। इसकी प्रवृत्ति वैज्ञानिक है। समाज मनोविज्ञान प्रयुक्त विज्ञान के रूप में शोध/अध्ययन एवं अभ्यास करता है। शोधों एवं अध्ययनों का उद्देश्य मानव सामाजिक व्यवहारों को समझना, समस्याओं का पता लगाना तथा इनका समुचित सुझाव ढूँढ़ना है। गरीबी, जनसंख्या वृद्धि, अन्तःसमूह संघर्ष, अपराध, अर्थ का असमान वितरण, पूर्वाग्रह तथा विभेदन, संबंध विच्छेद, आक्रामकता, वेश्यावृत्ति आदि प्रमुख समस्यायें हैं जिनका मनोवैज्ञानिक अध्ययन/शोध कर समाधान किया जा सकता है। इस प्रकार के अध्ययन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समाज मनोविज्ञान के सिद्वान्तों से संबंधित होते हैं। इससे सामान्य नियम बनाने, किसी घटना की भविष्यवाणी करने तथा उसे नियंत्रित करने में सहायता मिलती है। अभिप्रेरणा सिद्धान्त, अधिगम सिद्धान्त एवं संज्ञानात्मक सिद्धान्त बहुत ही उपयोगी सिद्धान्त हैं। अभिप्रेरणा सिद्धान्त मानव व्यवहार को सक्रिय करता है, निर्देशित करता है तथा किसी लक्ष्य की ओर बनाए रखता है। सामाजिक व्यवहार सीखे हुए व्यवहार होते हैं। संज्ञानात्मक सिद्धान्त की मान्यता यह है कि व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार वातावरण के संज्ञान के साथ -साथ आन्तरिक मानसिक प्रक्रियाओं पर भी निर्भर करते हैं। इस प्रकार निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार समाज मनोविज्ञान के वैज्ञानिक स्वरूप, प्रयुक्त मनोवैज्ञानिक स्वरूप एवं कतिपय सिद्धान्तों की व्याख्या विस्तृत रूप से की गई है। आशा है प्रस्तुत पाठ्य सामग्री स्व अध्ययन के लिए काफी उपयोगी होगी।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चातआप-

1. समाज मनोविज्ञान की प्रयुक्त वैज्ञानिक स्वरूप को समझ सकें।
2. समाज मनोविज्ञान की सैद्धान्तिक नींव/आकार को जान सकें।
3. अभिप्रेणात्मक सिद्धान्तों के विषय में अवगत हो सकें।
4. अधिगम सिद्धान्त एवं संज्ञानात्मक सिद्धान्त की भूमिका पर प्रकाश डाल सकें।
5. मानव व्यवहार को उचित दिशा प्रदान करने के लिए चर्चित विषय वस्तु एवं नियमों का समुचित उपयोग कर सकें।

समाज मनोविज्ञान की वैज्ञानिक प्रकृति

"समाज मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार तथा अनुभूतियों का सामाजिक परिस्थिति में अध्ययन करने का विज्ञान है"।समाज मनोविज्ञान की इस सामान्य परिभाषा का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि समाज मनोविज्ञान की प्रकृति वैज्ञानिक है। समाज मनोविज्ञान की समस्याओं के अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धतियों का ही उपयोग किया जाता है, विशेषकर आज प्रयोगात्मक विधि को विशेष महत्व दिया जा रहा है। वैज्ञानिक पद्धति से प्राप्त परिणाम भी वैज्ञानिक होते हैं। समाज मनोविज्ञान की अधिकांश समस्याओं के अध्ययन में वैज्ञानिक अध्ययन की तरह प्रमाणिकता, वस्तुनिष्ठता, भविष्यवाणी की योग्यता, सार्वभौमिकता जैसे गुणों के साथ-साथ अध्ययनकर्ता का दृष्टिकोण भी वैज्ञानिक होता है।

समाज मनोविज्ञान का "प्रयुक्त वैज्ञानिक" स्वरूप

समाज मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक प्रमुख 'प्रयुक्त शाखा' है। इसे प्रयुक्त समाज मनोविज्ञान भी कहा जा सकता है। समाज मनोविज्ञान अथवा प्रयुक्त समाज मनोविज्ञान का स्वरूप ''प्रयुक्त विज्ञान'' का है। समाज मनोविज्ञान, प्रयुक्त विज्ञान के रूप में वास्तविक परिस्थिति में सामाजिक मनोवैज्ञानिक शोध एवं अध्ययन/अभ्यास करता है। इन शोधों/अभ्यासों का उद्देश्य मानव सामाजिक व्यवहारों को समझना, समस्याओं का पता लगाना तथा इन समस्याओं का समुचित समाधान, समस्याओं का पता लगाना तथा इन समस्याओं का समुचित समाधान प्रदान करता हैं। गरीबी, जनसंख्या वृद्धि, अन्तःसमूह संघर्ष, अपराध, अर्थ का असमान वितरण, पूर्वाग्रह तथा विभेदन, संबध विच्छेद आक्रामकता, वेश्यावृत्ति आदि प्रमुख सामाजिक समस्यायें है। इस प्रकार समाज मनोविज्ञान के स्वरूप एवं कार्यों को निम्नवत व्यक्त कर सकते हैं।

स्वरूप ..... प्रयुक्त विज्ञान

कार्य परिस्थिति ..... वास्तविक परिस्थिति में

कार्य.....

i. सामाजिक मनोवैज्ञानिक शोध, अध्ययन एवं अभ्यास करना।
ii. अध्ययनों से समस्याओं की पहचान करना।

उद्देश्य	.....	पहचान की गई समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना।
समस्यायें	.....	सामाजिक समस्यायें जैसे- गरीबी, जनसंख्या वृद्धि, अपराध, अन्तःसमूह संघर्ष, अर्थ का असमान वितरण से उत्पन्न समस्या, पूर्वाग्रह एवं विभेदन, संबध विच्छेद, आक्रामकता, वेश्यावृत्ति आदि।

प्रयुक्त समाज मनोविज्ञान के मुख्य दो मूलाधार हैं-

i. सभी मानवीय समस्याओं में सामाजिक अन्तःक्रिया के तत्व तथा
ii. समाज में मानवीय संबंधों को उन्नत करने के लिए धीरे-धीरे जागरूकता में वृद्धि।

दोनों ही मूलाधारों के सन्दर्भ में समाज मनोविज्ञान एक प्रयुक्त विज्ञान के रूप में विकसित हो रहा है। सामाजिक समस्याओं को समझने तथा उसका समुचित समाधान ढूँढ़ने में समाज मनोविज्ञान प्रयत्नशील है। इस प्रयत्न में समाज मनोवैज्ञानिक मानव मूल्यों पर अधिक बल दे रहे हैं। सामाजिक मनोवैज्ञानिकों में कुर्ट्ज (Kurtz, 1968, 71), जानसन (Johnson, 1973) केलमन (Kelman, 1969) तथा स्मिथ (Smith, 1974) आदि प्रधान हैं। इन लोगों ने एक मत होकर इस तथ्य पर बल डाला है कि समाज मनोविज्ञान का दृष्टिकोण मानवीय एवं वैज्ञानिक दोनों ही होने चाहिए ताकि समाज मनोवैज्ञानिक उपलब्ध विवेकपूर्ण विधियों का प्रयोग कर सामाजिक समस्याओं का समाधान करने में पूर्णतः सफल हो सकें। समाज मनोविज्ञान को एक प्रयुक्त विज्ञान के रूप मे पूर्ण सफलता पाने के लिए उसके सिद्धान्त, शोध एवं अभ्यास पहलू एक दूसरे को पुनर्बलित करते हैं और समाज मनोवैज्ञानिकों के हाथ मजबूत करते हैं। इसके लिए समाज मनोवैज्ञानिकों को इन तीनों पहियों को सही पथ पर रखना होगा। इस प्रकार समाज मनोविज्ञान प्रयुक्त विज्ञान के रूप मे काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है।

2.3 समाज मनोविज्ञान की सैद्धान्तिक नींव

सिद्धान्त का उद्देश्य घटनाओं के घटित होने की और भविष्य में घटनाओं के घटित होने की व्यवस्था करना है। (मैथसन एवं उनके साथी, 1970)। सिद्धान्त तथ्यों के संबंध को स्पष्ट करता है और उनमें व्याप्त संबंधों को व्यस्थित तथा सार्थक रूप में प्रस्तुत करता है। गुड और हाट (1952), करलिंगर (1986) के अनुसार-''परस्पर संबंधित प्रत्ययों, परिभाषाओं और प्रस्थापनों (Proposition) का व्यवस्थित वह दृष्टिकोण है जिससे घटनाओं की क्रमबद्ध व्यवस्था इस आशय से की जा सके कि उसमें व्याप्त चरों के संबंध स्पष्ट हो सकें उनकी व्यवस्था की जा सके और घटनाओं के घटित होने की भविष्यवाणी की जा सके। समाज मनोविज्ञान में समाज मनोविज्ञान से संबंधित अनेक प्रकार के अनुसंधान किए जाते हैं। अनुसंधान/अध्ययन समस्याओं के समाधान के लिए किए जाते हैं। इस प्रकार के अनुसंधान प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समाज मनोविज्ञान के सिद्धान्तों से संबंधित होते हैं। कोई भी विज्ञान घटनाओं को समझने, स्पष्ट करने और व्यवस्था करने का प्रयास करता है। इससे घटना के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

घटना से सम्बन्धित चरों की सूक्ष्म जानकारी प्राप्त करने में मदद मिलती है। इन सब के आधार पर घटना के सम्बन्ध में सामान्य नियम बनाये जाते हैं तथा घटना की भविष्यवाणी की जाती है। घटना को नियंत्रित किया जा सकता है। इन सामान्य नियमों को अन्तःसंबंधित करने, क्रमबद्ध करने एवं तर्क संगत करने से जो व्यवस्थित रूप प्राप्त होता है, उसे सिद्धान्त कहते हैं। एक सिद्धान्त का उद्देश्य घटनाओं के मध्य व्याप्त संबंध को इस उद्देश्य से स्पष्ट

किया जाता है कि जिससे उसके घटित होने के आधार की व्याख्या की जा सके और उसके संबंध में भविष्यवाणी की जा सके।

सिद्धान्त के तत्व या विशेषतायें-

i. सिद्धान्त अन्तःसंबंधित प्रत्ययों और तर्क वाक्यों का एक सेट है।
ii. एक सिद्धान्त से यह स्पष्ट होता है कि घटना से संबंधित चरों के क्या-क्या प्रभाव पड़ते हैं अथवा क्या-क्या घटनाएं घटित होती हैं।
iii. एक सिद्धान्त घटना से संबंधित चरों के पारस्परिक संबंधों को स्पष्ट करता है।
iv. एक सिद्धान्त घटना से संबंधित चरों की व्यवस्थित व्यवस्था प्रस्तुत करता है।
v. एक सिद्धान्त द्वारा स्पष्ट होता है कि घटना के घटित होने को कैसे नियंत्रित किया जा सकता है।
vi. एक सिद्धान्त के आधार पर घटना के संबंध में विश्वसनीय भविष्यवाणी भी की जाती है।
vii. एक सिद्धान्त में क्रमबद्धता और तार्किकता पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं।

समाज मनोविज्ञान में सामाजिक व्यवहार की व्यवस्था के लिए अनेक प्रकार के सिद्धान्त हैं। इनमें से कुछ सिद्धान्त अधिक प्रचलित और उपयोगी हैं। उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि किसी सामाजिक शोध/अध्ययन के लिए सिद्धान्त समाज मनोविज्ञान की नींव है। इन सिद्धान्तों मे कोई भी सिद्धान्त अपने आप में पूर्ण नहीं है। समाज मनोविज्ञान के यह सभी सिद्धान्त अनेक उपागमों (approaches) से संबंधित हैं।

2.3.1 अभिप्रेरणात्मक सिद्धान्त (Motivational Theories)

- **Baron, Byrne & Kantowitz (1980)** के अनुसार मनोविज्ञान में हम लोग अभिप्रेरणा को एक काल्पनिक आन्तरिक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते हैं जो व्यवहार करने के लिए शक्ति प्रदान करता है तथा एक खास उद्देश्य की ओर व्यवहार को ले जाता है"
- **Margan, King, weisz & schopler (1986)** के अनुसार "अभिप्रेरणा से तात्पर्य एक प्रेरक तथा कर्षण बल से होता है जो खास लक्ष्य की ओर व्यवहार को निरन्तर ले जाता है"।
- **Witting & William III (1984)** के अनुसार "अभिप्रेरणा अवस्थाओं का एक ऐसा समुच्चय है जो व्यवहार को सक्रिय करता है, निर्देशित करता है तथा किसी लक्ष्य की ओर उसे बनाए रखता है"।

उपर्युक्त विचारों का विश्लेषण करने पर हम अभिप्रेरणा को संक्षिप्त रूप से लिम्नलिखित प्रकार वर्णन कर सकते हैं-

InternalState & Activities & Fixed Goal & Motivated Behavior
आन्तरिक अवस्था- क्रियाएं- निश्चित लक्ष्य- अभिप्रेरित व्यवहार

अभिप्रेरित व्यवहार उत्पन्न होने के लिए उद्देश्य की प्राप्ति तक जारी रहता है। उदाहरणः-मान लीजिए कि आपको

भूख लगी है। किसी होटल में जाते हैं। भोजन कर भूख मिटाते हैं। इसकी व्यवस्था निम्नवत है-

आन्तरिक व्यवस्था	क्रियाएं	निश्चित लक्ष्य	अभिप्रेरित व्यवहार
Need	Drive	Incentive	Motivational Behavior
भूख	अंतर्नोद होटल ढूंढना भोजन के बारे में पूछताछ करना	भोजन की प्राप्ति	क्रियाशीलता की अवस्था तब तक पाई जाती है जब तक भोजन मिल नहीं जाता है।

यह मनोवैज्ञानिकों का आवश्यकता, अन्तर्नाद, प्रोत्साहन सूत्र रहा है। मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरकों की व्यांख्या करने के लिये कई सिद्वान्तों का प्रतिपादन किया है। प्रमुख सिद्वान्तों का वर्णन निम्नवत है-

- मूल प्रवृत्ति सिद्वान्त (Instinct theories)
- प्रणोद सिद्वान्त (Drive theories)
- प्रोत्साहन सिद्वान्त (Incentive theories)
- विरोधी प्रक्रिया सिद्वान्त (Opponent process theories)
- आदर्श स्तर सिद्वान्त (Optimal-level theories)
- आवश्यकता-पदानुक्रम सिद्वान्त (Need hierarchies theories)

1. **मूल प्रवृत्ति सिद्वान्त (Instinct Theories)-** इसका प्रादुर्भाव 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में हुआ है। मूलप्रवृत्ति से तात्पर्य प्राणी को उत्तेजित करने पर एक खास ढंग से अनुक्रिया करने की जन्मजात प्रवृत्ति से होता है। 1980 में मशहूर मनोवैज्ञानिक विलियम जेम्स (William James) ने यह मत जाहिर किया था कि मनुष्य अपने व्यवहार के नियंत्रण एवं निर्देशन में पशुओं की तुलना में मूल प्रवृत्तियों का अधिक सहारा लेता है। विलियम मैकडूगल (1988) ने इस सिद्वान्त के अन्तर्गत मूलप्रवृत्ति को ऐसी जन्मजात प्रवृत्ति के रूप में परिभाषित किया जिसमें तीन तत्व प्रधान होते हैं-सामान्य उत्तेजन पहलू, क्रिया पहलू, तथा लक्ष्य निर्देशन पहलू। परन्तु उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि मानव स्वभाव मूलतः अनैतिक (Immoral) एवं अहंकारी (Egoistic) होता है।

अतः समाज द्वारा उसे नैतिकता का पाठ पढ़ाकर सामाजिक नियंत्रण में लाया जा सकता है। सिगमंड फ्रायड के अनुसार श्रोत (Resources), उद्देश्य (Aims) वस्तु (Object) तथा प्रेरक शक्ति ये चार मूल प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएं होती हैं। पूरे जीवन काल में मूलप्रवृत्ति का स्रोत शारीरिक आवश्यकताएं, उसका उद्देश्य शारीरिक आवश्यकताओं की आपूर्ति होता है या जिससे मूलप्रवृत्ति की संतुष्टि होती है। जैसे-मूलप्रवृत्ति भूख के लिये भोजन वस्तु (Object) है। प्रेरक शक्ति (Impetus) का अर्थ मूलप्रवृत्ति की शक्ति या बल से होता है। फ्रायड ने दो प्रकार की मूलप्रवृत्तियां बतायी हैं-

a. जीवन मूल प्रवृत्ति इससे संरचनात्मक कार्यों के करने की प्रेरणा मिलती है। फ्रायड ने यौन मूलप्रवृत्ति को जीवन मूलप्रवृत्ति का सबसे उत्तम उदाहरण बताया हैं।

b. मृत्यु मूल प्रवृत्तियह व्यक्ति को सभी तरह के विनाशात्मक एवं ध्वंसात्मक व्यवहार को करने की प्रेरणा देता है। आत्महत्या, दूसरों के प्रति आक्रामक व्यवहार, दूसरों को जान से मार देना जैसे व्यवहार की प्रेरणाशक्ति यही मृत्यु मूल प्रवृत्ति होती है।

यह दोनों मूलप्रवृत्तियां एक साथ मिलकर व्यक्ति के व्यवहार को अभिप्रेरित कर सकती हैं या एक दूसरे को तटस्थ कर सकती हैं या वे एक दूसरे का विरोध कर सकती हैं या कभी-कभी मृत्यु मूलप्रवृत्ति जीवन मूलप्रवृत्ति से अधिक ऊपर उठकर भी व्यक्ति के व्यवहार को अभिप्रेरित करने लगती हैं। जैसे- भोजन करने के व्यवहार में दोनों मूलप्रवृत्तियाँ एक दूसरे के साथ मिलकर कार्य करती हैं। भोजन करने में व्यक्ति का अस्तित्व बना रहता है। जीवन मूलप्रवृत्ति तथा भोजन करने में व्यक्ति भोजन वस्तु को मुँह में रखकर दांत से काटता है, फिर चबाता है तथा निगलता है (मृत्यु मूलप्रवृत्ति)। फ्रायड का यह भी मत था कि अधिकतर मूलप्रवृत्तियाँ अचेतन स्तर पर कार्य करती हैं और व्यक्ति के चेतन विचार एवं व्यवहार को अभिप्रेरित करती है तथा उसे प्रभावित करती हैं। पशु एवं अमानव (Non Humans) संबद्ध व्यवहार इसलिए कर पाते हैं क्योंकि इनमें इन व्यवहारों को करने में एक विशेष मूलप्रवृत्ति पायी जाती है। मधुमक्खियों की भोजन तलाश, चिड़ियों का घोंसला बनाना, सालमोन मछली द्वारा अपने अस्तित्व को बचाने में किया गया विशेष व्यवहार इसके उदाहरण हैं।

आलोचनाएं

i. रूथ वेनडिक्ट (Ruth Bendict, 1959) तथा मार्गरेट मीड (1939) ने बताया कि एक संस्कृति से दूसरे संस्कृति में व्यक्ति के व्यवहारों एवं मूलप्रवृत्तियों में काफी भिन्नता पायी जाती है। जिससे मूलप्रवृत्तियों के स्वरूप को जन्मजात तथा सार्वभौमिक कहना उचित नहीं है।

ii. बर्नार्ड (Bernard1924) द्वारा किए गये अध्ययनों के आधार पर करीब 10000 मानव मूल प्रवृत्तियों का पता चला है, जिनसे व्यवहार प्रेरित पाये गये हैं। बाद में किए गये अध्ययनों से पता चला है कि मूलप्रवृत्तियाँ सचमुच में व्यवहार की व्याख्या नहीं करती हैं। बाल्कि वे अस्पष्ट क्रिया पैटर्न (Unexplained action patterns) के लिए मात्र एक नया नाम देती हैं।

iii. अधिगम मनोवैज्ञानिकों ने यह दिखलाया है कि प्रत्येक व्यवहार अर्जित होता है न कि जन्मजात। इस प्रेक्षण से मूलप्रवृत्ति सिद्वान्त पर पानी फिर जाता है।

इन आलोचनाओं के कारण अभिप्रेरणा का मूल प्रवृत्ति सिद्वान्त 1930 तथा 1940 वाले दशक में अन्य सिद्वान्त जिसे प्रणोद सिद्वान्त कहा जाता है प्रतिस्थापित हो गया है।

2. **प्रणोद सिद्वान्त (Drive Theories)-** इस सिद्वान्त के अनुसार, अभिप्रेरणा का स्रोत पशु या व्यक्ति में पायी जाने वाली एक अवस्था है। इस अवस्था को प्रणोद (Drive) कहते हैं। प्राणी में प्रणोद की उत्पत्ति उसकी शारीरिक आवश्यकता (Bodily need) या फिर वाह्य उद्दीपक (External Stimuli) से उत्पन्न होता है। प्रणोद की दशा में व्यक्ति काफी क्रियाशील (Active) हो जाता है। उसका व्यवहार उद्देश्यपूर्ण (Goal directed) हो जाता है। वह एक निश्चित लक्ष्य के लिए अग्रसर होने लगता है। लक्ष्य

प्राप्त हो जाने पर प्रणोद की तीव्रता कम हो जाती है। तनाव करीब करीब कम हो जाता है। कुछ समय बाद प्रणोद की स्थिति पुनः उत्पन्न होती है। फलतः उसका व्यवहार पुनः लक्ष्य की ओर अग्रसर होने लगता है।

इस प्रकार अभिप्रेरक की व्याख्या निम्नलिखित चार क्रमों में होती है-

i. प्रणोद की अवस्था होती है, जो शारिरिक आवश्यकता (Bodily Needs) या वाह्य उद्दीपक (External Stimuli) से उत्पन्न होती है।
ii. प्रणोद अवस्था से व्यक्ति का व्यवहार लक्ष्य की ओर निर्देशित (Directed) होता है।
iii. लक्ष्य निर्देशित व्यवहार के फलस्वरूप (Goal Directed behavior) के परिणाम स्वरूप व्यक्ति को उपयुक्त लक्ष्य की प्राप्ति होती है।
iv. उपयुक्त लक्ष्य की प्राप्ति से व्यक्ति में प्रणोद की कमी तथा उसे संतुष्टि होती है। कुछ समय के बाद प्राणी में फिर से पहली अवस्था उत्पन्न होती है और कभी तीनों अवस्थाओं की पुनरावृत्ति होती है।

आलोचना

i. इस सिद्वान्त द्वारा सिर्फ जैविक अभिप्रेरकों (Biological Motives) जैसे - भूख, प्यास, काम आदि कि व्यवस्था वैज्ञानिक ढंग से हो पाती है। परन्तु अर्जित अभिप्रेरकों की व्याख्या ठीक ढंग से नहीं हो पाती है।
ii. मात्र प्रणोद तथा उसकी कमी (Reduction) से भी अभिप्रेरक की पूर्ण व्यवस्था नही हो पाती है, क्योंकि प्रणोद अपने आप में अभिप्रेरित व्यवहार पैदा तब तक नहीं करता है जब तक व्यक्ति के सामने उस प्रणोद को कम करने के लिए उचित प्रोत्साहन (Incentive) भी मौजूद न हो।

3. **प्रोत्साहन सिद्वान्त (Incentive theories) या प्रत्याशा सिद्वान्त (Expectancy theories)** - इस सिद्वान्त के अनुसार- प्रणोद महत्वपूर्ण नहीं होता है। बल्कि लक्ष्य या प्रोत्साहन महत्वपूर्ण होता है। इसमें व्यक्ति का व्यवहार इस प्रत्याशा में होता है कि अमुक व्यवहार करके वांछित परिणाम या प्रोत्साहन प्राप्त कर सकता हैं। इसलिए इसे प्रत्याशा सिद्वान्त भी कहते हैं। व्यक्ति को धनात्मक प्रोत्साहन की ओर बढ़ने तथा धनात्मक प्रोत्साहन से दूर हटने में खुशी होती है। उदाहरण- बिल्लियों के दो समूह को 4-4 घंटे तक भूखा रखा गया। दोनों समूहों की भूख (प्रणोद) समान हो जायेगी। फिर एक समूह को अच्छा एवं स्वादिष्ट खाना दिया गया। दूसरे समूह को काफी साधारण तथा स्वादहीन भोजन दिया गया। यह पाया गया कि पहले समूह द्वारा खूब मन से अधिक खाना खाया गया उसकी अपेक्षा दूसरे समूह ने कम खाया। इससे स्पष्ट होता है कि प्रोत्साहन या लक्ष्य के कुछ गुण होते हैं, जिनसे प्राणी का अभिप्रेरित व्यवहार प्रभावित होता है।

आलोचनाएं

यह सिद्वान्त प्रोत्साहन को महत्व देता है। परन्तु आन्तरिक अवस्था प्रणोद को महत्व नहीं देती। क्योंकि वातावरण में प्रोत्साहन स्पष्ट रूप से उपलब्ध रहने तथा प्रणोद के न रहने पर अभिप्रेरित व्यवहार उत्पन्न नहीं हो पायेगा। उदाहरण के लिए-यदि आप 1 घंटे पहले पानी पी चुके हैं। अर्थात् प्रणोद लगभग समाप्त हो गया है। ठंढ़े पानी से

भरा हुआ गिलास इस स्थिति में आपके लिए महत्वहीन हो जाता है। आप पानी नही पीयेंगे। इससे स्पष्ट है कि अभिप्रेरित व्यवहार के लिए मात्र प्रोत्साहन का ही होना अनिवार्य नहीं है बल्कि प्रणोद का भी होना अनिवार्य है। जिस तरह से प्रणोद के अभाव से प्रोत्साहन अर्थहीन है ठीक उसी प्रकार प्रोत्साहन के अभाव में सिर्फ प्रणोद अर्थहीन होता है।

4. **विरोधी-प्रक्रिया सिद्वान्त (Opponent-Process Theory) -**इस सिद्वान्त का प्रतिपादन सोलोमन तथा कोरबिट (1974) द्वारा किया गया। बाद में 1980 में सोलोमन द्वारा इसमें परिवर्तन किया गया। इस सिद्वान्त के अनुसार सभी तरह के सांवेगिक उद्दीपकों में दो तरह की एक दूसरे की विरोधी अवस्थाएं उत्पन्न होती हैं।

A ⟶	A' ⟶	B ⟶	B'
प्रसन्नताकी अवस्था	कम प्रसन्नताकी अवस्था	अप्रसन्नताकी अवस्था	तीव्र अप्रसन्नताकी अवस्था
विशेष सत्ता	सत्ता में कुछ कमी		
या उपलब्धि	या उपलब्धि में कुछ कमी		

उदाहरण-यदि किसी व्यक्ति को कोई विशेष सत्ता या उपलब्धि प्राप्त होती है, तो A अवस्था (प्रसन्नता की अवस्था) उत्पन्न होती है। बार-बार सफलता प्राप्त होने से कम प्रसन्नता की अवस्था A फिर अप्रसन्नता की अव्यवस्था B तथा अन्त में तीव्र अप्रसन्नता की स्थिति ठष् प्राप्त होती है। इस अवस्था में व्यक्ति को और ऊँची उपलब्धि प्राप्त करने तथा सत्ता संबंधी व्यवहार (Power related behavior) करने के लिए अभिप्रेरित करता है, जिससे पुनः A की अवस्था आ जाती है। यदि उपलब्धि काफी अधिक हुई तो सीधे। अवस्था फिर से प्राप्त हो जाती है।

आलोचनाएं

i. कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि इस सिद्वान्त द्वारा जैविक अभिप्रेरकों की व्यख्या नहीं होती है।
ii. सभी तरह के उद्दीपकों से दो तरह की अवस्थाएं जो आपस में एक दूसरे की विरोधी हों, उत्पन्न हो ये आवश्यक नहीं है।

5. **आदर्श -स्तर सिद्वान्त (Optimal-Level Theories) -**फिस्क एवं माडी (Fiske & Maddi, 1961) बर्लिन (Berlyne, 1971) डुफ्फी (1957) तथा हेब (Hebb, 1955)) के अनुसार-प्रत्येक व्यक्ति के सामने क्रियाशीलता या सचेतता (Arousal) का एक निश्चित स्तर होता है, जिसे आदर्श स्तर कहते हैं। इस स्तर पर किए गये व्यवहार पर व्यक्ति को प्रसन्नता होती है। आदर्श स्तर से ऊपर तथा नीचे दोनों स्थितियों के व्यवहार से व्यक्ति को उतनी खुशी नहीं मिलती है जितनी आदर्श स्तर पर होती है। उच्च तथा निम्न दोनों स्थितियों में व्यक्ति का प्रयास यही रहता है कि वह व्यवहार को आदर्श स्थिति में ला सके। **उदाहरण-** मान लीजिए किसी दिन आपके पास लगातार मिलने वाले बहुत अधिक लोग आ

जाते हैं। उसी समय में आपको अपना कार्य भी करने को होगा। ऐसी अवस्था में आप की क्रियाशीलता का स्तर आदर्श स्तर से ऊँचा होगा। अतः आप अपने सचेतना स्तर को कम करके आदर्श स्तर पर लाना चाहेंगे। ऐसी अवस्था में आप नौकर से कह सकते हैं कि अब किसी मिलने वाले को मत भेजना। यह भी कह सकते हैं कि कह दो कि वे नहीं हैं। टेलीफोन को बन्द भी कर सकते हैं। इसके विपरीत यदि मिलने वालों की संख्या नगण्य हो तो क्रियाशीलता का स्तर आदर्श स्तर को नीचे चला जायेगा। इस अवस्था में आप अपनी क्रियाशीलता स्तर को ऊपर बढ़ा कर आदर्श स्तर तक ले जाने का प्रयास करते हैं। अतः इस अवस्था में आप अपने दोस्तों को बुला लेते हैं अथवा सिनेमा देखने चले जाते हैं। इस तरह आप अपने क्रियाशीलता स्तर को बढ़ाकर आदर्श स्तर तक ले आते हैं जिससे अपको प्रसन्नता होती है।

आलोचनाएं

i. धनार्जन की स्थिति में क्रियाशीलता आदर्श स्तर से काफी ऊँचे होने पर भी व्यक्ति की प्रसन्नता बढ़ती जाती है। जो एक सिद्वान्त के विपरीत है।

ii. नीस (Niess, 1990) के अनुसार प्रायोगिक अध्ययन में स्वतंत्र चर उत्तेजन (Arousal) कभी शुद्ध स्तर पर चर नहीं रहा है। प्रयोगकर्ता व्यक्ति को दैहिक रूप से उत्तेजित करने के लिए कुछ करता है। इससे उसके संवेग एवं संज्ञान दोनों में परिवर्तन होता है। ऐसी परिस्थिति में कैसे कहा जा सकता है कि निष्पादन के स्तर में होने वाले परिवर्तन का व्यवहार मात्र उत्तेजक है।

iii. प्रायः यह पहले से तय नहीं किया जा सकता है कि अमुक कार्य या परिस्थिति के लिए उत्तेजन का आदर्श स्तर क्या होगा? ऐसी परिस्थिति में इस सिद्वान्त के आधार पर कुछ भी पूर्वकथन करना संभव नहीं है।

iv. जुकरमैन (Zukerman, 1984) के अनुसार कुछ लोग ऐसे होते हैं जो उच्च उत्तेजन स्तर को आदर्श समझते हैं, क्योंकि उन्हें उत्कृष्ट संवेदन प्राप्त करने में आनन्द आता है। दूसरी तरफ कुछ लोग ऐसे होते हैं जो उत्तेजन के निम्न स्तर को ही आदर्श मानते हैं। फलतः उत्तेजन स्तर सिद्धान्त द्वारा व्यक्ति के अभिप्रेरक व्यवहार के बारे में कुछ भी संगत पूर्वकल्पना करना एक टेढ़ी खीर है।

यद्यपि उत्तेजन स्तर सिद्वान्त की परिसीमाएं अवश्य हैं फिर भी यह सिद्वान्त अभिप्रेरित व्यवहार की उत्पत्ति के स्वरूप पर बहुत हद तक प्रकाश डालने में समर्थ है।

6. **आवश्यकता पदानुक्रम सिद्वान्त (Need hierarchy theories)**

मैस्लो (Maslow, 1954) ने सर्वप्रथम आत्म-सिद्वि (Self-actualization) को एक महत्वपूर्ण अभिप्रेरणा बताया। उन्होंने बतलाया कि मानव आवश्यकताओं या मानव अभिप्रेरकों की व्याख्या एक अनुक्रम या सीढ़ी के रूप में की जा सकती है। मैस्लो का कहना है कि व्यक्ति सबसे पहले शारीरिक आवश्यकताओं जैसे-भूख, प्यास एवं सेक्स आदि की संतुष्टि चाहता है। इसके पूर्ण हो जाने के उपरान्त वह शारीरिक एवं सांवेगिक दुर्घटनाओं से अपनी सुरक्षा चाहता है। इन दोनों आवश्यकताओं की संतुष्टि के बाद सदस्य होने तथा स्नेह पाने या देने की आवश्यकता आती है। इस आवश्यकता के कारण व्यक्ति परिवार, स्कूल, धर्म, प्रजाति राजनैतिक पार्टी आदि के साथ तादात्म्य स्थापित करता है। उपर्युक्त तीनों

आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद व्यक्ति में सम्मान की आवश्यकता उत्पन्न होती है। इस आवश्यकता में आन्तरिक सम्मान कारक जैसे- आत्म सम्मान, उपलब्धि, स्वायत्तता तथा वाहय सम्मान कारक जैसे- पद, कदरदानी आदि सम्मिलित होते हैं। मैस्लो के सिद्वान्त में अन्तिम स्तर 'आत्मसिद्धि की आवश्यकता' का होता है। आत्मसिद्धि का तात्पर्य अपने अन्दर छिपी क्षमताओं की पहचान करना है। व्यक्ति की अपनी क्षमताओं को विकसित करने की आवश्यकता को आत्म सिद्धि कहा जाता है। कुछ व्यक्तियों मे आत्म सिद्धि की आवश्यकता ही नहीं उत्पन्न होती है। वे निम्न स्तर की आवश्यकताओं से संतुष्ट रहते हैं। जिनमें आत्मसिद्धि पूर्ण होती है उन्हें अपने व्यक्तिगत विकास से काफी संतुष्टि होती है। ऐसे व्यक्तियों में डर, दुश्चिन्ता, आदि नहीं के बराबर होता है। अतः ऐसे व्यक्तियों में परिस्थितियों का प्रत्यक्षण सही-सही होता है। मैस्लो ने शारीरिक आवश्यकताओं तथा सुरक्षा की आवश्यकता को निम्नस्तर की आवश्यकताओं में रखा है। बाकी तीनों आवश्यकताओं को उच्च स्तर की आवश्यकताओं में रखा है जिनकी उच्च स्तर की आवश्यकताएं संतुष्ट हो जाती है उनकी निम्न स्तर की आवश्यकताएं भी संतुष्ट हो जाती है। ऐसा भी हो सकता है कि उसकी निम्न स्तर की आवश्यकता संतुष्ट हो जाय तथा उच्च स्तर की आवश्यकता संतुष्ट न हों ।

सीमाएं

आलोचकों का मत है कि मैस्लो ने अपने सिद्वान्त के प्रतिपादन के लिए आकड़े केवल उच्च स्तर एवं मध्यम स्तर के व्यक्तियों से प्राप्त किए थे। अतः उनका सिद्धान्त इन्हीं वर्गों के लिए ही उचित है। निम्न लोगों की आवश्यकताएं कभी पूर्णतः संतुष्ट नहीं होती हैं। अतः वे अनुक्रम के आगे की आवश्यकताओं के बारे मे सोच भी नहीं सकते।

i. मैस्लो की पूर्वकल्पना है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी निचली आवश्यकताओं से ऊपर स्तर की ओर बढ़ते हैं। एक स्तर की संतुष्टि के बाद ही वह अगले स्तर की आवश्यकताओं के तरफ बढ़ते हैं। मैस्लो प्रयोग द्वारा अपनी इस पूर्वकल्पना को नही सिद्ध कर सके। उनकी दूसरी पूर्वकल्पना कि एक स्तर की आवश्यकता संतुष्ट हो जाने पर ही दूसरे स्तर पर जाती है। आलोचकों का यह कहना है कि ऐसा ही हो यह आवश्यक नहीं है। ऐसा भी हो सकता है कि सबसे निम्न स्तर की आवश्यकताओं की संतुष्टि करने के बाद तीसरे स्तर ही आवश्यकता न उत्पन्न होकर चौथे स्तर की आवश्यकता उत्पन्न हो जाय। (Williams & Page, 1989)।
ii. मैस्लो ने जिन मानवीय आवश्यकताओं का वर्णन किया है उनके दैहिक या शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक आधारों को नहीं बतलाया गया हैं। जैसे-व्यक्ति में भूख की आवश्यकता होती है। परन्तु किन-किन शारीरिक परिवर्तनों से यह उत्पन्न होती है, इसका वर्णन उन्होंने नहीं किया है।
iii. मैस्लो ने अपने सिद्धान्त में व्यक्तियों के मात्र व्यक्तिगत इतिहास (Case History) को प्रस्तुत किया है। प्रयोगात्मक सबूत के अभाव में सिद्धान्त की मान्यता कम हो जाती है।

आलोचनाओं के बावजूद यह एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। क्योंकि इस सिद्धान्त में अभिप्रेरणा की व्याख्या करने में जैविक (Biological), सामाजिक (Social), व्यवहारपरक (Behavioral) प्रभावों को सम्मिलित किया जाता है।

2.3.2 अधिगम सिद्धान्त (Learning Theories)

अधिगम से सम्बन्धित सभी सिद्धान्तों की मान्यता यह है कि व्यक्ति के जितने भी सामाजिक व्यवहार होते हैं वह सभी सामाजिक व्यवहार सीखे हुए होते हैं। जैविक उपागम में जहाँ सभी व्यवहार जन्मजात माने जाते हैं वहीं इस उपागम में मनुष्य के सामाजिक व्यवहार अधिमित होते हैं।

पैवलाव का प्राचीन अनुबंधन सिद्वान्त

व्यक्ति के सामाजिक व्यवहारों की व्याख्या पैवलाव-द्वारा प्रतिपादित अनुबन्धन सिद्धान्त और नैमित्तिक अनुबंधन सिद्धान्त के आधार पर की जाती है। पैवलाव ने एक कुत्ते को एक कमरे में रखा। इसके बाद वह बार-बार घंटी बजाने के तुरन्त बाद कुत्ते को भोजन देता था। सात दिनों तक बार-बार घंटी बजने पर बाद भोजन कुत्ते को दिया गया। प्रत्येक बार घंटी बजने पर भोजन देखकर कुत्ते के मुँह में लार आ जाती थी। इस प्रकार एक ऐसी स्थिति आई कि केवल घंटी सुनकर ही कुत्ते की मुँह में लार आ जाती थी। भले ही भोजन न दिया गया हो। कुत्ते के इस व्यवहार को अनुबंधित व्यवहार कहते हैं।

1. टी (CS---------- (सिर घुमाना, कान खड़े करना),- प्रशिक्षण
2. घंटी (CS) एवं भोजन (UCS) --------- लार का आना (UCR)- प्रशिक्षण के बाद
3. घंटी (CS)-------- लार का आना (CR)

सामाजिक अधिगम सिद्वान्त (Social Learning Theory)

समाजिक अधिगम सिद्वान्त का प्रतिपादन अलबर्ट बंदूरा द्वारा 1977 में किया गया। बन्दूरा के सामाजिक अधिगम सिद्वान्त में अनुकर्णात्मक अधिगम और प्रेक्षणात्मक अधिगम (Observational learning) की व्याख्या प्रबलन (Reinforcement) के आधार पर की गयी है। समाज मनोविज्ञान के अन्तर्गत आने वाले सामाजिक व्यवहार जैसे- आक्रामकता, परोपकार, अन्तःवैयक्तिक आकर्षण, अभिवृत्तियों का निर्माण और परिवर्तन तथा पूर्वाग्रह आदि से सबंधित व्यवहारों की व्याख्या सामाजिक अधिगम सिद्वान्तों के आधार पर की गई है। बंदूरा द्वारा बोबोडाल (एक हवा भरा बड़ा सा गुड्डा) एक प्रयोग किया गया है। नर्सरी के छात्रों के दो समूह लिए गये। प्रथम समूह प्रयोगात्मक समूह था, जिसमें एक वयस्क व्यक्ति द्वारा बच्चों के सामने बोबो डॉल के साथ आक्रमकतापूर्ण व्यवहार किया गया, मारपीट की गई। दूसरा नियंयित समूह था। इसमें वयस्क बच्चों के सामने बोबो डॉल को उनके सामने पुनः ले जाया गया। प्रयोगात्मक समूह के बच्चों ने बोबो डॉल के साथ आक्रमकतापूर्ण तथा नियंत्रित समूह के बच्चों द्वारा सहृदयतापूर्ण व्यवहार किया गया। दोनों समूह के बच्चों ने जैसा व्यवहार वयस्क द्वारा करते हुए देखा था वैसा ही व्यवहार उस कमरे में बोबो डॉल के साथ करते पाये गये। इससे स्पष्ट है कि व्यक्ति ठीक वैसा ही व्यवहार करता है जैसा वह देखता है।

अन्तर्दृष्टि अधिगम सिद्वान्त (Insight learning theory-or gestalt theory)

इस सिद्वान्त का प्रतिपादन सन् 1917 में कोहलर ने किया। कोहलर ने अपने प्रयोग में एक वनमानुष को पिजड़े में बन्द किया। पिजड़े से कुछ दूरी पर एक केला रखा जो वनमानुस को स्पष्ट दिखाई दे रहा था। पिजड़े में एक छड़ी रखी थी। पिजड़े में चिम्पैजी को स्वच्छन्द विचरण करने के लिए पर्याप्त स्थान भी था। पिजड़े के अन्दर बन्द वनमानुष केले को देखकर उसे पाने का प्रयास करने लगा। कुछ देर तक असफल रहने पर उसमें एक सूझ उत्पन्न हुई। उसने तुरन्त छड़ी की सहायता से केले को अपनी ओर खींच लिया और खा लिया। कोहलर ने अपने दूसरे

प्रयोग में केले को पिजड़े से अधिक दूरी पर रखा तथा पिजड़े में इस बार एक के स्थान पर दो छड़ियां रखीं, जो हिलने डुलने पर आपस में जुड़कर लम्बी हो सकती थीं। वनमानुष ने पूर्व की भाँति एक छड़ी का प्रयोग किया परन्तु केला पाने में असफल रहा। वह पिजड़े में दोनों छड़ियों के साथ उछल कूद करने लगा। ऐसा करने पर दोनों छडियां आपस में जुडकर लम्बी हो गई। वनमानुष ने अपनी सूझ का प्रयोग करते हुए तुरन्त उसका प्रयोग कर केला अपनी ओर खींच लिया और खा लिया इसके बाद केले को खीचने में पूर्व की अपेक्षा कम समय लगा। कोहलर ने सूझ के द्वारा सीखने सम्बन्धी अन्य प्रयोग किया। इस बार पिजड़े से बाहर रखने के स्थान पर पिजड़े के अन्दर छत से लटका दिया। इस बार वनमानुष ने कुछ देर तक प्रयास किया तत्पश्चात् उसने रखे हुए लकड़ी के संदूकों को एक के ऊपर एक रखा और चढ़कर केले का गुच्छा उतार लिया और खा लिया। इस प्रकार कोहलर ने यह निष्कर्ष निकाला कि समस्याओं के समाधान हो जाने पर उसमें सूझबूझ का अधिक महत्व होता है। जिसे अन्तर्दृष्टि की समझ कहा गया है। जब अध्ययन का विषय जीवन का एक अंग बन जाती है तब उसमें अन्तर्दृष्टि प्रकट होती हैं।

अधिगम का सामाजिक विनिमय सिद्वान्त (Social Exchange Theory of Learning)

यह सिद्वान्त पुरस्कार एवं दण्ड प्रत्ययों पर आधारित है। इस सिद्वान्त का प्रतिपादन टोलमैन द्वारा किया गया। अपने प्रयोग में पहेली सिखाने के लिए उन्होंने चूहों के तीन वर्गों पर प्रयोग किया। पहले वर्ग के चूहों को सीखने पर भोजन दिया गया। दूसरे वर्ग के चूहों को बाहर निकलने पर भोजन नहीं दिया गया। तीसरे वर्ग के चूहों को पहले के कुछ प्रयासों में भोजन नहीं दिया गया, परन्तु बाद के प्रयासों में भोजन दिया गया। प्रयोग के परिणाम में देखा गया कि अन्य वर्गों के चूहों की तुलना में पहले वर्ग के चूहों ने सबसे कम समय में पहेली बाक्स से बाहर निकलना सीख लिया। दूसरे वर्ग के चूहे बहुत प्रयास करने के बाद ही पहेली बाक्स से बाहर निकल सके। तीसरे वर्ग के चूहे भोजन मिलना प्रारम्भ होने से ही सीखने में प्रगति दिखाने लगे और पहले बाक्स से शीघ्र बाहर निकलने लगे। यद्यपि पुरस्कार न मिलने पर भी चूहों ने पहेली बाक्स से बाहर आना सीख लिया। परन्तु पुरस्कार मिलने से उसमें सहायता मिली। यहां पर टोलमैन ने दूसरे वर्ग के चूहों के सीखने पर विशेष जोर देते हुए यह बतलाया कि प्रेरणा अथवा पुरस्कार के अभ्यास से भी चूहों ने पहेली बाक्स से बाहर निकलना सीख लिया था। स्पष्ट है कि सीखने के लिए प्रेरणा अनिवार्य नहीं है। दूसरी ओर टोलमैन शिक्षण को अभिव्यक्त करने में प्रेरणा को आवश्यक मानते हैं। तीसरे वर्ग के चूहों के संबध में यह देखा जा सकता है कि यद्यपि उन्होंने पहेली बाक्स से निकलना सीख लिया था, परन्तु प्रेरणा के अभाव में वे उसे व्यक्त नहीं कर सके। इस प्रकार टोलमैन ने यह निष्कर्ष दिया कि अप्रबलित समूह के चूहों ने भूल-भुलैया संबंधी रेखाचित्र को खोज कर शीघ्रता के साथ अधिगम किया। चूहों ने मात्र अपने अधिगम का प्रदर्शन प्रबलन प्रदान होने तक नहीं किया। चूहों ने अपने लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु आवश्यक परिस्थितियों एवं दशाओं को संज्ञानात्मक मानचित्र के द्वारा ग्रहण किया।

क्रिया प्रसूत अनुबन्धन सिद्वान्त (Operant Conditioning Theory)

इस सिद्वान्त के प्रतिपादक स्किनर (1969, 1983) हैं। इस सिद्वान्त के अनुसार क्रिया प्रसूत अनुक्रिया के बाद जब पुनर्बलित उद्दीपक को दिया जाता है तो इससे उसकी शक्ति बढ़ जाती है। इस प्रकार इनकी निम्नलिखित दो विशेषताएँ दिखाई पड़ती हैं-

a. कोई भी क्रियाप्रसूत अनुक्रिया जिसके बाद पुनर्बलित उद्दीपक दिया जाता है। उसे प्राणी दोहराता है।
b. पुनर्बलित उद्दीपक वह उद्दीपक होता है जिससे क्रियाप्रसूत अनुक्रिया के होने की संभावना में वृद्धि हो जाती है।

स्पष्टतः क्रियाप्रसूत अनुबन्धन में व्यवहार तथा उसके परिणाम पर बल दिया गया है। क्रिया प्रसूत अनुबंधन के लिए यह आवश्यक है कि प्राणी इस ढंग से अनुक्रिया करे कि उससे उसे पुनर्बलित उद्दीपक की प्राप्ति हो सके। इसका स्पष्ट अर्थ यह हुआ कि क्रियाप्रसूत अनुबन्धन में सापेक्ष पुनर्बलन (Contingent reinforcement) पर बल डाला जाता है।

क्रियाप्रसूत अनुबन्धन कक्ष (Operant condition chamber) का बाद में नाम स्किनर चैम्बर पड़ गया) में एक जाली का फर्श, रोशनी, एक लीवर तथा एक भोजन का कप होता है। इसमें चूहा को लीवर दबाने की अनुक्रिया को सिखलाया जाता है। क्रियाप्रसूत अनुबन्धन कक्ष में स्किनर ने एक भूखा चूहा रखा। लीवर को दबाया एवं छोड़ा जा सकता था। कभी चूहा जब उछलकर लीवर को नीचे दबा देता उसी समय भोजन के टुकड़े कप में आ जाते थे। इस क्रिया में सबसे पहले एक खट की आवाज भी आती थी, तुरन्त उसके बाद चूहा लीवर को नीचे दबा देता था और उसे भोजन के टुकड़े मिल जाते थे। वह लीवर को तभी दबाता था जब खट की आवाज सुनता था। पैवलाव के क्लासिकल अनुबन्धन के यह बिल्कुल समान है। अन्तर केवल यह है कि स्किनर के चूहे काफी सक्रिय हैं। उद्देश्य की प्राप्ति के लिए चूहे का व्यवहार बिल्कुल नैमित्तिक है। अतः इसे (Instrumental Conditioning) नैमित्तिक अनुबन्धन भी कहते हैं। सभी सामाजिक अधिगम सिद्वान्तवादियों का मानना है कि व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार अधिगमित होते हैं और इन सामाजिक व्यवहारों की व्याख्या साहचर्यात्मक अधिगम, अनुकरणात्मक अधिगम, पुरस्कार और दण्ड के आधार पर की गई है। सामाजिक व्यवहार की व्यवस्था में अधिगम सिद्वान्त बहुत अधिक लोकप्रिय रहे हैं।

2.3.3 संज्ञानात्मक सिद्वान्त (Cognitive Theories)

संज्ञानात्मक सिद्वान्तों की मान्यता यह है कि व्यक्ति के जितने भी सामाजिक व्यवहार होते हैं वे सभी सामाजिक व्यवहार व्यक्ति अपने वातावरण के संज्ञान के आधार पर करता है। इस दिशा में पहला सिद्वान्त गेस्टाल्टवाद के नाम से प्रचलित हुआ। गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के अनुसार मनोविज्ञान की विषयवस्तु सम्पूर्ण मानव अनुभव है। इसमें प्रयोज्य अपने अनुभवों को जिस रूप में ग्रहण करता है उसी रूप में व्यक्त करने का प्रयास करता है। गेस्टाल्टवाद के अनुसार सम्पूर्ण (Whole) अपने भिन्न-भिन्न भागों का योगफल नहीं होता है। बल्कि उससे भिन्न होता है। सम्पूर्ण में एक निर्गामी गुण (Emergent Quality) उत्पन्न होता है जो इसके किसी भी अंश में नहीं देखा जाता। संज्ञानात्मक मनोविज्ञान के विकास में गेस्टाल्टवाद ने काफी योगदान किया। गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोगकरण की अनेक तकनीकों का विकास किया। इन तकनीकों के आधार पर अन्तः वैयक्तिक संम्प्रेक्षण अभिवृत्ति परिवर्तन और समूह संरचना से संबंधित सामाजिक व्यवहारों का प्रायोगिक अध्ययन किया जाने लगा। गेस्टाल्टवाद के आधार पर इन सामाजिक व्यवहारों की अधिक सामाजिक ढंग से व्यांख्यां की गई। व्यवहारवादी उपागम के बढ़ते हुए प्रभुत्व के कारण अन्तरिक मानसिक क्रियाओं यथा-प्रत्यक्षण, चिंन्तन, समस्या समाधान, भाषा, विवेक आदि संज्ञानात्मक कारकों का महत्व गौण होता चला गया। एक लम्बे समय के बाद संज्ञानात्मक

मनोवैज्ञानिकों ने इस आंतरिक प्रक्रियाओं के महत्व को समझा और कहा कि व्यवहारवाद एक अपूर्ण मनोवैज्ञानिक उपागम है जो व्यवहार की व्याख्या केवल उसकी बाह्य विशेषताओं के आधार पर करता है और आंतरिक विशेषताओं की उपेक्षा करता है। अतः संज्ञानात्मक उपागम व्यवहार की समुचित व्याख्या करता है। क्योंकि यह बाह्य विशेषताओं के साथ-साथ आन्तरिक मानसिक प्रक्रियाओं पर भी बल देता है। इस अर्थ में संज्ञानात्मक उपागम वास्तव में संरचनावाद, प्रकार्यवाद तथा व्यवहारवाद का एक सुन्दर समाकलन है।

संज्ञानात्मक सैद्धान्तिक उपागम की आधारभूत मान्यता यह है कि सामाजिक व्यवहार किसी न किसी क्षेत्र (Field) में घटित होता है। यह क्षेत्र व्यक्ति के विगत अनुभवों, प्रत्यक्षीकरण और संबंधित कारकों पर ही निर्भर नहीं होता है बल्कि सामाजिक व्यवहार की व्यवस्था समग्रता नियम के आधार पर भी की जाती है। संज्ञानात्मक सैद्धान्तिक उपागम में समाज मनोविज्ञान में गुणारोपण सिद्वान्त (Attribution theory) सबसे अधिक लोकप्रिय रहा है। हाइडर (1958) (Heider's Attribution) का गुणारोपण सिद्वान्त हाइडर के सिद्वान्त के अनुसार किसी व्यवहार या घटना के प्रदर्शित होने में दो प्रकार के कारक महत्वपूर्ण होते हैं। इन्हें व्यक्तिगत शक्तियां या आंतरिक कारक एवं पयावरणीय शक्तियां या बाह्य कारक कहते हैं। उदाहरणार्थ - मान लें कि एक व्यक्ति (अभिकर्ता) के समक्ष नदी पार करने की समस्या उत्पन्न हो गई है। यदि उसमें तैरने की योग्यता नहीं है या कम है तो नदी पार नहीं कर पायेगा। क्योंकि उसकी क्षमता कार्य की कठिनाई की तुलना में पर्याप्त नहीं है। अतः ऐसा होने पर वह चाहे जितना भी प्रयत्न करे समस्या का हल नहीं मिल पायेगा। हाइडर के अनुसार आन्तरिक कारकों को सर्वप्रथम चेष्टा या अभिप्रेरणा एवं योग्यता (AbilityPossibility) में विभक्त कर सकते हैं। योग्यता का संबंध प्रत्यक्षतः कार्य कठिनता (Task difficulty) से है । क्योंकि कार्य संपन्न होने की संभावना (Task difficulty) योग्यता पर निर्भर होती है। हाइडर के अनुसार चेष्टा (अभिप्रेरण) को अभिप्राय या लक्ष्य एवं प्रयत्न में विभक्त किया जा सकता है। अर्थात् समस्या हल करने के लिए अभिकर्ता में इच्छा होनी चाहिए या उसे यथोचित प्रयत्न करना चाहिए। हाइडर के इस गुणारोपण सिद्धान्त पर गेस्टाल्ट मनोविज्ञान और कुर्टलेविन के क्षेत्र सिद्वान्त का प्रभाव था। हाइडर के इस सिद्वान्त को जान्स और डेविस (1965), केली (1967-1971) आदि मनोवैज्ञानिकों ने आगे विकसित किया। वाइनर (1972-1980) ने गुणारोपण सिद्धान्त को वृहद समाज मनोविज्ञान सिद्वान्त के रूप में प्रस्तुत किया। गुणारोपण के सिद्धान्त के आधार पर व्यक्ति के संज्ञान के रूप में प्रस्तुत किया। गुणारोपण सिद्धान्त के आधार पर व्यक्ति के संज्ञान के प्रत्यक्षीकरण, व्यक्ति की संवेगात्मक अनुक्रियाओं, उपलब्धि अभिप्रेरणा संबंधी व्यवहार, अभिवृत्ति परिवर्तन और परोपकारी व्यवहार आदि की व्याख्या की गई है। सामाजिक व्यवहार में अन्तःक्रियात्मक व्यवहार की व्याख्या संज्ञानात्मक विसन्नादिता सिद्धान्त (Dissonance theory) के आधार पर की जाती है, जिसका प्रतिपादन फेस्टिंगर (1957) ने किया। इस व्यवहार की व्याख्या संतुलन सिद्धान्त के आधार पर भी की जाती हैं जिसका प्रतिपादन हाइडर (1946) और रोजनवर्ग (1958) आदि मनौवैज्ञानिकों ने किया।

अभ्यास प्रश्न

1. सामाजिक परिस्थिति में व्यक्ति के व्यवहार का_____अध्ययन ही समाज मनोविज्ञान है।
2. समाज मनोविज्ञान में_____योग्यता का गुण पाया जाता है।

3. समाज मनोविज्ञान में_____का गुण पाया जाता है।
4. समाज मनोविज्ञान में विज्ञान _____पायी जाती है।
5. व्यक्ति के समस्त व्यवहार_____होते हैं।

2.4 सारांश

- समाज मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार तथा अनुभूतियों का सामाजिक परिस्थिति में अध्ययन करने का विज्ञान है। वैज्ञानिक स्वरूप के कारण इसमें प्रामाणिकता, भविष्यवाणी की योग्यता, सार्वभौमिकता, वस्तुनिष्ठता आदि के गुण पाये जाते हैं।
- समाज मनोविज्ञान प्रयुक्त विज्ञान के रूप में शोध/अध्ययन कर समस्याओं का पता लगाता है तथा उनका समुचित समाधान करता है।
- घटना से संबंधित चरों के प्रभाव, चरों के पारस्परिक संबंधो, चरों की व्यवस्थित व्याख्या, नियंत्रण, विश्वसनीय भविष्यवाणी, क्रमबद्धता एवं ताकिर्कता आदि के कारण जो व्यवस्थित रूप प्राप्त होता है उसे सिद्धान्त कहते हैं।
- अभिप्रेरणा अवस्थाओं का एक ऐसा समुच्चय है जो व्यवहार को सक्रिय करता है, निर्देशित करता है तथा किसी लक्ष्य की ओर उसे बनाए रखता है।
- मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरकों की व्याख्या करने के लिए 1.मूलप्रवृत्ति सिद्वान्त 2. प्रणोद सिद्धान्त 3. प्रोत्साहन सिद्धान्त 4. विरोधी प्रक्रिया सिद्धान्त 5. आवश्यकता पदानुक्रम सिद्धान्त आदि प्रमुख सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है।
- समस्त सामाजिक व्यवहार सीखे हुए होते हैं।
- संज्ञानात्मक सिद्वान्त व्यवहार की समुचित व्याख्या करता है। क्योंकि यह बाह्य विशेषताओं के साथ-साथ आन्तरिक मानसिक प्रक्रियाओं के अध्ययन पर भी बल देता है।

2.5 शब्दावली

1. प्रयुक्त - व्यावहारिक
2. विभेदन - भेदभाव
3. पुनर्बलन- और मजबूत करना
4. परस्पर- आपस में
5. कर्षण- खिंचाव
6. अधिगम- सीखना
7. प्रणोद- अभिप्रेरणा का स्रोत
8. प्रत्याशा- प्राप्त होने शारीरिक आवश्यकता जैसे - भूखकी आशा, प्यास।
9. अनुक्रम- सीढ़ी

10. आत्म सिद्धि- अपने अन्दर की क्षमताओं को पहचानना

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. वैज्ञानिक
2. भविष्यवाणी का गुण
3. प्रामाणिकता, सार्वभौमिकता एवं वस्तुनिष्ठता
4. के आवश्यक तत्व या विशेषताएं
5. सीखे हुए
6. आन्तरिक मांनसिक प्रक्रियाओं

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, आर0एन0 (2007-2008) आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
2. सिंह, आर0एन0 (2005) आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. सिंह, ए0के0 (2002) समाज मनोविज्ञान की रूप रेखा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली-1.
4. सिंह, एक0के0 (2000) उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, मोतीलाल बनासीदास, दिल्ली-1
5. श्रीवास्तव, डी0एन0 एवं अन्य (2000-2001) आधुनिक समाज मनोविज्ञान, एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
6. श्रीवास्तव, डी0एन0 (दसवाँ संस्करण) सामाजिक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
7. त्रिपाठी, आर0बी0 (2002) व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, गंगासरन एण्ड सन्स, बांसफाटक, वाराणसी।

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अभिप्रेरणात्मक सिद्वान्त की व्याख्या करते हुए इसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।
2. अधिगम सिद्वान्त की विवेचना कीजिए।
3. संज्ञानात्मक सिद्वान्त व्यवहार की समुचित व्याख्या करता है। विवेचन कीजिए।
4. संक्षिप्त नोट लिखिए-
    i. समाज मनोविज्ञान के प्रयुक्त विज्ञान का स्वरूप।
    ii. किसी सामाजिक शोध के लिए 'सिद्धान्त' समाज मनोविज्ञान की नींव है।

इकाई 3 -समाज मनोविज्ञान की विधियाँ(Methods of Social Psychology)

इकाई संरचना-

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 प्रेक्षण विधि
3.4 सर्वेक्षण विधि
3.5 व्यक्ति इतिहास लेखन विधि
3.6 सामाजमितीय विधि
3.7 प्रयोगात्मक विधि
3.8 सारांश
3.9 शब्दावली
3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रारम्भ में समाज मनोविज्ञान से संबंधित समस्याओं के अध्ययन की विधियां कल्पना और अनुमान पर आधारित थीं। अर्थात् व्यक्ति के व्यवहार के अध्ययन की विधियाँ प्रायः आत्मनिष्ठ थीं। परन्तु अब अध्ययन की विधियाँ प्रायः वस्तुनिष्ठ हो गई हैं। मनोविज्ञान का स्वरूप वर्तमान में वैज्ञानिक हो गया है। अतः मनोविज्ञान की वैज्ञानिक हैसियत, इसकी विधि पर निर्भर करती है। जैसे-जैसे समाज मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र बढ़ता जा रहा है वैसे - वैसे समाज मनोविज्ञान की विधियाँ भी विकसित होती जा रही हैं। प्रस्तुत इकाई में प्रेक्षणविधि, सर्वेक्षण विधि, व्यक्ति इतिहास लेखन विधि, सामाजमितीय विधि एवं प्रयोगात्मक विधि का वर्णन किया गया है। आशा है प्रस्तुत पाठ्य सामग्री विश्वविद्यालय के छात्रों के लिए काफी उपयोगी होगी।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप-

1. समाज मनोविज्ञान विधि को परिभाषित कर सकेंगे।
2. समाज मनोविज्ञान की प्रेक्षण विधि को समझ सकेंगे।
3. सर्वेक्षण विधि से अवगत हो सकेंगे।
4. व्यक्ति इतिहास लेखन विधि से अवगत हो सकेंगे।
5. समाजमितीय विधि से अवगत हो सकेंगे।

6. प्रयोगात्मक विधि को समझ सकेंगे।
7. उपर्युक्त विधियों के अध्ययन के उपरान्त समाज मनोविज्ञान की समस्याओं के अध्ययन में इन विधियों का दक्षता से उपयोग कर सकेंगे।

3.2 प्रेक्षण विधि

प्रेक्षण वह प्रक्रिया है जिसमें प्रेक्षक व्यक्तियों के व्यवहारों को एक खास समय तक कभी हल्का हस्तक्षेप करते हुए तथा कभी बिना किसी तरह के हस्तक्षेप किए ही देखता तथा सुनता है, उनका एक रिकार्ड तैयार करता है जिसकी बाद में विश्लेषणात्मक व्याख्या की जाती है।

- **W.J. Goode and P.K. Hatt (1964) के अनुसार** "विज्ञान का शुभारम्भ प्रेक्षण से होता है और अन्ततः तथ्यों के प्रमाणीकरण में भी इसी का उपयोग होता है"।
- **C.A. Moser (1958) के अनुसार** "प्रेक्षण स्पष्टतः वैज्ञानिक जांच की एक प्रतिष्ठित विधि है। वस्तुतः प्रेक्षण करने में कानों एवं वाणी की अपेक्षा नेत्रों का उपयोग किया जाता है"।
- **Weiek (1969) के अनुसार** "प्रेक्षण विधि की अवधारणा का तात्पर्य परिकल्पना विहीन जांॅच, प्राकृतिक परिवेश में घटनाओं का निरीक्षण, शोधकर्ता द्वारा हस्तक्षेप का अभाव, अचयनात्मक रूप में विवरण संग्रह और स्वतंत्र परिवर्त्यों में प्रहस्तन न करना है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि प्रेक्षण विधि के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के सामाजिक व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। इसमें अध्ययन नेत्रों द्वारा निरीक्षण करके किया जाता है। इसके द्वारा भीड़ श्रोता, सामाजिक विकास,सामाजिक अन्तःक्रिया, समूह व्यवहार एवं संस्कृति आदि का स्वाभाविक परिवेश में अध्ययन कर सकते हैं। प्रेक्षण के आधार पर प्राप्त प्रदत्तों एवं सूचनाओं का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करके व्यवहार तथा उसे उत्पन्न करने वाले सामाजिक कारक के बीच उचित संबंध स्थापित कर सकते हैं। (Ruthus, 1984)

प्रेक्षण विधि के उपयोग की परिस्थिति

समाज मनोवैज्ञानिक जब अध्ययन किए जाने वाले चर (Variable) में जोड़ तोड़ नहीं कर पाते हैं तो इस विधि का सहारा लेते हैं। जैसे - एक समाज मनोवैज्ञानिक दुश्चिंता के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए प्रयोज्यों को एक ऐसी परिस्थिति में रखे जहां यह कहा जाय कि उनके पिता या माता की मृत्यु हो गई है तो यह नैतिकता के विरूद्ध होगा।

प्रेक्षण विधि के सोपान

i. **प्रेक्षण योजना (Observation schedule) -** इसके अन्तर्गत प्रतिदर्श, प्रेक्षण स्थल, उपकरण एवं व्यवहार अंकन की विधि सुनिश्चित करना आता है।

ii. **व्यवहार का प्रेक्षण (Observation behavior)-** प्राकृतिक परिवेश में व्यवहार का निरीक्षण किया जाता है। कभी-कभी इसमें कैमरे का भी प्रयोग किया जाता है।

iii. **व्यवहार का अंकन (Recording of behavior)-** प्रेक्षण से प्राप्त सूचनाओं को पूर्व निर्धारित तथा तात्कालिक उद्देश्यों के अनुसार अंकन किया जाता है। इस कार्य में कैमरा आदि का प्रयोग किया जा सकता है।

iv. **सारणीयन एवं विश्लेषण (Tabulation and Analysis)-** यदि सूचनाएं मात्रात्मक प्राप्त की गई हैं तो उन्हें सारणीबद्ध कर देना चाहिए। इससे विश्लेषण में सुविधा हो जाती है।

v. **व्याख्या एवं निष्कर्ष (Interpretation and conclusion)-** प्राप्त सूचनाओं तथा प्रदत्तों के विश्लेषण से जो परिणाम मिलते हैं उनकी यथोचित व्यवस्था की जाती है और सामाजिक व्यवहार एवं समस्याओं के बारे में निष्कर्ष तथा अनुमान आदि प्रस्तुत किए जाते हैं।

प्रेक्षण के प्रकार (Types of observation)

रीस (Reiss ,1971) ने प्रेक्षण की वैज्ञानिक सूचनाएं उत्पन्न करने की क्षमता के आधार पर दो भागों में बाँटा है-

i. **अक्रमबद्ध प्रेक्षण (Unsystematic Observation)-** इसमें प्रेक्षक व्यक्तियों के व्यवहारों का अध्ययन मात्र अपने दिन प्रतिदिन के अनुभवों के ही आधार पर कर लेता है। इसमें न तो कोई स्पष्ट नियम होता है और न ही कोई तार्किक क्रम पर अपने प्रेक्षण को आधारित करता है। जब कोई शोधकर्ता बस में बैठे व्यक्तियों के भीड़ व्यवहार का अचानक प्रेक्षण करना शुरू कर देता है तो यह अक्रमबद्ध प्रेक्षण का एक उदाहरण है।

ii. **क्रमबद्ध प्रेक्षण (Systematic Observation)-** इसमें प्रेक्षण का आधार एक निश्चित तथा स्पष्ट नियम होता है ताकि इस तरह के प्रेक्षण की पुनरावृत्ति की जा सके। इस तरह के प्रेक्षण की नियमावली एक वैज्ञानिक एवं तार्किक क्रम पर आधारित होती है। **उदाहरण-** यदि कोई समाज मनोवैज्ञानिक बच्चों में आक्रमणशीलता का अध्ययन करने के लिए उन्हें एक खास जगह में ले जाता है और अपने पूर्वनियोजित कार्यक्रम के अनुसार कुछ इस प्रकार की क्रियाओं की शुरूआत करता है जिनमें बच्चे एक दूसरे के प्रति आक्रमणशीलता दिखा सकें तो यह क्रमबद्ध प्रेक्षण का उदाहरण होगा। समाज मनोविज्ञान में इसका प्रयोग अधिक हुआ है।

प्रेक्षक भूमिका के अनुसार प्रेक्षण विधि के प्रकार

i. **सहभागी प्रेक्षण (Participant Observation)-** इस तरह के प्रेक्षण में प्रेक्षक व्यक्तियों के समूह की क्रियाओं में स्वयं हाथ बँटाता है और उनके व्यवहारों का प्रेक्षण भी करता जाता है। रिकार्ड भी तैयार करता है। वह समूह का पूर्णकालिक या अंशकालिक सदस्य बना रहता है। समूह की क्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेता है। इस तरह के प्रेक्षण में प्रेक्षक अपना परिचय सदस्यों से प्रायः छिपा कर रखता है।

ii. **असहभागी प्रेक्षण (Non Participant Observation)-** जब प्रेक्षक किसी सामाजिक व्यवहार का प्रेक्षण स्वाभाविक परिस्थिति में करता है। परन्तु प्रेक्षण किए जाने वाले व्यवहारों या क्रियाओं के करने में वह हाथ नहीं बँटाता है, तब इसे असहभागी प्रेक्षण विधि कहते हैं। इस प्रकार का प्रेक्षण संगठित होता है। अतः प्रेक्षक को पहले से ही प्रेक्षण की योजना बना कर स्वाभाविक परिस्थितियों में उत्पन्न करने में सुविधा होती है।

सहभागी तथा असहभागी प्रेक्षण में अन्तर

	सहभागी प्रेक्षण	असहभागी प्रेक्षण
1.	प्रेक्षक व्यक्तियों की क्रियाओं के साथ सक्रिय रूप से भाग लेता है।	प्रेक्षक ऐसी क्रियाओं के साथ भाग नहीं लेता है। बल्कि निष्क्रिय रहता है।
2.	प्रेक्षक का परिचय छिपा रहता है।	प्रेक्षक का परिचय छिपा नहीं रहता है।
3.	सहभागी प्रेक्षण असंगठित होता है।	असहभागी प्रेक्षण संगठित होता है।
4.	अपेक्षाकृत कम विश्वसनीय एवं कम निरूपक होता हैं	अधिक विश्वसनीय एवं निरूपक होता है।
5.	सहभागी प्रेक्षण असहभागी प्रेक्षण की तुलना में कम वैज्ञानिक है।	असहभागी प्रेक्षक को सामाजिक व्यवहार के किसी विशेष पहलू पर अधिक प्रश्नों का समाधान ढने के लिए उसे अधिक से अधिक अवसर मिलता है। अतः यह अधिक वैज्ञानिक है।
6.	प्रेक्षक परिचय छिपा रहने के कारण अध्ययन किए जाने वाले व्यवहारों की स्वाभाविकता अप्रभावित रहती है।	प्रेक्षक की उपस्थिति से अध्ययन किए जाने वाले व्यवहार की स्वाभाविकता प्रभावित होती है। कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा इसका खण्डन भी किया गया है।

3.4 सर्वेक्षण विधि (Survey Method)

कम समय, कम खर्च में किसी सामाजिक व्यवहार, घटना, मत, समस्या या भावी विचारों के बारे में अधिक लोगों की राय जानने की आवश्यकता हो तो सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया जाता है। व्यवहार, घटना या विचार से संबंधित प्रश्न या कथन व्यापक स्तर पर लोगों में प्रस्तुत कर उनकी प्रतिक्रियाएं प्राप्त की जाती हैं। प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करके संबधित व्यवहार, घटना या समस्या के बारे में निष्कर्ष निकाला जाता है।

"जनसंख्या या जनसंख्या के प्रतिदर्श से व्यक्तिगत साक्षात्कार या प्रदत्त संग्रह की अन्य विधियों द्वारा क्रमबद्व रूप में प्रदत्त संग्रह करना सर्वेक्षण कहा जाता है"।' ऐसे अध्ययन लोगों के बड़े या काफी विस्तृत समूहों पर किए जाते हैं।

"Survey is ------the systematic collection of data from population or samples of population through the use of personal in interviews or other data gathering devices----- These studies are specially concerned when large or widely dispersed groups of people."

"आम जनसंख्या में से चुने गये प्रतिदर्शों का अध्ययन करके सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक कारकों या विशेषताओं के घटित होने की संभावना उनका विवरण एवं उनमें पाये जाने वाले संबंधों की खोज करना सर्वेक्षण का मुख्य उद्देश्य है"।

"Survey research is that branch of social scientific investigation that studies large and small population (or universe) by selecting and studying samples chosen from this population to discover the relative incidence, distribution and inter relations of sociological cl and psycho ecological variables." Kerlinger, 1973

"सर्वेक्षण शोध का तात्पर्य प्रतिदर्श तथा प्रश्नावली विधियों द्वारा जनमत के साधन से है"।

"Survey research refers to the measurement of public opinion by the use of sampling and questionnaire techniques."

"सर्वेक्षण शोध एक ऐसा शोध है जिसमें व्यक्तियों के प्रतिनिधिक समूह से उनके व्यवहार, मनोवृत्ति या विश्वास के संबंध में अनेक प्रश्न पूछे जाते हैं"।

"Survey research is a research in which a representative group of people (respondents) are asked a series of question regarding their behavior attitudes or beliefs." Feldman, 1985

इस प्रकार सर्वे विधि में शोधकर्ता एक प्रतिनिधिक प्रतिदर्श लेकर किसी सामाजिक समस्या के प्रति व्यक्तियों की मनोवृत्ति, मत, विचार आदि का अध्ययन साक्षात्कार या प्रश्नावली द्वारा करता है। सर्वे विधि में प्रायः एक बड़ी जनसंख्या के भिन्न-भिन्न वर्गों के लोगों को प्रतिदर्श के रूप में सम्मिलित किया जाता है। आजकल चुनावों के दौरान मतदाताओं की राय जानने के लिए इसका प्रायः उपयोग किया जाता है।

सर्वेक्षण सोपान (Steps of Survey)

i. **समस्या चयन (Selecting a Problem) -** समस्या विषय निर्धारण करना जैसे - जनसंख्या, गरीबी, महंगाई या दहेज की समस्यायें अध्ययन के लिए निर्धारित हो सकती हैं।
ii. **प्रतिदर्श चयन (Selecting a Sample) -** समस्या चयन के उपरान्त प्रतिदर्श का चयन किया जाता है। प्रतिदर्श अधिक से अधिक बड़ा व्यापक तथा प्रतिनिधात्मक होना चाहिए।
iii. **प्रश्न सूची तैयार करना (Preparing Schedule of Questions) -** समस्या सें संबंधित प्रश्न सूची दूसरे चरण में तैयार की जाती है। प्रश्न यथासंभव लघु एवं स्पष्ट भाषा में निर्मित करने चाहिए।

iv. **प्रदत्त संग्रह (Collection of Data) -** तैयार की गई प्रश्नावलियों के उत्तर लोगों से प्राप्त किए जाते हैं। सभी उत्तरदाताओं के समक्ष प्रश्नों का स्वरूप एक जैसा तथा संख्या भी बराबर होनी चाहिए।

v. **प्रदत्त विश्लेषण (Analysis of Data) -** सूचनाओं का वर्गीकरण, पक्ष एवं विपक्ष के आधार पर उन्हें अलग करना और आवश्यकतानुसार सांख्यिकीय विधियों का उपयोग करना इत्यादि प्रदत्त विश्लेषण के महत्वपूर्ण पक्ष हैं। जैसे-संकेतन, सारणीयन, प्रतिशतता, ग्राफिक प्रदर्शन आदि।

vi. **व्याख्या तथा निष्कर्ष (Interpretation and Conclusion) -** प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के पश्चात् उनकी व्याख्या की जाती है तथा निष्कर्ष प्रस्तुत किए जाते हैं। परिणामों को ध्यान में रखते हुए भविष्यवाणी भी की जा सकती है। जैसे-यह भविष्यवाणी करना कि आगामी चुनाव में अमुक पार्टी के कितने विधायक जीतेंगे।

सर्वेक्षण के प्रकार (Types of Survey)

i. **संगणना या यथापूर्ण सर्वेक्षण (Census or Status Survey)-** इस प्रकार के सर्वेक्षण में पूरी जनसंख्या का अध्ययन किया जाता है और आवश्यक सूचनाएं प्राप्त की जाती हैं। जैसे - जनसंख्या स्कूल गणना आदि। इस प्रकार के सर्वेक्षण का बहुत कम उपयोग होता है। इसमें समय एवं धन का व्यय अधिक होता है। सभी परिस्थितियों में इसका उपयोग काफी कठिन होता है।

ii. **प्रतिदर्श सर्वेक्षण (Sample Survey)-** इस प्रकार के सर्वेक्षण में जनसंख्या का अध्ययन न करके बल्कि उसके किसी अंश या प्रतिदर्श का अध्ययन किया जाता है। प्राप्त सूचनाओं को पूरे विश्व या जनसंख्या पर लागू किया जाता है। प्रतिदर्श को यथासंभव प्रतिनिधिक बनाने का प्रयास किया जाता है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से संगणना या यथापूर्ण सर्वेक्षण की अपेक्षा प्रतिदर्श सर्वेक्षण अधिक उपयोगी है। इस प्रकार के सर्वेक्षण में समय, श्रम तथा मुद्रा की बचत होती है। इसका उपयोग सामाजिक मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि में व्यापक रूप से होता है।

सर्वेक्षण विधियां या उपकरण (Methods or Tools of Survey)

साक्षात्कार एवं अनुसूची (Interview & schedules)-इसमें व्यक्तिगत या सामूहिक साक्षात्कार द्वारा सूचनाएं प्राप्त की जाती हैं। साक्षात्कार के समय अनुसूचियों का प्रयोग किया जा सकता है।

i. **डाक प्रश्नावली (Mail Questionnaire)-** प्रश्नावली डाक द्वारा सूचना दाताओं के पास भेज दी जाती है। उनसे अनुरोध किया जाता है कि वे इसे भरकर यथासंभव शीघ्र वापस कर दें।

ii. **टेलीफोन सर्वेक्षण (Telephone Survey)–** यहां सूचनादाताओं से टेलीफोन से संपर्क किया जाता है। सर्वेक्षण समस्या के अनुकूल व्यक्तिगत तथा समाज वैज्ञानिक तथ्यों के संबंध में सूचना देने के लिए उसे अनुरोध किया जाता है। इसकी उपयोगिता बहुत सीमित होती है।

iii. **प्रेक्षण सर्वेक्षण (Observation Survey)-** सर्वेक्षण बड़े प्रेक्षण के आधार पर प्राप्त किया जाता है।

iv. **घटक विश्लेषण (Content analysis)-** सर्वेक्षण की इस तकनीक के द्वारा संचार के व्यक्त घटक का वस्तुगत, क्रमबद्ध तथा परिमाणात्मक अध्ययन किया जाता है। सर्वेक्षण की यह विधि जटिल सामाजिक, राजनैतिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अध्ययन के लिए उपयोगी है। भिन्न-भिन्न

समाजों, संस्कृतियों या राष्ट्रों के व्यक्तियों की मनोवृत्तियों, विश्वासों, मूल्यों आदि के अध्ययनों में यह विधि उपयोगी है। इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि घटकों के विश्लेषण पर सर्वेक्षण के पक्षपातों का प्रभाव पड़ता है, जिससे इसकी विश्वसीयता कम हो जाती है।

v. **पैनल सर्वेक्षण (Panel Survey)-** इस सर्वेक्षण में उत्तरदाताओं के एक प्रतिदर्श का चुनाव कर लिया जाता है। इस प्रतिदर्श का सर्वेक्षण एक से अधिक बार करने पर लोगों के मत में समय-समय पर होने वाले परिवर्तनों का भी सटीक अनुमान लगाया जा सकता है। आजकल चुनावों के दौरान ऐसे सर्वेक्षण कराकर विभिन्न पार्टियों के जीत हार की संभावना का पता लगाना काफी प्रचलन में है। वैसे लोगों का स्थानान्तरण बीच की अवधि में, कुछ उत्तरदाताओं की मृत्यु और अन्य कारणों से उत्तरदाताओं का भाग न ले पाना निष्कर्ष की विश्वसनीयता सीमित कर देते हैं।

सर्वेक्षण विधि के लाभ (Advantages of Survey Method)

i. इसके द्वारा कम समय में ही अधिक लोगों की राय, अभिवृत्ति एवं प्रतिक्रिया प्राप्त की जा सकती है।
ii. सामाजिक एवं स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न समस्याओं के प्रति लोगों के विचार आसानी से प्राप्त हो जाते हैं।
iii. अध्ययनकर्ता अपनी आवश्यकतानुसार प्रश्नों की सूची तैयार कर सकते हैं।
iv. सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति करके पैनल सर्वेक्षण की विश्वसनीयता बढ़ाई जा सकती है।
v. मनोविज्ञान के अतिरिक्त अन्य सामाजिक विज्ञानों में भी इसका उपयोग है।
vi. इसमें उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क होता है और उन्हें समीप से समझने का अवसर प्राप्त होता है।
vii. छाटे प्रतिदर्श से समय तथा धन की बचत होती है।
viii. बड़ा प्रतिनिध्यात्मक प्रतिदर्श चुनकर निष्कर्षों की विश्वसनीयता में वृद्धि की जा सकती है।

सर्वेक्षण विधि के दोष (Demerits of Survey Method)

i. सर्वेक्षण विधि पर यह आरोप लगाया जाता है कि इसमें केवल सतही सूचनाएं ही प्राप्त होती हैं। (Kerlinger, 1986)
ii. उचित प्रतिदर्श का चयन न होने पर परिणामों की विश्वसनीयता कम हो जाती है। (Campbell and Katona, 1953)
iii. अध्यनकर्ता की अपनी विचारधारा से प्रभावित होने पर परिणामों की वस्तुनिष्ठता घट जाती है।
iv. कभी-कभी उत्तरदाता सही प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करते हैं। इससे इस विधि की उपयोगिता सीमित हो सकती है।
v. यदि अध्ययनकर्ता अप्रशिक्षित है तो वह सर्वेक्षण कार्य ठीक से नहीं कर पायेगा।
vi. व्यापक पैमाने पर अध्ययन करने पर समय और श्रम काफी अधिक लगता है।

3.5 व्यक्ति इतिहास लेखन विधि (Case History Method)

इस विधि में शोधकर्ता किसी व्यक्ति का, कुछ व्यक्तियों के समूह के जीवन की प्रमुख घटनाओं का एक लेखा-जोखा तैयार करता है। लेखा तैयार करने मे वह घटना विशेष से संबंधित कुछ प्रश्नों को पूछता है, ताकि उसे इस

निष्कर्ष पर पहुँचने में सुविधा हो कि कौन-कौन सामाजिक कारकों (Social Factors) तथा किन-किन सामाजिक परिस्थितियों के कारण व्यक्ति को या व्यक्तियों के समूह को अमुक व्यवहार करना पड़ा। इस विधि की सफलता बहुत हद तक शोधकर्ता की व्यक्तिगत कार्यकुशलता तथा बुद्धिमत्ता पर निर्भर करती है। "व्यक्ति इतिहास विधि'' का उद्देश्य सम्पूर्ण जीवनचक्र अथवा एक व्यक्तिगत इकाई, परिवार, संस्था, सामाजिक समूह या समुदाय के इस चक्र की निश्चित प्रक्रियाओं का अध्ययन करना हैं"। उदाहरण- एक शोधकर्ता इस विधि द्वारा तलाक संबंधी व्यवहार का अध्ययन करना चाहता है तो इसके लिए वह ऐसे व्यक्तियों का एक समूह तैयार करेगा जिनको कोर्ट द्वारा तलाक की अनुमति मिल गई है। शोधकर्ता इन तलाकशुदा व्यक्तियों से सौहार्द्रपूर्ण संबंध स्थापित कर तलाक से पूर्व के महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर लेखा-जोखा तैयार करेगा। बाद में शोधकर्ता इतिहास का विश्लेषण करेगा तथा तलाक से संबंधित कारणों का पता लगाएगा। इस प्रकार वह तलाक से संम्बंन्धित कुछ प्राक्कल्पना बना सकने में समर्थ हो पायेगा, जिसकी जांच फिर किसी अन्य विधि जैसे - प्रयोगात्मक विधि द्वारा कर सकता है।

व्यक्ति इतिहास लेखन विधि के प्रमुख गुण

i. जीवन के प्राप्त वास्तविक तथ्यों के आधार प्राप्त निष्कर्ष काफी विश्वसनीय होते हैं। इन तथ्यों से अवगत होने पर अनुसंधानकर्ता की संज्ञानात्मक क्षमता में वृद्धि होती है।
ii. इस विधि से प्राप्त तथ्य समाज मनोवैज्ञानिकों को शोध करने में मदद करता है।

व्यक्ति इतिहास लेखन विधि के प्रमुख दोष

i. प्रायः यह देखा गया है कि व्यक्ति अपने जीवन की घटनाओं के बारे में सही विवरण नहीं देता है। कुछ तथ्यों को वह छिपा लेता है तथा कुछ तथ्यों को बढ़ा-चढ़ा कर बता देता। अतः इन तथ्यों पर आधारित निष्कर्ष बहुत सत्य एवं वैध नहीं हो सकते।
ii. वर्केल तथा कूपर के अनुसार इस विधि का प्रयोग अन्य विधियों के समान (जैसे - प्रयोगात्मक विधि के समान) किसी प्राक्कल्पना की जांच करने में नहीं किया जा सकता है। इन्हीं लोगों के अनुसार हम लोग व्यक्ति इतिहास विधि का प्रयोग प्राक्कल्पनाओं को बनाने में करते हैं न कि जांच करने में करते हैं।

व्यक्ति इतिहास लेखन विधि में कुछ अवगुण होते हुए भी इस विधि की लोकप्रियता समाप्त नहीं हुई है। इसका प्रयोग समाज मनोवैज्ञानिकों तथा समाजशास्त्रियों द्वारा अभी भी किया जा रहा है।

3.6 समाजमितीय विधि (Sociometric Method)

यह विधि मोरेनो (Moreno 1934, 1943) द्वारा विकसित की गई है। इसका प्रतिपादन इनकी प्रसिद्ध पुस्तक Who Shall survive में किया गया था। ''यह एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा समूह में सदस्यों के बीच दूरी, स्वीकृति एवं विकर्षण का मापन करके सामाजिक प्रस्थिति, संरचना तथा विकास की जांच, वर्णन और मूल्यांकन किया जाता है।''- मोरेनो,1934.

"समूह के सदस्यों में अन्य सदस्यों के साथ होने या सहयोग करने के संम्बंध में उनकी वरीयताओं के बारे में भावनात्मक प्रदत्त प्राप्त करने की विधि को समाजमितीय अध्ययन कहा जाता है"।- सिकोर्ड एण्ड बेकमैन, 1974.

"समाजमिति एक विस्तृत पद है, जिससे समूह में व्यक्तियों के पसंद, संचार एवं अन्तःक्रिया पैटर्न से संबंधित आकड़ों को इकट्ठा करने एवं विश्लेषण करने से कई विधियां सम्मिलित होती हैं। कोई यह कह सकता है कि समाजमिति सामाजिक पसन्द के मापन एवं उसका एक अध्ययन है। इसे समूहों के सदस्यों के आकर्षण एवं विकर्षण को अध्ययन करने का भी एक साधन कहा गया है"। - कर्लिंगर

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सामाजमितीय विधि द्वारा सदस्यों के बीच पारस्परिक संबंधों का अध्ययन किया जाता है (Stanley and Hopkins, 1972)। इस विधि में समूह के सदस्य पारस्परिक आकर्षण या विकर्षण की अभिव्यक्ति करते हैं। इसमें समूह का प्रत्येक सदस्य कुछ निश्चित क्रियाओं या कार्यों में साथ रखने के लिए अन्य सदस्यों को नामित करता है (Lindzey and Borgatta, 1954) जैसे - सदस्यों से यह पूछा जाता है कि वे पिकनिक, सिनेमा या खेलकूद में किसका साथ चाहेंगे और किसका नहीं (Kerlinger, 1986)। जिस कार्य के लिए वरीयता माँगी जाती है उसे कसौटी (Criterion) कहते हैं। इस विधि का उपयोग अनेक रूपों में किया गया है। (Proctor and Loomis, 1951 and Jenkins,1948)

उदाहरण - कक्षा में छात्रों से पूछा जा सकता है कि आप उस छात्र का नाम दिए गये कागज के टुकड़े पर लिख दें जिसके साथ खेलना या खाना पसन्द करते हैं। उसी ढंग से कर्मचारियों के समूह में प्रत्येक सदस्य से यह पूछा जा सकता है कि अन्य तीन ऐसे कर्मचारियों का नाम दिये गए कागज के टुकड़े पर लिख दें जो आपकी नजर में अधिक प्रतिष्ठित हैं आदि। समूहों के प्रत्येक सदस्य अपनी पसन्द को दिए गये प्रश्न या कसौटी के आधार पर व्यक्त करता है और इस तरह से अध्ययनकर्ता को समूह के बारे में एक खास तरह के आँकड़े (Data) मिल जाते हैं। बाद में वह इन आँकड़ों का विश्लेषण कर समूह की संरचना तथा सदस्यों के पारस्परिक संबंधों के बारे में एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचता है।

समाजमितीय अध्ययन की प्रविधियाँ (**Procedure of Sociometric Study**) समाजमिति (Sociometry) विधि से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण की तीन प्रविधियाँ हैं-

a. समाजमितीय मैट्रिक्स (Sociometric matrix)
b. समाज आलेख (Sociogram)
c. समाजमितीय सूची (Sociometric index)

समाजमितीय मैट्रिक्स-(Sociometric matrix) - मैट्रिक्स संख्या के एक आयताकार प्रदर्शन को कहा जाता है। उदाहरणार्थ -

8x8 समाजमितीय मैट्रिक्स

चुनने वाले	पसन्द किए गये/चुने गये सदस्य							
	A	B	C	D	E	F	G	H
A	0	√	√	0	0	0	0	0
B	√	0	0	0	√	0	0	0
C	√	0	0	0	√	0	0	0
D	0	√	√	0	√	0	0	0
E	0	0	0	√	0	√	0	0
F	0	0	0	0	√	0	0	0
G	0	0	0	0	√	√	0	0
H	0	0	0	0	√	√	0	0
योग	2	2	2	1	5	2	0	0

i. 8 छात्रों का एक समूह है। इन छात्रों को क्रमशः A,B,C,D,E,F,G,H से दर्शा कर (8x8) की मैट्रिक्स उपरोक्तानुसार बनाई गई है।

ii. "तुम किन अन्य छात्रों के साथ खेलना पसन्द करोगे - कसौटी वाक्य है।

iii. प्रत्येक छात्र की पसन्द को मैट्रिक्स में (√) से दर्शाया गया है। । A ने B और C को पसन्द किया है। अन्य किसी को पसन्द नहीं किया है। इसी प्रकार B ने A तथा E को पसन्द किया है। अन्य किसी को पसंद नहीं किया है। मैट्रिक्स में इसी प्रकार अन्य छात्रों की पसंद को (√) दर्शाया गया है।

iv. मैट्रिक्स में प्रत्येक छात्र की पसन्द स्वयं वह छात्र कभी भी नहीं हो सकता। अर्थात्A की पसन्द Aनहीं, B की पसन्द B नहीं दर्शाया जा सकता है आदि।

v. मैट्रिक्स के योग (Row) में कालम E में सबसे अधिक अंक '5' तथा कालम G, H में सबसे कम अंक '0' प्राप्त हुआ है। इसका तात्पर्य यह है कि छात्र E को सबसे अधिक छात्र पसन्द करते हैं और छात्र G & H को कोई भी छात्र पसन्द नहीं करता है। अतः E को समूह का नायक कहा जायेगा । G & H को कोई वरीयता प्राप्त न होने के कारण बहिष्कृत छात्र कहा जायेगा।

vi. समूह में कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो तीन का एक समूह बना लेते हैं, जिसमें वे सभी एक दूसरे को पसन्द करते हैं, किसी अन्य को नहीं और न तो कोई दूसरा ही इन तीनों को पसन्द करता है। इस तरह के समूह को गुट (clique) कहा जाता है। मैट्रिक्स में A,B,C, ने एक गुट का निर्माण किया है।

vii. कुछ व्यक्ति समूह में दो-दो का एक समूह बना लेते हैं जिसमें सिर्फ वे ही दोनों एक दूसरे को पसन्द करते हैं। इस तरह के युग्म (Pair) को पारस्परिक युग्म कहा जाता है। तालिका में A तथा B, DE, EF, & FG पारस्परिक युग्म के उदाहरण हैं।

समूह में कुछ सदस्य ऐसे भी होते हैं जो किसी भी अन्य सदस्य को पसन्द नहीं करते हैं और न तो कोई दूसरा व्यक्ति ही इन्हें पसन्द करता है। इस तरह के सदस्य को अकेला सदस्य कहा जाता है। तालिका में G एक अकेला सदस्य का उदाहरण है।

समाज आलेख (Sociogram)

इस विधि में समूह के सदस्यों द्वारा एक दूसरे के प्रति किए गए पसदों को एक आलेख पर या सादे कागज पर चित्र बना कर दिखलाते हैं। पसन्दों को ठोस तीर रेखाओं से तथा नापसंदगी को खण्डित रेखाओं से दर्शाया जाता है। सदस्यों को उनके नाम या क्रमांक से वृत्त के भीतर किया जा सकता है।

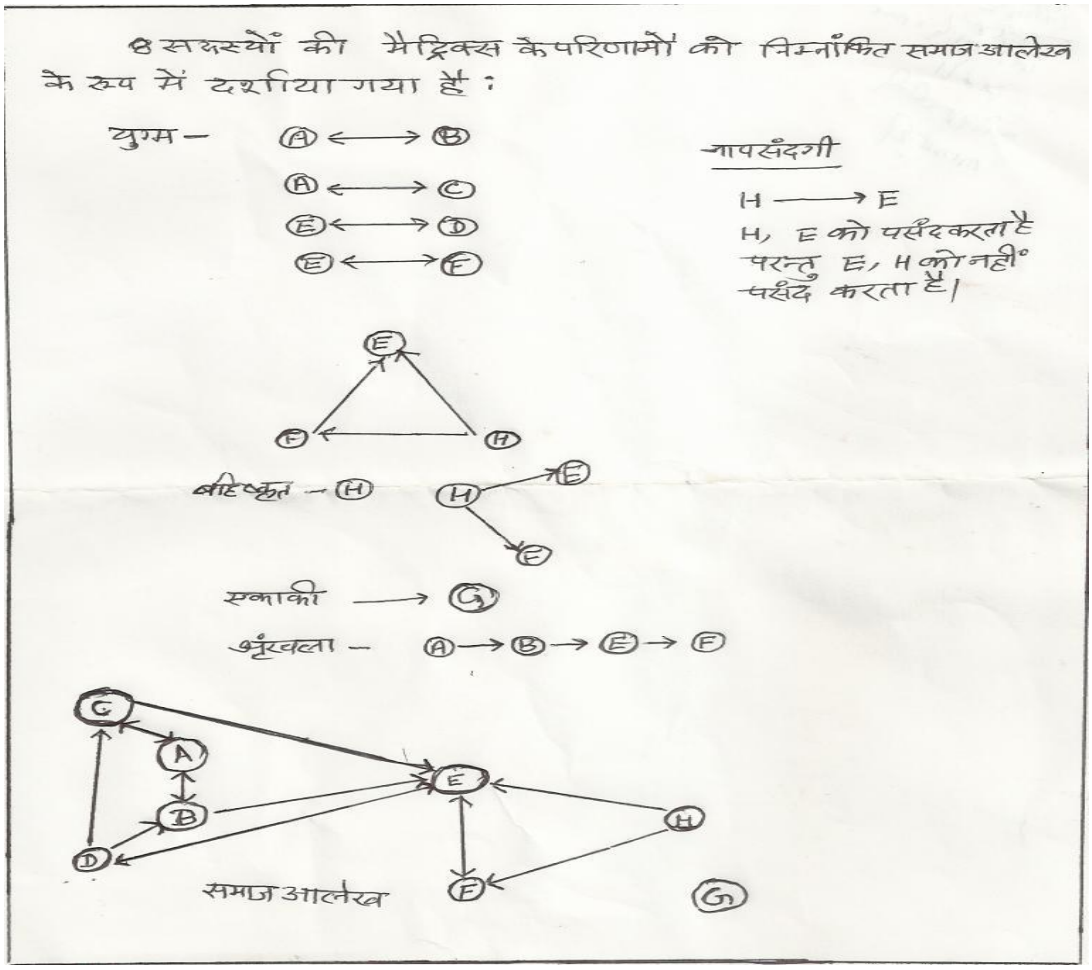

समाजमितीय सूचनांक (Sociometric Index)

समाजमितीय सूचनांक से सदस्यों के अन्तवैयक्तिक संबंधों का अन्दाज लगाया जा सकता है। सूचनांक विश्लेषण द्वारा समूह के सदस्यों के सामाजिक संबंधों का विस्तार तथा समूह की एकता के बारे में भावनात्मक परिणाम प्राप्त होते हैं (Proctor and Loomis, 1951)। सूचनांक विश्लेषण करने के लिए सदस्यों को वरीयता संख्या देने के लिए स्वतंत्र होना चाहिए। वरीयता की संख्या निश्चित नहीं की जानी चाहिए।

i. व्यक्ति का धनात्मक विस्तार (**Positive Expansiveness Person**) से पता चलता है कि समूह में किसी व्यक्ति का कितने लोगों से पारस्परिक संबंध है।

PEP= किसी सदस्य द्वारा दी गयी कुल वरीयता

$$\frac{\text{किसी सदस्य द्वारा दी गयी कुल वरीयता}}{\text{N-1}} = 2/8\text{-}1=2/7=.3 \text{ (A केलिए)}$$

ii. समूह विस्तार (**Group Expansiveness**) - समूह के सदस्य एक दूसरे को जितना अधिक पसन्द करते हैं, समूह का विस्तार (आपसी मेल जोल) उतना ही अधिक माना जाता है।

$$\text{GEV= सभी सदस्यों के वरीयताओं का योग} = \frac{14/8=1.75}{\text{N}}$$

iii. समूह सशक्तता = युग्मों की संख्या / युग्मों की वास्तविक संख्या

GC= युग्मों की संख्या / N(N-1/2=4/8(8-1)/2 =1/7=0.14

iv. समूह एकता =1/ एकाकी संख्या = 1/1=1

समाजमितीय विधि के गुण (Merits of Sociometric Method)

i. इससे सदस्यों के बीच संबंधों की जानकारी होती है।
ii. छोटे समूहों की रागात्मक संरचना ज्ञात करने की यह महत्वपूर्ण विधि है।
iii. इसके द्वारा अन्तवैयक्तिक के साथ-साथ विकर्षण का भी पता चलता है।
iv. इसका उपयोग अनेक रूपों में किया जाता है।
v. इसके द्वारा समूह सशक्तता, मनोबल, नेतृत्व एवं समूह की प्रभावशीलता इत्यादि का अध्ययन किया जा सकता है।
vi. यदि सदस्य परस्पर अच्छी तरह परिचित हैं तो समूह की आन्तरिक स्थिति के बारे में विश्वसनीय जानकारी अवश्य प्राप्त होती है।

समाजमितीय विधि के दोष (Demerits of Sociometric Method)

vii. इसके द्वारा केवल छोटे समूहों की संरचना का ही अध्ययन कर सकते हैं।

i. यदि सदस्य भलीभाँति परिचित नहीं हैं तो विश्वसनीय परिणाम प्राप्त नहीं होता है।
ii. यदि अध्ययन की पुनरावृत्ति की जाय तो परिणामों में अन्तर की संभावना रहती है। इससे विश्वसनीयता घटती है।
iii. इसके द्वारा समूह का सतही अध्ययन ही हो पाता है, गहन जानकारी नहीं मिल पाती है। क्योंकि सदस्य अपनी पसंदगी-नापसंदगी खुलकर व्यक्त नहीं करना चाहते हैं।

3.7 प्रयोगात्मक विधि (Experimental Method)

सामाजिक व्यवहार के अध्ययन में प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग किया जाता है। किसी नियंत्रित परिस्थिति में किया गया निरीक्षण प्रयोग कहलाता है। इस प्रकार यह एक वैज्ञानिक पद्वति है। इसे किसी समय दोहराया जा सकता है। इसमें कार्य कारण संबंधों की खोज भी जाती है। किसी कारण या चर में हेर फेर करने से उस सामाजिक व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन इस विधि द्वारा किया जाता है।

जिस चर में हेरफेर किया जाता है उसे स्वतंत्र चर कहते हैं तथा इस हेरफेर से प्रभावित होने वाले चर (मानव व्यवहार) को आश्रित चर कहते हैं। परिणाम की विश्वसनीयता के लिए स्वतंत्र चरों का यादृच्छिक प्रतिचयन आवश्यक होता है।

- "प्रयोग वैज्ञानिक जांच की एक विधि है जिसमें स्वतंत्र परिवर्त्य के प्रभाव संबंध की खोज की जाती है"।
  "Experiment is a method of scientific investigation that seeks to discover cause and effect relationships by introducing independent variables and observing their effects on dependent variables" - Rathus, 1984
- "नियंत्रित दशाओं में प्रेक्षण ही प्रयोग है"
  Experiment is observation under controlled conditions –गैरेट

उदाहरण- किसी विश्वसनीय व्यक्ति के प्रभाव से सहशिक्षा के प्रति, व्यक्तियों की मनोवृत्ति में परिवर्तन होता है या नहीं। इस अध्ययन के लिए प्रयोगकर्ता किसी विद्य़ालय के 30 छात्रों का यादृच्छिक रूप से चयन करता है। इन छात्रों में से यादृच्छिक रूप से चयन कर 15-15 छात्रों के दो समूह बनाता है। प्रथम समूह में प्रयोगकर्ता किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा सहशिक्षा से संबंधित सूचनाएं या भाषण दिलवाएगा जो उस समूह के लिए विश्वसनीय व्यक्ति हो। दूसरे समूह में प्रयोगकर्ता ठीक वही भाषण या सूचना ऐसे व्यक्ति द्वारा दिलवाता है जो समूह के लिए बिल्कुल ही विश्वसनीय नहीं हो। पहला समूह प्रयोगात्मक समूह तथा दूसरा नियंत्रित समूह कहलाता है। परीक्षण में पाया गया कि प्रयोगात्मक समूह (प्रथम समूह) के प्रयोज्यों की मनोवृत्ति में दूसरे समूह की अपेक्षा अधिक परिवर्तन हुआ है।

प्रयोग विधि के प्रकार (Types of Experimental Methods)

i. **प्रयोगशाला प्रयोग विधि (Laboratory Experiment Method)-** प्रयोगिक अध्ययन किसी प्रयोगशाला में होता है। इसमें प्रयोज्यों की एक सीमित संख्या का यादृच्छिक रूप से चयन कर उसे

आवश्यकतानुसार प्रयोगात्मक समूह एवं नियंत्रित समूह में बाँटकर प्रयोगशाला में प्रयोग करते हैं। इसे उद्दीपन-अनुक्रिया शोध भी कहते हैं। जैसे-जब बच्चों को आक्रमणशीलता का दृश्य (स्वतंत्र चर) दिखलाया जाता है तो इसे देखकर उनमें आक्रमणशीलता की वास्तविक स्तर (आश्रित चर) अधिक बढ़ जाती है। (Libert & Baron, 1972)। प्रयोगशाला विधि अधिक विश्वसनीय होती हैं। इसमें आन्तरिक वैधता तो होती है। परन्तु प्रयोज्यों की संख्या सीमित होने तथा कृत्रिमता के कारण वाह्य वैधता नहीं होती है। वाह्य वैधता से तात्पर्य प्राप्त परिणामों के जिन्दगी के वास्तविक हालातों तक सही- सही लागू करने से होता है।

ii. **क्षेत्र प्रयोग विधि (Field Experiment Method) -**इसका प्रयोग भी मनोवैज्ञानिकों द्वारा अधिक किया गया है। भीड़, क्रान्ति, राजनैतिक आन्दोलन कुछ ऐसी सामाजिक समस्यायें हैं जिनका अध्ययन प्रयोगशाला में नहीं किया जा सकता। इस प्रविधि में शोधकर्ता वास्तविक परिस्थिति में जिसे समाज मनोवैज्ञानिकों ने क्षेत्र (field) कहा है किया जाता है। स्वाभाविक परिस्थितियों में स्वतंत्र चर में जोड़ - तोड़ कर अश्रित चर पर प्रभाव को देखा जाता है। अतः प्रयोज्य को प्रयोग का पता न रहने के कारण वास्तविक अनुक्रिया करता है। इसमें वाह्य वैधता अधिक होती है। क्षेत्र में प्रयोग के समय पर्यावरणीय कारक जिन पर प्रयोगकर्ता नियंत्रण नहीं कर पाता है आश्रित चर को प्रभावित करते हैं। जैसे - बारात के बैंड बाजों से प्रयोज्यों का ध्यान बंट जाता है। कार्य की तरफ से ध्यान का बँटना का अर्थ है परिणाम का कुछ सीमा तक प्रभावित हो जाना। क्षेत्र में प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित समूह का ठीक ढंग से गठन नहीं हो पाता है। अतः क्षेत्र प्रयोग में परिणाम के सामान्यीकरण का गुण तो होता है, परन्तु उसमें यह गुण प्रायः वहिरंग चरों पर नियंत्रण की कुर्बानी की कीमत पर विकसित होता है।

iii. **स्वाभाविक प्रयोग विधि (Natural Experiment Method)-** मनोवैज्ञानिकों द्वारा इस विधि का उपयोग बहुत कम किया जाता है। ऐसे सामाजिक व्यवहारों का अध्ययन स्वाभाविक प्रयोग विधि से किया जाता है जिनमें स्वतंत्र चर में जोड़ - तोड़ प्रयोगशाला में संभव नहीं होता। इसमें नैतिकता अथवा कानूनी प्रतिबंध भी लगा रहता है। महामारी छुआछूत की बिमारियाँ, स्कूल या कालेज में असफलता, परिवार में किसी महत्वपूर्ण सदस्य की मृत्यु, बाढ़, भूकम्प आदि ऐसे कारक हैं जिनमें मानव व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों के अध्ययन के लिए प्रयोगकर्ता द्वारा उत्पन्न करना संभव नहीं होता है। यह प्राकृतिक कारण स्वतः उत्पन्न होने पर ही मानव व्यवहार पर पड़ने प्रभाव का अध्ययन करना संभव हो पाता है। इसे ही स्वभाविक प्रयोग विधि की संज्ञा दी जाती है। यह प्रयोग स्वाभाविक, या वास्तविक परिस्थिति में होता है। अतः वैधता बनी रहती है। किसी नियोजन या किसी विशेष नियंत्रण की आवश्यकता नहीं पड़ती है। प्राकृतिक घटनाओं को इन्तजार करना पड़ता है। अतः अनिश्चितता बनी रहती है। समय नष्ट होता है। प्रयोज्य कोई भी मिल जाता है। उसे ले लिया जाता है। इससे परिणाम दोषपूर्ण हो जाता है। गुण-दोष के होने के बावजूद भी सामाजिक मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला प्रयोग को सबसे अधिक पसन्द करते हैं। हाँ , जहाँ इस विधि का प्रयोग करने में पूरी असमर्थता उत्पन्न हो जाती है वहाँ वे क्षेत्र प्रयोग विधि का सहारा लेते हैं। जहाँ तक स्वाभाविक प्रयोग विधि का प्रश्न है, उसकी बारम्बारता इसमें व्याप्त कठिनाइयों के कारण काफी कम है।

अभ्यास प्रश्न

1. विज्ञान का शुभारम्भ_____से होता है।
2. प्रेक्षण विधि में कानों एवं वाणी की अपेक्षा_____का उपयोग किया जाता है।
3. अध्ययन की वह विधि जिसमें स्वतंत्र परिवर्त्य का प्रभाव अश्रित परिवर्त्य पर देखा जाता है उसे_____कहते हैं।
4. समस्या का तात्पर्य_____है।
5. किसी समस्या का प्रस्तावित हल_____को कहते हैं।
6. वस्तुएं जो अनेकानेक रूपों की मात्राओं में घटित होती हैं, उन्हें_____कहते हैं।
7. कारक या दशा जिसका प्रभाव ज्ञात करने के लिए उसे प्रहस्तित किया जाता है_____.कहते हैं।
8. समाजमितीय विधि को _____ने विकसित किया।
9. सर्वेक्षण एवं क्षेत्र अध्ययन विधियाँ_____हैं।

3.8 सारांश

- प्रेक्षण विधि में व्यक्यिों के व्यवहारों का प्रेक्षण प्रायः एक स्वाभाविक परिस्थिति में प्रेक्षक द्वारा किया जाता है। मनोवैज्ञानिक जब अध्ययन किए जाने वाले चर में जोड़-तोड़ नहीं कर पाते हैं तब इस विधि का सहारा लेते हैं। वैज्ञानिक सूचनाएं उत्पन्न करने की क्षमता के आधार पर प्रेक्षण को अक्रमबद्ध तथा क्रमबद्ध भागों में बाँटा गया। प्रेक्षक की भूमिका के आधार पर प्रेक्षण को सहभागी प्रेक्षण तथा असहभागी प्रेक्षण में बाँटा गया है।
- सर्वेविधि में शोधकर्ता एक प्रतिनिधि प्रतिदर्श लेकर किसी सामाजिक समस्या के प्रति व्यक्तियों की मनोवृत्ति, मत, विचार आदि का अध्ययन साक्षात्कार द्वारा या डाक प्रश्नावली द्वारा करता है। संगणना या याथार्थपूर्ण सर्वेक्षण तथा प्रतिदर्श सर्वेक्षण, सर्वे विधि के दो प्रकार हैं।
- व्यक्ति इतिहास लेखन विधि में अध्ययन किए जाने वाले सामाजिक व्यवहार से संबंधित व्यक्तियों के जीवन की घटनाओं का एक इतिहास तैयार किया जाता है, जिसका बाद में विश्लेषण करके एक निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है।
- समाजमितीय विधि मोरनो (Moreno 1934, 1943) द्वारा विकसित की गई है। इसका प्रतिपादन उसकी प्रसिद्व पुस्तक "Who Shall Survive" में किया गया है। समाजमितीय विधि का प्रयोग करके समाजमनोवैज्ञानिक समूह की संरचना, नेतृत्व तथा समूह में व्यक्तियों के दोस्ताना संबंधों का अध्ययन करते हैं। समाजमितीय मैट्रिक्स, समाज आलेख एवं समाजमितीय सूचनांक ये तीन समाजमितीय अध्ययन की प्रविधियां हैं।
- समाज मनोविज्ञान की अनेक विधियों में से प्रयोगात्मक विधि सबसे प्रमुख है। इस विधि में प्रयोगकर्ता कुछ चरों में जोड़-तोड़ करके उनके प्रभाव को दूसरे चर पर देखता है और फिर इन दोनों में कार्य-करण

संबंध स्थापित करता है। प्रयोगात्मक विधि के तीन प्रकार हैं- 1. प्रयोगशाला प्रयोगविधि 2. क्षेत्र प्रयोग विधि तथा 3. स्वाभाविक प्रयोग विधि।

3.9 शब्दावली

1. **रिकार्ड -** अभिलेख
2. **संग्रह -** एकत्रित करना
3. **परिवेश -** पर्यावरण
4. **प्रहस्तन -** जोड़-तोड़ परिवर्तन
5. **प्रदत्तों -** आकड़ों
6. **यथोचित -** ठीक
7. **पूर्व नियोजित -** पहले से निर्धारित
8. **सहभागी -** साथ - साथ कार्य करना
9. **सोपान -** चरण
10. **विकर्षण -** दूर हटना

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. समाधान का अभाव
2. परिकल्पना/उपकल्पना
3. प्रायोगिक विधि
4. समाधान क अभाव
5. परिकल्पना/उपकल्पना
6. परिवर्त्य
7. स्वतंत्र परिवर्त्य
8. मोरनो
9. समान नहीं

3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, आर0एन0 (2007-2008) आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा-7
2. सिंह, आर0एन0 (2005) आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
3. सिंह, ए0के0 (2002) समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसीदास, दिल्ली-1
4. सिंह, ए0के0 (2002) उच्चतर समाज मनोविज्ञान, मोती लाल बनारसीदास, दिल्ली-1
5. श्रीवास्तव, डी0एन0 एवं अन्य (2000-2001) आधुनिक समाज मनोविज्ञान, एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
6. श्रीवास्तव, डी0एन0 (दसवाँ संस्करण) सामाजिक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
7. त्रिपाठी, आर0बी0 (2002) व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, गंगासरन एण्डसन्स, बाँससफाटक, वाराणसी।

3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रेक्षण विधि का वर्णन करते हुए सहभागी तथा असहभागी प्रेक्षण में अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
2. सर्वेक्षण विधि के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए उसका मूल्यांकन कीजिए।
3. व्यक्ति इतिहास लेखन विधि क्या है? इसके गुण-दोष का वर्णन करें।
4. समाजमितीय विधि का आशय तथा उपयोगिता स्पष्ट कीजिए।
5. प्रयोगशालागत प्रयोग विधि से क्या तात्पर्य है ? उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।
6. निम्नलिखित में से किसी दो पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-
   a. सहभागी तथा असहभागी प्रेक्षण में अन्तर।
   b. क्रमबद्व प्रेक्षण एवं अक्रमबद्व प्रेक्षण में अन्तर ।
   c. सर्वेक्षण विधि
   d. समाजमितीय मैट्रिक्स
   e. प्रयोग विधि के प्रकार

इकाई 4 - अभिवृत्ति का अर्थ और विशेषताएँ, अभिवृत्ति का निर्माण एवं परिवर्तन

(Meaning and Characteristics off Attitude, Formation and Change of Attitude)

इकाई संरचना-

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 अभिवृत्ति का अर्थ एवं परिभाषाएँ
4.4 अभिवृत्ति की विशेषताएँ
4.5 अभिवृत्ति का निर्माण
4.6 अभिवृत्ति में परिवर्तन
4.7 साराशं
4.8 परिभाषिक शब्दावली
4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.11 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

सामाजिक अभिवृत्तियों की गणना समाज मनोविज्ञान के बहुत ही महत्वपूर्ण सम्प्रत्ययों में की जाती है। एक समय था जब कुछ मनोवैज्ञानिक समाज मनोविज्ञान एंव अभिवृत्ति के अध्ययन को एक जैसा मानते थे। परन्तु सन् 1940 के आते-आते इस दृष्टिकोण को परिवर्तन आया और सन् 1950 तक समूह गतिकी पर सामाजिक मनोवैज्ञानिक का ध्यान केन्द्रित हो गया। यह प्रभाव भी 1960-70 के दशक में कम हो गया और एक बार पुनः अभिवृत्ति पर होने वाले अध्ययनों की संख्या बढ़ने लगी और तब से लेकर अभी तक यह सम्प्रत्यय मनोविज्ञान में एक महत्वपूर्ण सम्प्रत्यय बना हुआ है। ऐसा इसलिए हैं क्योंकि मानव जीवन में इसका प्रभाव सर्वत्र दिखाई पड़ता है। किसी भी वस्तु, व्यक्ति या विचार के प्रति हमारा व्यवहार कैसा होगा। यह हमारी अभिवृत्तियों पर निर्भर करता है। यही कारण है। कि समाज मनोविज्ञान में अभिवृत्तियों पर व्यापक स्तर पर सैद्धान्तिक एंव आनुभविक कार्य हुए है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त -

1. अभिवृत्ति का अर्थ क्या है।
2. अभिवृत्ति की कौन-कौन सी विशेषताएँ है।

3. अभिवृत्ति के निर्माण में कौन से कारक सहायक है।
4. अभिवृत्ति परिवर्तन कितने प्रकार से होता है तथा किन कारणों द्वारा अभिवृत्ति में परिवर्तन होता है।

4.3 अभिवृत्ति का अर्थ अभिवृत्ति का अर्थ एवं परिभाषाएँ

अभिवृत्ति शब्द की उत्पत्ति "Aptus" शब्द से हुई है। Aptus शब्द लैटिन भाषा का शब्द है। जिसका अर्थ योग्यता या सुविधा है। अभिवृत्ति को प्रत्यक्ष रूप से देखा नहीं जा सकता है। लेकिन इसके प्रभावों को अनुभव किया जा सकता है। अभिवृत्ति का सम्बन्ध अनुभव और व्यवहार के सगंठन से है। अभिवृत्ति एक ऐसा शब्द है जिसका प्रयोग हम दिन प्रतिदिन की जिन्दगी में हमेशा करते हैं। साधारण अर्थ में अभिवृत्ति व्यक्ति में मन की एक विशिष्ट दशा होती है। जिसके द्वारा वह समाज की परिस्थितियों, वस्तुओं, व्यक्तियों, आदि के प्रति अपने विचार या मनोभाव को प्रकट करता है। जैसे माता-पिता अपनी सयानी बेटी के बारे में एक निश्चित मनोभाव रखते है। उसी तरह से विधवा विवाह तथा बाल विवाह के प्रति भी लोग एक खास मनोभाव रखते है।

- आइजेन्क (Eysenck 1972)- के अनुसार "सामान्यतः अभिवृत्ति की परिभाषा किसी वस्तु या समूह के सम्बन्ध में प्रत्यक्षात्मक बाह्य उत्तेजनाओं की उपस्थिति में व्यक्ति की स्थिति और प्रत्युत्तर तत्परता के रूप् में की जाती है।"
- फिशबीन तथा आजेन(Fishbein&Ajzen]1975) के अनुसार "किसी वस्तु के प्रति संगत रूप से अनुकूल या प्रतिकूल ढंग से अनुक्रिया करने की अर्जित पूर्वप्रवृत्ति को मनोवृत्ति कहते हैं।"
- सिकार्ड एंव बैकमैन (Secord and Backman 1974)- के अनुसार-"अपने परिवेश के कुछ तत्वों के प्रति व्यक्ति के नियमित भाव, विचार एंव कार्य करने की पूर्ववृत्ति को अभिवत्ति कहते हैं।"
- मायर्स (Myers 1988) के अनुसार- "अभिवृत्ति का आशय किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति की जाने वाली उस विद्येयात्मक या निषेधात्मक मूल्यांकनपरक प्रतिक्रिया से है। जिसका प्रदर्शन व्यक्ति के विश्वासों, भावों या निर्दिष्ट व्यवहार के माध्यम से होता है।"

समाज मनोविज्ञानिकों ने अभिवृत्ति को परिभाषित करने के लिए तीन दृष्टिकोणों को अपनाया है-

i. **एक विमीय दृष्टिकोण(One Dimensioned Approach) -**इस दृष्टिकोण के अनुसार अभिवृत्ति एक सीखी गयी प्रवृत्ति है जिसके कारण किसी वस्तु, घटना, व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल ढंग से व्यवहार करता है।
ii. **द्वि-विमीय दृष्टिकोण (Two Dimensioned Approach)-** इस दृष्टिकोण के अनुसार अभिवृत्ति की व्याख्या करने के लिए दो विमाओं (Dimensions) का सहारा लिया जाता है- भावात्मक संघटक (Affective Component) तथा संज्ञानात्मक संधटक (Cognitive Component) संज्ञानात्मक संघटक से तात्पर्य किसी घटना का वस्तु के सम्बन्ध में व्यक्ति के विश्वास से होता है। भावात्मक संघटक से तात्पर्य किसी वस्तु घटना या व्यक्ति के प्रतिसुखद या दुखद भाव की तीव्रता से होता है। सुखद भाव के होने पर व्यक्ति, वस्तु या घटना को पसन्द करता है और दुखद भाव के होने पर उसे नापसन्द करता हैं।

iii. **त्रिविमीय दृष्टिकोण (Three Dimensional Approach)-** इस दृष्टिकोण के अनुसार अभिवृत्ति में पहले से चले आ रहे दो संघटकों में एक तीसरे संघटक अर्थात व्यवहारात्मक संघटक (Behavioral) को जोड़ने की व्याख्या की गयी है। इन लोगों का विचार है कि अभिवृत्ति संज्ञानात्मक संघटक, भावात्मक संघटक तथा व्यवहारात्मक संघटक का एक संगठित तंत्र है। इसे आधुनिक समाज मनोवैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों ने मनोवृत्ति का ABC माना है। यहाँ A से भावात्मक सघंटक (Affective Component½ B से व्यवहारात्मक संघटक (Behavioral Component), तथा C से संज्ञानात्मक संघटक (Cognitive Component), का बोध होता है।

क्रेच, क्रेचफिल्ड तथा बैलेची (Kretch Crutchfield &Ballachy 1982) के अनुसार किसी एक वस्तु के सम्बन्ध में तीन संघटकों का स्थायी तत्रं अभिवृत्ति कहलाता है- संज्ञानात्मक संघटक यानि वस्तु के बारे में विश्वास, भावात्मक संघटक यानि वस्तु से सम्बन्धित भाव तथा व्यवहारात्मक संघटक यानि उस वस्तु के प्रति क्रिया करने की तत्परता। सामान्यतया यह कहा जा सकता है कि किसी उद्दीपक के साथ हमारे अनुभव बारम्बार होते हैं तो इस उन उद्धीपकों के प्रति जो भाव, संज्ञान तथा व्यवहारात्मक प्रवृत्तियाँ निर्मित करते हैं वे परस्पर सगंत होती हैं तथा इन तीनों के आधार पर अभिवृत्ति बनती है।

4.4 अभिवृत्ति की विशेषताएँ

- **अभिवृत्ति जन्मजात नहीं होती-** अभिवृत्तियों को किसी घटना, वस्तु, व्यक्ति या समूह आदि के सम्बन्ध में सीखा जाता है। भोजन करना व्यक्ति सीखता है। भोजन के सम्बन्ध में व्यक्तियों की अभिवृत्तियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। अभिवृत्तियों के सीखने में व्यक्ति का ज्ञान, अनुभव और प्रत्यक्षात्मक योग्यताऐं सहायक हैं।
- **अभिवृत्ति अपेक्षाकृत स्थायी होती है-** व्यक्ति सामाजिक प्राणी के रूप में विभिन्न अभिवृत्तियाँ सीखता है और समय-समय पर आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन भी करता रहता है। जब व्यक्ति अपना पर्यावरण औरसमाज छोड़कर दूसरे समाज और पर्यावरण में चला जाता है तो उसकी अभिवृत्ति भी नये समाज और पर्यावरण के अनुसार बदल सकती है। अभिवृत्तियों मे निरन्तरता और स्थिरता का गुण तो अवश्य होता है,परन्तु पुनर्संगठन होने पर अभिवृत्तियाँ बदल जाती है। यह पुनर्संगठन तभी होता है जब व्यक्ति दूसरे लगभग स्थाई वातावरण और समाज में आता है।
- **अभिवृत्तियाँ व्यवहार को दिशा प्रदान करती हैं-** अभिवृत्तियाँ मानव व्यवहार को प्रभावित ही नहीं करती अपितु उसे एक दिशा भी प्रदान करती हैं। व्यक्तियों में आकर्षण-विकर्षण, घृणा-प्रेम, रूचि-अरूचि, पक्ष-विपक्ष आदि का मूल कारण हमारी अभिवृत्तियॉ ही हैं। एक व्यक्ति की अभिवृत्तियों का ज्ञान हो जाने पर उसके व्यवहार को अपेक्षाकृत सरलता से समझा जा सकता है। अभिवृत्तियों का ज्ञान प्राप्त हो जाने पर व्यक्ति के भविष्य व्यवहार के सम्बन्ध में पूर्व कथन कर सकते हैं, क्योंकि प्रायः व्यक्ति अभिवृत्तियों के निर्देशन में ही कार्य करता है।

- **अभिव्यक्ति का सम्बन्ध हमेशा किसी विषय घटना या विचार आदि से होता है-** अभिवृत्ति की उत्पत्ति होने के लिए कोई न कोई विषय, घटना या विचार का होना अनिवार्य है। जैसे व्यक्ति सती प्रथा, विधवा विवाह, बाल विवाह, अर्न्तजातीय विवाह, भारत-चीन सम्बन्ध आदि के बारे में एक प्रतिकूल या अनुकूल अभिवृत्ति विकसित कर सकता है क्योंकि ये सभी विषय एवं घटनाऐं महत्वपूर्ण हैं।
- **अभिवृत्ति में प्रेरणात्मक गुण होता है-** अभिवृत्ति व्यक्ति को किसी विशेष व्यक्ति, वस्तु, घटना अथवा परिस्थिति आदि के सम्बन्ध में एक विशेष प्रकार के क्रिया करने के लिए प्रेरित कर सकती है।
- **अभिवृत्तियाँ संवेगों और अनुभूतियों से सम्बन्धित होती है-**वस्तु या परिस्थिति के सम्बन्ध में भिन्न अभिवृत्तियों के कारण जब वाद-विवाद होता है तो ऐसी अभिवृत्तियों का सम्बन्ध अनुभूतियों और संवेगों से होता है।

4.5 अभिवृत्ति का निर्माण

अभिवृत्तियों का निर्माण आवश्यकताओं की सन्तुष्टि की प्रक्रिया के सन्दर्भ में होता है। व्यक्ति का समूह सम्बन्ध उसकी अभिवृत्तियों के निर्माण में अधिक महत्वपूर्ण होता है। निम्नलिखित कारक अभिवृत्ति कि निर्माण में सहायक होते हैं-

i. **आवश्यकता पूर्ति-** अभिवृत्ति का निर्माण व्यक्ति की आवश्यकताओं की सन्तुष्टि पर निर्भर करता है। बहुधा यह देखा गया है कि व्यक्ति की जिन आवश्कताओं की सन्तुष्टि होती है उसके प्रति उसमें धनात्मक अभिवृत्ति का निर्माण होता है। परन्तु जिन आवश्यकताओं की सन्तुष्टि नहीं हो पाती है उनके प्रति व्यक्ति में निषेधात्मक अभिवृत्ति का विकास होता है। इसी प्रकार के लक्ष्य प्राप्ति में सहायक व्यक्तियों के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति तथा बाधक व्यक्तियों के प्रति निषेधात्मक अभिवृत्ति का विकास होता है। M-B- Smith] J-S-Bruner] R-W-White(1956) ने अपने अध्ययन में देखा कि व्यक्ति की आवश्यकताएँ, रूचियाँ तथा आकाक्षाएं भी अभिवृत्तियों को सार्थक एवं महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती हैं।

ii. **दी गयी सूचनाएँ-** आधुनिक समाज में भिन्न-भिन्न माध्यमों से व्यक्ति को सूचनाएँ दी जाती हैं। हम माध्यमों में रेडियों, टेलीविजन, अखबार, पत्रिकाएँ आदि प्रधान हैं। इन माध्यमों से ही गयी सूचनाओं के अनुसार व्यक्ति अपनी मनोवृत्ति विकसित करता है। इन माध्यमों के अलावा अन्य माध्यमों से भी व्यक्ति को सूचनाएँ मिलती हैं। और इनके अनुसार व्यक्ति अपनी मनोवृत्ति विकसित करता है। जैसे-माता-पिता, भाई बहनों, साथियों एवं पड़ोसियों से भी व्यक्तियों को सूचनाएँ मिलती हैं और इसके अनुसार व्यक्ति अभिवृत्ति का विकास करता है।

iii. **सामाजिक सीखना-** जिस तरह व्यवहार के भिन्न-भिन्न रूपों को व्यक्ति सीखता है। ठीक उसी तरह अभिवृत्ति के विकास में भी सीखने की प्रक्रिया महत्वपूर्ण होती है। समाज मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि अभिवृत्ति कि निर्माण में सीखने की तीन तरह की प्रक्रियाओं का महत्वपूर्ण स्थान है- क्लासिकी अनुकूलन, साधनात्मक अनुकूलन तथा प्रेक्षणात्मक सीखना।

- **क्लासिकी अनुकूलन (Classical Conditioning)** -इस सिद्धान्त के अनुसार जब कोई तटस्थ उद्दीपन को अनुक्रिया उत्पन्न करने वाले उद्दीपन के साथ बार-बार उपस्थित किया जाता है। तो वैसी परिस्थिति में कुछ समय बाद तटस्थ उद्दीपन में भी उसी तरह की अनुक्रिया करने की क्षमता उत्पन्न हो जाती है लोर्ह तथा स्टाटॅस (Lohr & Staats1973) द्वारा किए गए अध्ययनों से स्पष्ट हो गया है कि क्लासिकी अनुकूलन द्वारा किसी खास भाषा या संस्कृति के लोगों में ही नही बल्कि सभी भाषा-भाषी या संस्कृति में पले व्यक्तियों में इस नियम द्वारा अभिवृत्ति का विकास होता है।
- **साधनात्मक अनुकूलन (Instrumental Conditioning) -** साधनात्मक अनुकूलन का नियम इस बात पर बल डालता है जिस अनुक्रिया के करने से व्यक्ति को पुरस्कार मिलता है। उसे वह सीख लेता है। तथा जिस अनुक्रिया को करने से उसे दण्ड मिलता है उसे वह दोहराना नहीं चाहता है। बच्चों में ठीक वैसी अभिवृत्ति बहुत जल्दी विकसित होती है जैसी उनके माता-पिता की होती है। माता-पिता बच्चों को समान अभिवृत्ति दिखलाने पर पुरस्कार देते हैं। तथा विपरीत अभिवृत्ति दिखलाने पर डॉट फटकार देते हैं। फलस्वरूप वे इस तरह विपरीत अभिवृत्ति नहीं विकसित कर पाते हैं।
- **प्रेक्षणात्मक सीखना-** इस नियम के अनुसार मानव दूसरे की क्रियाओं को एवं उसके परिणामों को देखकर नयी अनुक्रिया करना सीख लेता है। इस नियम के प्रमुख प्रवर्तक बैण्डुरा हैं। समाज मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि प्रेक्षणात्मक सीखना द्वारा बच्चे प्रायः वैसी अभिवृत्ति को भी अपने में विकसित कर लेते हैं जिन्हें उनके माता-पिता स्वयं सीखने के लिए प्रोत्साहित नहीं करते हैं। बच्चे वैसी अभिवृत्ति जल्दी विकसित कर लेते हैं, जिसे वे स्वयं अपने सामने होता देखते हैं।

iv. **समूह सम्बंधन**- समूह सम्बंधन से तात्पर्य व्यक्ति का किसी खास समूह से सम्बन्ध कायम करने से होता है। यह निश्चित है कि जब व्यक्ति अपना सम्बन्ध किसी खास समूह से जोड़ता है तो वह उस समूह के मूल्यों, मानदण्डों, विश्वासों, तौर-तरीकों को भी स्वीकार करता है। ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति इन मूल्यों एव मानदण्डों के स्वरूप के अनुसार अपने में एक नयी अभिवृत्ति विकसित करता है। समाज मनोवैज्ञानिकों ने दो प्रकार के समूह सम्बन्धन का अभिवृत्ति विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया है-

a. **प्राथमिक समूह (Primary Group)-** प्राथमिक समूह वैसे समूह को कहा जाता है जिसमें सदस्यों की संख्या कम होती है तथा जिसमें सदस्यों में घनिष्ठ एंव आमने-सामने का सम्बन्ध होता है। जैसे परिवार, खिलाड़ियों का समूह। प्राथमिक समूह के सदस्यों में अधिक सहयोग, भाईचारा एवं सहानुभूति का गुण पाया जाता हैं। अतः इसका एक सदस्य ठीक वैसी ही अभिवृत्ति विकसित करता है जैसा कि अन्य सदस्यों की होती है। बच्चा जब जन्म लेता है तो उस समय उसका मस्तिष्क एक कोरा कागज होता है। परिवार के अन्य सदस्यों विशेषकर अपने माता-पिता के व्यवहारों एवं अनके साथ हुई अन्तः क्रियाओं से उत्पन्न अनुभवों के अनुसार वह एक खास मनोवृत्ति विकसित करता है।

b. **सन्दर्भ समूह (Reference Group)-** सन्दर्भ समूह से तात्पर्य वैसे समूह से होता है जिसके साथ व्यक्ति आत्मीकरण कर लेता है। चाहे वह समूह का सदस्य औपचारिक रूप से हो या न हो। प्रायः सन्दर्भ समूह व्यवहार एवं चरित्र में ठीक वैसा ही परिवर्तन लाता है जैसा कि इन लक्ष्यों एवं मूल्यों से अपेक्षित है। सन्दर्भ समूह का प्रभाव अभिवृत्ति के निर्माण में काफी अधिक होता है। उदाहरणार्थ जब एक मध्यवर्गीय परिवार का व्यक्ति उच्च वर्गीय परिवार को अपना सन्दर्भ समूह मानता है तो स्वभावतः अपनी अभिवृत्ति में परिर्वतन करके वह एक ऐसी अभिवृत्ति विकसित करेगा जो उच्च वर्गीय परिवार के सदस्यों की अभिवृत्ति के अनुकूल हो जाती है।

v. **सांस्कृतिक कारक (Cultural factors)-**अभिवृत्ति के निर्माण में सांस्कृतिक कारकों का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रत्येक संस्कृति का अपना मानदण्ड, मूल्य, परम्पराएँ, धर्म आदि होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का पालन-पोषण किसी न किसी संस्कृति में होता है। फलस्वरूप उसका सामाजीकरण इन्हीं सांस्कृतिक कारकों द्वारा अधिक प्रभावित होता है। व्यक्ति अपनी अभिवृत्ति इन्हीं सांस्कृतिक प्रारूप के अनुसार विकसित करता है एक समाज की संस्कृति दूसरे समाज की संस्कृति से भिन्न होती हैं। इसी सांस्कृतिक भिन्नता के कारण भिन्न-भिन्न संस्कृति के व्यक्तियों की अभिवृत्ति में भिन्नता पायी जाती है। परन्तु एक ही संस्कृति के सभी लोगों की अभिवृत्ति करीब-करीब एक समान होती है। जैसा कि मुस्लिम संस्कृति तथा हिन्दू संस्कृति की तुलना करने पर हमें मिलता है। मुस्लिम संस्कृति में पले व्यक्तियों की अभिवृत्ति मौसेरे व चचेरे भाई-बहनों से शादी के प्रति अनुकूल होती है परन्तु हिन्दू संस्कृति में पले व्यक्तियों की अभिवृत्ति इस तरह की शादी के प्रति प्रतिकूल होती है।

vi. **व्यक्तित्व कारक (Personality Factors)-** व्यक्ति उन अभिवृत्तियों को जल्दी सीख लेता है जो इसके व्यक्तित्व के शीलगुणों के अनुकूल होती है। समाज मनोवैज्ञानिकों ने भिन्न-भिन्न तरह की अभिवृत्तियों जैसे धार्मिक अभिवृत्ति, राजनैतिक अभिवृत्ति, संजातिकेन्द्रवाद (Ethnocentrisms) में व्यक्तित्व कारकों के महत्व का अध्ययन किया है। फ्रेंच (French] 1947½) ने अपने अध्ययन में धार्मिक अभिवृत्ति के विकास में व्यक्तित्व कारकों के महत्व का अध्ययन किया है। इन्होंने अपने अध्ययन में पाया है कि अधिक संगठित धार्मिक अभिवृत्ति रखने वाले व्यक्तियों ने अपने व्यक्तित्व के गुण एवं दोषों को चेतन रूप से स्वीकार कर लिया जबकि कम संगठित अभिवृत्ति रखने वाले व्यक्ति अपने व्यक्तित्व से सम्बन्धित ऐसे तथ्यों को खुलकर स्वीकार नहीं किया करते। अतः ऐसे लोगों में दमन करने की प्रवृत्ति अधिक थी।

vii. मैकलोस्काई (Mc- Closky] 1958) ने राजनीति में व्यक्तित्व कारकों के महत्व को दिखलाया है। उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि कम पढ़े लिखे तथा मन्द बुद्धि के लोगों में अनुदार अभिवृत्ति अधिक पायी जाती है। इन्होंने अपने अध्ययन के आधार पर यह भी बतलाया है कि अधिक अनुदार अभिवृत्ति रखने वाले व्यक्ति अधिक शक्की, झगड़ालू, अपनी कमजोरी या गलती के लिए दूसरों पर दोष लगाने वाले, वैरपूर्ण, आक्रामक आदि होते हैं।

viii. संजातिकेन्द्रवाद एक ऐसी अभिवृत्ति है जिसमें व्यक्ति अपने समूह या वर्ग को अन्य सभी समूह या वर्ग को अन्य सभी समूहों या वर्गों की तुलना में श्रेष्ठ समझता है। एडोरनो तथा उनके सहयोगियों (Adorno

et al, 1950) ने अध्ययन में संजातिकेन्द्रवाद को मापने के लिए मापनी बनायी जिसे एफ-स्केल (F-scale) कहा गया।

ix. **रूढ़ियुक्तियाँ (Stereotype)-**प्रत्येक समाज में कुछ रूढ़ियुक्तियाँ होती हैं, जिनसे व्यक्ति की अभिवृत्ति का विकास प्रभावित होता है। रूढ़ियुक्तियों से तात्पर्य किसी वर्ग या समुदाय के लोगों के बारे में स्थापित सामान्य प्रत्याशाओं तथा सामान्यीकरण से होता है। जैसे हमारे समाज में महिलाओं के प्रति एक रूढ़ियुक्ति है कि वे पुरूषों की अपेक्षा अधिक परामर्शग्राही होती हैं। फलस्वरूप महिलाओं के प्रति एक विशेष प्रकार की अभिवृत्ति सामान्य लोगों में पायी जाती है। उसी तरह से हिन्दू समाज में एक महत्वपूर्ण रूढ़ियुक्ति है कि गाय हमारी माता है परन्तु मुस्लिम समुदाय में इस प्रकार की रूढ़ियुक्ति नहीं पायी जाती है फलस्वरूप गाय के प्रति हिन्दुओं की अभिवृत्ति मुस्लिम की अपेक्षा अधिक अनुकूल होती है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि रूढ़ियुक्तियों द्वारा व्यक्ति की अभिवृत्ति का निर्माण होता है।

x. **प्रत्यक्षात्मक कारक (Perceptual Factors)-** अभिवृत्तियों के निर्माण में प्रत्यक्षीकरण कारक भी महत्वपूर्ण है। यह सत्य है कि "जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरति देखी तिन जैसी" अर्थात व्यक्ति जैसी उत्तेजनाओं का प्रत्यक्षीकरण करेगा उसी प्रकार से उस व्यक्ति की अभिवृत्तियों का निर्माण होगा। व्यक्ति का प्रत्यक्षीकरण जितना ही शुद्व व स्पष्ट होगा अभिवृत्तियाँ भी उतनी ही अधिक स्पष्ट और स्वस्थ बनेंगी ।

4.6 अभिवृत्ति में परिवर्तन (Change in Attitude)

अभिवृत्ति एक प्रवृत्ति है। जो समय-समय पर उसके निर्माण एवं संपोषित करने वाले कारकों में परिवर्तन होने पर परिवर्तित होती रहती है। किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति आज आपकी अभिवृत्ति बदलकर अनुकूल हो जाय ऐसा नहीं हो सकता है। परन्तु इतना तो ज्ञातत्य है कि परिस्थिति में परिवर्तन होने से व्यक्ति की अभिवृत्ति में परिवर्तन होता है। समाज मनोवैज्ञानिकों के अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि अभिवृत्ति में परिवर्तन दो प्रकार से होते हैं-

i. **सगंत परिवर्तन (Congruent Change)-**किसी एक व्यक्ति की अभिवृत्ति किसी व्यक्ति या घटना के प्रति अनुकूल से परिवर्तित होकर और अधिक अनुकूल हो सकती है। उसी तरह से उसकी अभिवृत्ति प्रतिकूल से बदल कर और अधिक प्रतिकूल भी हो सकती है। ऐसे परिवर्तन को सगंत परिवर्तन कहते हैं।

ii. **असंगत परिवर्तन (Incongruent Change)-** असगंत परिवर्तन वैसे परिवर्तन को कहा जाता है जिसमें अभिवृत्ति अनुकूल से बदलकर प्रतिकूल या प्रतिकूल से बदलकर अनुकूल हो जाती है। यानि असगंत परिवर्तन में अभिवृत्ति की दिशा बदल जाती है।

मूसेन (Mussen 1956) के अध्ययनों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि व्यक्तित्व सम्बन्धी कारक अभिवृत्ति परिवर्तन को प्रभावित करते हैं। अभिवृत्ति परिवर्तन इस बात पर निर्भर करता है कि समूह में उस अभिवृत्ति विशेष की क्या स्थिति है।

समाज मनोवैज्ञानिकों तथा समाजशात्रियों द्वारा किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि अभिवृत्ति परिवर्तन कई कारकों द्वारा प्रभावित होता है-

- **जनमाध्यम एवं सम्प्रेषण (Mass Media and Communication)-** पत्र पत्रिकाएँ, समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन आदि कुछ प्रचलित जनमाध्यम और सम्प्रेषण के साधन हैं। इन साधनों द्वारा किसी देश के अधिकांश व्यक्तियों तक सूचना पहुँचायी जा सकती है। और इन साधनों द्वारा बार-बार सूचना देकर उनकी अभिवृत्ति में परिवर्तन किया जा सकता है। जैसे सरकार परिवार नियोजन की योजना चला रही है, जन्म नियन्त्रण (Birth Control)का प्रचार कर रही है। इस प्रकार के प्रचार और सम्प्रेषण का प्रभाव यह पड़ रहा है कि लोगों की इस सम्बन्ध में अभिवृत्ति परिवर्तित हो गई है और जन्म नियन्त्रण उचित माना जाने लगा है।

शैरिफ तथा शैरिफ (1951) का कहना है कि आज के अत्यधिक जटिल समाजों में व्यक्ति और समूह दोनों ही सम्प्रेषण की विभिन्न विधियों द्वारा अपनी अभिवृत्तियों का निर्माण करने का प्रयत्न करते हैं। समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तकें, रेडियो और टेलीविजन लोगों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। होभलैण्ड और विश (Hovland&Weiss,1952) ने अपने एक अध्ययन में देखा कि अभिवृत्ति परिवर्तन का सम्प्रेषण का प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि सम्प्रेषणकर्त्ता की क्या स्थिति और महत्व है। सम्प्रेषणकर्त्ता की स्थिति और महत्व जितना ही अधिक होगा, अभिवृत्ति परिवर्तन उतना ही अधिक प्रभावित होगा।

- **सम्पर्क (Contact)-** पारिस्परिक सम्पर्क के द्वारा भी अभिवृत्तियाँ परिवर्तित हो जाती हैं। जब व्यक्ति एक-दूसरे के सम्पर्क में आते हैं। और साथ-साथ उठने-बैठने, खाने-पीने और रहने का अवसर मिलता है तो ऐसे सम्पर्क से भी अभिवृत्तियाँ परिवर्तित हो जाया करती हैं। गटमैन (Guttman]1951) ने अपने एक अध्ययन में देखा कि विश्वविधालय के जिन छात्रों में सम्पर्क बहुत अधिक था, उनकी अभिवृत्ति की आवृत्ति 63 थी, दूसरी ओर जिन छात्रों में सम्पर्क बहुत कम था, उनकी अभिवृत्ति की आवृत्ति 40 थी। इससे स्पष्ट है, कि सम्पर्क के कारण अभिवृत्तियों में परिवर्तन होता है।

- **अपेक्षित भूमिका निर्वाह (Required Role Playing)-** कभी-कभी ऐसा होता है कि किसी व्यक्ति को कुछ ऐसी क्रियाएँ या व्यवहार लोगों के सामने करना होता है, जिसे वह नहीं करना चाहता है, क्योंकि ऐसी क्रियाएँ उसकी निजी अभिवृत्ति के विपरीत होती हैं। ऐसा पाया गया है, कि इस तरह की भूमिका करते-करते व्यक्ति की निजी अभिवृत्ति परिवर्तित होकर किए गए व्यवहार के अनुकूल हो जाती है, अर्थात् वह आम अभिवृत्ति के समान हो जाती है।

  भूमिका निर्वाह का प्रभाव भूमिका करने वाले के अलावा भूमिका देखने वाले की अभिवृत्ति पर भी पड़ते देखा गया है। भूमिका देखने वाले व्यक्तियों की सामान्य अभिवृत्ति एवं विशिष्ट अभिवृत्ति में क्रमशः 56.8% तथा 42.9% परिवर्तन हुआ। जैनिस तथा किंग (Janis & King 1954) ने भी अपने अध्ययनों में इसी ढंग का तथ्य पाया। इन लोगों ने भूमिका निवार्ह के प्रभाव के कारण अभिवृत्ति में होने वाले परिवर्तन की व्याख्या करने के लिए दो प्राक्कल्पनाएं भी बनायी है -

  i. **आशुक्रिया प्राक्कल्पना (Improvisation Hypothesis)-**इससे भूमिका निर्वाह की अभिवृत्ति में परिवर्तन इसलिए आता है क्योंकि वह दूसरों को अपने द्वारा व्यक्त किए गए

विचारों को स्वीकार कराये जाने के लिए दिये गए तर्कों से स्वयं ही काफी उत्तेजित एवं प्रभावित हो जाता है।

ii. **सन्तोष प्राक्कल्पना (Satisfaction Hypothesis)-**इससे भूमिका निर्वाह की अभिवृत्ति परिवर्तन इसलिए आता है, क्योंकि उसे भूमिका करने से एक सन्तोष होता है जिससे भूमिका से व्यक्त किया गया मत अपने आप ही पुनर्बलित (Reinforce) होता है फलस्वरूप वह उसी के अनुसार अपनी अभिवृत्ति में परिवर्तन कर लेता है।

व्यक्तित्व परिवर्तन की तकनीकें (Personality Change Technique)- कुछ समाज मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तियों के व्यक्तित्व में परिवर्तन लाकर उनकी अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाने की कोशिश की है। मनोवैज्ञानिकों का दावा है कि व्यक्तित्व संरचना में होने वाला परिवर्तन अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है। एक्सलाईन (Axline,1948) ने ऐसे व्यवहारों को परिमार्जित करने के लिए क्रीड़ा चिकित्सा (Play Therapy) को लाभकारी पाया है उन्होंने अपने अध्ययन में सात वर्षीय कुछ ऐसे गोरे समस्यात्मक बच्चों को लिया जो प्रजातिय अभिवृत्तियों से काफी पीड़ित थे। अर्थात ऐसे बच्चे निग्रो बच्चों के प्रति काफी आक्रामक या असामाजिक व्यवहार करते थे। गौर बच्चों के व्यक्तित्व में क्रीड़ा चिकित्सा द्वारा परिवर्तन लाया गया जिसके बाद यह देखा गया कि निग्रो बच्चों के प्रति उदारता एंव प्रेम बढ़ गया। इन अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि व्यक्तित्व परिवर्तन द्वारा भी व्यक्ति की अभिवृत्ति में परिवर्तन होता है।

i. **सांस्कृतिक कारक(Cultural Factors)-**प्रत्येक समाज की एक संस्कृति होती है। जिसमें व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित होता है। संस्कृति के मूल्यों, मानदण्डों आदि में परिवर्तन होने से पहले से चली आ रही अभिवृत्ति परिवर्तन होकर बदले हुए सांस्कृतिक मूल्यों एवं मानदण्डों के अनुसार विकसित हो जाती है। आधुनिक भारतीय समाज में शिक्षा के कारण सांस्कृतिक मूल्यों में काफी परिवर्तन आया है। शायद यही कारण है कि आजकल एक औसत भारतीय की अभिवृत्ति अनुसूचित जाति के प्रति, औरतों द्वारा नौकरी किए जाने के प्रति, अन्य समान सामाजिक समस्याओं के प्रति उतनी नकारात्मकता नहीं रह गयी जितनी कि 30-40 वर्ष पहले थी। फैल्डमैन (Feldman]1985) तथा मेयर्स(Myers, 1987)ने अपने प्रयोगात्मक अध्ययनों में पाया है कि भिन्न-भिन्न संस्कृति में पले व्यक्तियों की अभिवृत्ति एक ही तरह की सामाजिक समस्या के प्रति एक समान नहीं होती है। और इस सांस्कृतिक विभिन्नता के कारण उनकी अभिवृत्तियों में परिवर्तन का प्रयास भी एक समान परिणाम नहीं देता है। एक खास
संस्कृति में पले व्यक्तियों की अभिवृत्ति में किसी एक सामाजिक समस्या के प्रति अभिवृत्ति में परिवर्तन करना आसान होता है,तो दूसरी संस्कृति में पले व्यक्तियों की अभिवृत्ति में उसी सामाजिक समस्या के प्रति अभिवृत्ति में परिवर्तन करना कठिन होता है।

ii. **बाधित सम्पर्क (Enforced Contact)-** बाधित सम्पर्क से तात्पर्य ऐसे सम्पर्क से होता है, जिसमें व्यक्तियों को ऐसे लोगों के साथ रहने के लिए बाध्य कर दिया जाता है या कुछ समय तक एक साथ रहने का अवसर प्रदान कर दिया जाता है, जिनके साथ वह सचमुच में नहीं रहना चाहते हैं। समाज मनोवैज्ञानिकों ने ऐसे अनेकों अध्ययन किए हैं। जिनमें यह देखा गया है कि बाधित सम्पर्क में व्यक्तियों को एक -दूसरे को समझने का मौका गहन रूप से मिलता है। फलस्वरूप एक-दूसरे के प्रति उनकी

अभिवृत्ति में धीरे-धीरे अपने आप ही परिवर्तन आने लगता है। बाधित सम्पर्क से वर्तमान अभिवृत्ति में संगत परिवर्तन तथा असंगत परिवर्तन दोनों ही हो सकते हैं।

iii. **समूह का प्रभाव (Effect of Group)-** समूह के प्रत्येक या अधिकांश सदस्यों को समूह के आदर्शों, मूल्यों, और नियमों आदि के अनुसार कार्य और व्यवहार करना पड़ता है। यदि कोई सदस्य समूह के प्रतिमानों के अनुसार व्यवहार नहीं करता तो उस समूह की सदस्यता से हटा दिया जाता है। बहुधा व्यक्ति उन्हीं अभिवृत्तियों को अर्जित करता है, जो एक समूह के अधिकांश व्यक्तियों में पायी जाती है। लेविन (1952) ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया कि अभिवृत्तियों के परिवर्तन में समूह निर्णय भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। उन्होंने यह देखा कि जिस समूह में सिर्फ व्याख्यान द्धारा सूचना दी गयी उसमें अभिवृत्ति का परिवर्तन 3% हुआ, जबकि गोष्ठी के माध्यम से सामूहिक निर्णय वाले समूह में लगभग 32%अभिवृत्ति में परिवर्तन हुआ।

iv. **स्कूल अनुभव का प्रभाव (Effect of School Experience)-** अभिवृत्ति के परिवर्तन पर शिक्षण संस्थानों का भी प्रभाव पड़ता है। बालक जिस विघालय में पढ़ता है, वहाँ का वातावरण, स्कूल के साथी, अध्यापक उनके व्यवहार को प्रभावित करते हैं। इन सभी लोगों का व्यवहार, व्यक्तित्व और अभिवृत्तियाँ एक बच्चे की अभिवृत्तियों में परिवर्तन भी कर सकती हैं और नयी अभिवृत्तियों का निर्माण भी। न्यूकाम्ब (1943) के अनुसार जिन व्यक्तियों का अधिकांश समय कालेज में बीता, उनकी केवल अभिवृत्तियाँ ही परिवर्तित नहीं हुई बल्कि उनकी विकसित अभिवृत्तियों में स्थायित्व भी रहा।

v. **प्रभावी या विश्वासोत्पादक संचारण (Persuasive Communication)-** विश्वासोत्पादक संचारण से तात्पर्य वैसे तथ्यों एवं सूचनाओं का संचारण से होता है। जो सुनने वाले व्यक्तियों के लिए आकर्षक एवं मनमोहक होते हैं। और व्यक्ति की मनोवृत्ति पर सीधा असर करते हैं। प्रायः ऐसे संचारण को जब व्यक्ति स्वीकार करता है, तो इससे उसकी अभिवृत्ति में परिवर्तन आ जाता है। इस ढंग का विश्वासोत्पादक संचारण हमें टेलीविजन एवं रेडियो द्वारा किए गए विज्ञापनों से मिलता है। हौभलैण्ड, जैनिस तथा केली(Hovland Janis & Kelley,1953)द्वारा चले विश्वविद्यालय में अभिवृत्ति परिवर्तन में विश्वासोत्पादक संचार के महत्व को दिखलाने के लिए काफी प्रयोग एवं शोध किए। उनके अनुसार विश्वासोत्पादक संचारण द्वारा अभिवृत्ति में होने वाला परिवर्तन चार कारकों पर निर्भर करता है-संचारण का स्रोत्र, संचारण का विषय एवं विशेषता, संचारण का अध्ययन, तथा श्रोतागण की विशेषता।

vi. **संचारण का स्रोत्र (Sources of Communication)-**अभिवृत्ति परिवर्तन करने के लिए जो तथ्य एवं सूचना दूसरे व्यक्ति को दी जा रही है, उसका स्रोत्र कैसा है, इस पर अभिवृत्ति की परिवर्तनशीलता अधिक निर्भर करती है। सूचना देने वाले व्यक्ति में कुछ खास विशेषताएँ होती हैं जैसे विश्वसनीय, आकर्षकता, शक्ति आदि प्रमुख हैं।

- **विश्वसनीय संचारक-** इस तरह के संचारक विशेषज्ञ एवं भरोसे योग्य दोनों ही होते हैं। फलस्वरूप उनकी द्वारा दी गयी किसी प्रकार की सूचना पर श्रोतागण अधिक विश्वास करते हैं। और अपनी अभिवृत्ति में आसानी से परिवर्तन करते हैं।

- **आकर्षक संचारक-** आकर्षकता में दो पक्ष महत्वपूर्ण हैं- शारीरिक सुन्दरता तथा समानता। जब सुन्दर लोगों द्वारा कोई तर्क या सूचना दी जाती है। तो उसका प्रभाव सुनने वाले व्यक्ति की मनोवृत्ति पर अधिक पड़ता है। समानता आकर्षकता का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष है। हम लोग वैसे व्यक्तियों को पसन्द करते हैं जो हमारे समान होते हैं। फलस्वरूप वे हमारे लिए आकर्षक होते हैं। और उनके द्वारा दी गयी सूचनाओं द्वारा अभिवृत्ति में आसानी से परिवर्तन आ जाता है।

vii. **संचारण विषय एवं विशेषता(Content, Characteristics & Communication)-** व्यक्ति को दी गयी सूचनाओं का स्वरूप एवं विशेषता भी एक महत्वपूर्ण कारक है, जिस पर अभिवृत्ति परिवर्तन निर्भर करता है। सूचना विशेषता के तीन महत्वपूर्ण पक्ष हैं-

- **डर उत्पन्न करने वाली सूचना-** जब कोई तथ्य या सूचना ऐसी होती है,जिससे व्यक्ति में ऋणात्मक संवेग जैसे डर उत्पन्न होता है और साथ-साथ उस डर को कम करने का उपाय भी उनके सामने होता है, तो इससे मनोवृत्ति में परिवर्तन आसानी से होता है। जैसे ,सरकार की ओर से सिगरेट पीने वालों को यह चेतावनी दिया जाना कि सिगरेट पीने से फेफड़े में कैंसर होता है। डर उत्पन्न होने पर व्यक्ति की अभिवृत्ति में परिवर्तन होता है।

- **एक तरफा बनाम दो-तरफा संचारण-** जब संचारक दी जाने वाली सूचना के सिर्फ एक पक्ष अर्थात् धनात्मक या ऋणात्मक पर बल देता है, तो इसे एक तरफा संचारण कहा जाता है। परन्तु यदि सचांरक सूचना के दोनों पक्षों पर बल डालता है अर्थात उसकी लाभ और हानि दोनों श्रोता को बता देता है तो इसे दो तरफा संचारण कहा जाता है। परिणाम में देखा गया है कि दो तरफा सूचना द्वारा अभिवृत्ति में असंगसत परिवर्तन अधिक हुए जबकि एक तरफा सूचना द्वारा अभिवृत्ति में संगत परिवर्तन अधिक हुए।

- **प्राथमिकता बनाम अभिनवता-**किसी व्यक्ति या घटना के बारे में पहले दी गई सूचनाएँ उसी व्यक्ति या घटना के बारे में बाद में दी गयी सूचनाओं की अपेक्षा अभिवृत्ति में जल्दी परिवर्तन लाती हैं। क्योंकि पहले ही गयी सूचनाओं का आधार व्यक्ति के मस्तिष्क पर अपेक्षाकृत अधिक होता है। पहले दी गयी सूचना के प्रभाव को प्राथमिकता तथा बाद में दी गयी सूचना के प्रभाव को अभिनवता की संज्ञा दी जाती है।

viii. **संचार का माध्यम-** समाज मनोवैज्ञानिकों ने संचार के दो तरह के माध्यमों के प्रभावों का अध्ययन किया है-

- **सामूहिक बनाम व्यक्तिगत प्रभाव-** अभिवृत्ति परिवर्तन के लिए सामूहिक माध्यम से दी गयी सूचनाएँ व्यक्तिगत रूप से दी गयी सूचनाओं की अपेक्षा कम प्रभावकारी होती हैं। क्योंकि सामूहिक माध्यम (रेडियों, टेलीविजन,अखबार) में संचारक एवं सामान्य व्यक्तियों के बीच में सीधा सम्बन्ध नहीं होता है, जबकि व्यक्तिगत प्रभाव में संचारक प्रत्येक व्यक्ति से व्यक्तिगत रूप से मिलकर अपनी बात को समझाता है।

- **सक्रिय अनुभव बनाम निष्क्रिय ग्रहण-** जब व्यक्ति कोई अनुभव सक्रिय रूप से प्राप्त करता है तो इससे अभिवृत्ति में परिवर्तन तेजी से होता है। परन्तु जब कोई अनुभव दीवार पर कुछ लिखा देखकर या इश्तहार पढ़कर प्राप्त होता है तो इससे व्यक्ति की अभिवृत्ति में परिवर्तन कम होता है।

ix. **श्रोता की विशेषताएँ-** समाज मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गए अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि कुछ लोग अनुनयन (Persuasion) किए जाने पर अपनी अभिवृत्ति में तुरन्त परिवर्तन कर लेते हैं तथा कुछ लोगों पर प्रभावी अनुनयन का कोई भी असर नहीं पड़ता है जैसे जिन व्यक्तियों में आत्म सम्मान अधिक होता है उनमें आत्म विश्वास अधिक होता है। फलस्वरूप ऐसे व्यक्तियों पर अनुनयन का प्रभाव कम पड़ता है। और इनकी अभिवृत्ति में परिवर्तन आसानी से नहीं होता है।

अभ्यास प्रश्न

1. किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल रूप में व्यवहार करना कहा जाता है-
    a. सज्ञांन
    b. मनोभाव
    c. अभिवृत्ति
    d. भाव
2. अभिवृत्ति प्रणाली में कितने संघटक होते हैं -
    a. 3
    b. 2
    c. 4
    d. 6
3. अभिवृत्ति और जनमत दोनों समान है- (हाँ /नहीं)
4. अभिवृत्ति निर्माण में सीखने की प्रक्रियायें है-
    a. क्लासिकल अनुकूलन
    b. साधनात्मक अनुकूलन
    c. प्रेक्षणात्मक अनुकूलन
    d. उपरोक्त सभी
5. अभिवृत्ति एक अर्जित प्रवृत्ति है। (सत्य/ असत्य)
6. अभिवृत्ति अपेक्षाकृत अस्थायी होती है। (सत्य/ असत्य)
7. अभिवृत्ति व्यवहार को दिशा प्रदान करती है। (सत्य/ असत्य)
8. अभिवृत्ति के निर्माण में सांस्कृतिक कारक सहायक होते हैं । (सत्य/ असत्य)
9. संगत परिवर्तन में अभिवृत्ति अनुकूल से परिवर्तित होकर प्रतिकूल हो जाती है।
10. परिस्थतियों में परिवर्तन होने पर व्यक्ति की अभिवृत्ति में परिवर्तन होता है।

4.7 सारांश

अभिवृत्ति किसी वस्तु, व्यक्ति, विचार अथवा उत्तेजना या किसी के सम्बन्ध में भी हो सकती है। अभिवृत्तियाँ किसी व्यक्ति के अनुभव, ज्ञान एवं प्रत्यक्षात्मक प्रक्रियाओं का स्थायी संगठन है और प्रत्युत्तर तत्परता का मिला जुला रूप है। अनुभव, ज्ञान और प्रत्यक्षात्मकता में परिर्वतनों के साथ-साथ अभिवृत्ति भी परिवर्तित हो जाती है। अभिवृत्तियों का व्यक्ति के समायोजन में महत्वपूर्ण स्थान है। सामाजिक जीवन में ही इन अभिवृत्तियों का निर्माण होता है। अभिवृत्तियों का बाह्य-प्रेक्षण सम्भव नहीं है। परन्तु व्यक्ति के व्यवहार के आधार पर अनके बारे में अनुमान लगाया जा सकता है। अभिवृत्तियाँ अर्जित व्यवहार प्रणालियाँ हैं, यद्यपि एक बार अर्जित हो जाने पर अपेक्षाकृत स्थायी रूप धारण कर लेती हैं, परन्तु उचित परिस्थितियाँ उत्पन्न करके इनमें परिवर्तन किया जा सकता है।

4.8 शब्दावली

1. **आत्मीकरण** - पहचान, अभिज्ञान
2. **दमन** - भावना को दबा देना
3. **प्रत्याशाओं** - अपेक्षा, विश्वासपूर्ण उम्मीद
4. **प्रतिमानों** - नियम के अनुसार
5. **अनुनयन** - राजी होना, विश्वास

4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. अभिवृत्ति
2. 3
3. नहीं
4. उपरोक्त सभी
5. सत्य
6. असत्य
7. सत्य
8. सत्य
9. सत्य
10. असत्य

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ० अरूण कुमार सिंह, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसी दास।
2. डॉ० आर. एस. सिंह, आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
3. डी. एन श्रीवास्तव, जगदीश पाण्डे, रणजीत सिंह, आधुनिक समाज मनोविज्ञान,हरि प्रसाद भार्गव आगरा।
4. डॉ० बी0 एन. खान, डॉ० किरन गुप्ता, आधुनिक समाज मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

4.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अभिवृत्ति का अर्थ तथा उनकी विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।
2. अभिवृत्ति के निर्माण व विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
3. अभिवृत्ति के संगत परिवर्तन तथा अंसगत परिवर्तन में अन्तर बताएं। उन कारणों का वर्णन करें जिनसे अभिवृत्ति में इन दोनों तरह से परिवर्तन सम्भव होते हैं।
4. अभिवृत्ति परिवर्तन में विश्वासोत्पादक संचार के महत्व की व्याख्या करें।

इकाई 5. पूर्वाग्रह; अर्थ, विशेषताएँ एवं प्रकार (Prejudice; Meaning, Characteristics and Types)

इकाई संरचना-

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 पूर्वाग्रह का अर्थ एवं परिभाषा
5.4 पूर्वाग्रह की उत्पत्ति
5.5 पूर्वाग्रह की विशेषता
5.6 पूर्वाग्रह के प्रकार
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

किसी व्यक्ति या समूह के प्रति बिना समुचित ज्ञान प्राप्त किये, जब पहले से ही विचार या धारणा निर्धारित कर ली जाती है,तो उसे समाजशास्त्रीय भाषा में पूर्वाग्रह, पूर्वधारणा या पक्षपात कहा जाता है। वस्तुतः हमारी सामाजिक जीवन में अनुकूल और प्रतिकूल दोनों ही भावनाएँ स्वाभाविक रूप से पायी जाती है। जिन व्यक्तियों या समूहों से हमें स्नेह या सहानुभूति होती है। उनके प्रति हमारे हृदय में अनुकूल भावनाएँ पनपती हैं और तदनुसार ही उनके प्रति हमारे व्यवहार प्रतिमान होते हैं। जिन व्यक्तियों और समूहों से हमें घृणा होती है या जिन्हें हम अवहेलना की दृष्टि से देखते हैं, उनके प्रति हमारे हृदय में प्रतिकूल भावनाएँ पनपती हैं, तदनुसार ही उनके प्रति हमारे व्यवहार प्रतिमान होते हैं। इस अनुकूलता और प्रतिकूलता के पीछे अधिकाशतः कोई तार्किक कारण नहीं होते बल्कि कोई भी संवेगात्मक मनोभाव हमारे अन्दर पनप जाते हैं। प्रायः उन्हीं के अनुरूप हम सहयोग और द्वेष, घृणा और प्रेम का व्यवहार करने लगते हैं। अतः समूहों और बाह्य समूहों के प्रति हमारे इन्हीं मनोभावों तथा व्यवहार-प्रतिमानों को पूर्वाग्रह कहा जाता है। चूँकि अन्तः समूहों के प्रति हमें कुछ लगाव होता है। अतः उनके बारे में पूरी तरह जानकारी किए बिना ही हम हर तरह से उनकी सहायता करने को तत्पर रहते हैं। अर्थात उनके प्रति हमारा पूर्वाग्रह अनुकूल या सकारात्मक ही अधिक होता है। इसी प्रकार किसी बाह्य समूह के प्रति हमारे हृदय में नकारात्मक या प्रतिकूल मनोभाव हो सकता है और बिना समुचित जानकारी किये या बिना किसी तार्किक औचित्य के हम पहले से ही ऐसी धारणा बना सकते हैं कि बाह्य समूह के सदस्यों से कोई निकट सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करना अनुचित है।

प्रत्येक समाज या वर्ग के लोग एक दूसरे के बारे में उसकी जाति, भाषा, रंग, लिंग, धर्म या नागरिकता के आधार पर अनेक प्रकार की अनुकूल या प्रतिकूल धारणाएँ बना लेते हैं। उनकी धारणा सही है या गलत, इस पर ध्यान नहीं देते हैं। ऐसी धारणाओं को पूर्वाग्रह एवं रूढियुक्तियाँ कहा जाता है। इनके कारण समाज में तनाव, झगड़ा, दंगा अथवा प्रजातीय भेदभाव की समस्याएँ उत्पन्न होती रहती हैं। पूर्वाग्रह के कई रूप होते हैं-कुष्ठ रोगियों के प्रति पूर्वाग्रह, उग्रवादियों के प्रति पुर्वाग्रह, अनुसूचित जातियों के प्रति पूर्वाग्रह, उन व्यक्तियों के प्रति पूर्वाग्रह जो छोटे हैं या मोटे हैं आदि। पूर्वाग्रह की भावना व्यक्ति या वस्तु के प्रति हमें पक्षपातपूर्ण बनाती है जो कि किसी विशेष समूह के साथ व्यक्ति के तादात्मीकरण पर आधारित होती है। विश्व का प्रत्येक समाज, चाहे वह पूर्वी हो या पश्चिमी, विकसित हो या अविकसित, आधुनिक हो या आदिम, किसी न किसी रूप में पूर्वाग्रह का शिकार है। पूर्वाग्रह में तर्क एवं बुद्धि का आधार तो न्यूनतम मात्रा में होता है किन्तु प्रचलित सामाजिक विचारधारा और धारणाओं की मात्रा का समावेश अधिक होता है। इस इकाई में आपको पूर्वाग्रह की अवधारणा, उसकी विशेषतायें एवं प्रकारों से अवगत कराया जायेगा।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

1. पूर्वाग्रह के विषय में जान सकेंगे।
2. पूर्वाग्रह की उत्पति कैसे हुई इसके बारे में जान सकेंगे।
3. पूर्वाग्रह की क्या विशेषताएँ है इसको भी जान पाएंगे ।
4. पूर्वाग्रह कितने प्रकार का होता है यह भी जान पाएंगे ।

5.3 पूर्वाग्रह का अर्थ एवं परिभाषा

पूर्वधारणा अंग्रेजी के 'Prejudice' शब्द का रूपान्तर चुना गया है जिसकी उत्पति लैटिन भाषा के शब्द 'Prejudicium' से हुई है। 'Prejudicium' में दो शब्द हैं- Pre का अर्थ है पूर्व तथा judicium का अर्थ है निर्णय। पूर्व निर्णय का अर्थ उस निर्णय से है जो बिना किसी तार्किक आधार के लिया गया है। Prejudice शब्द के अनेक हिन्दी रूपान्तर हैं जैसे पूर्वधारणा, पूर्वनिर्णय, पूर्वाग्रह, पूर्व निर्धारण निर्णय, पूर्वग्रहित निर्णय तथा पक्षपात आदि। पूर्वग्रहित निर्णय शब्द ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार सही प्रतीत होता है। ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार सही प्रतीत होता है ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में Prejudice का अर्थ "Preconceived opinion bias against or in favor of] person or thing" है। अर्थात पूर्वग्रहित निर्णय पक्ष और विपक्ष दोनों में हो सकता है।

- ❖ कुप्पूस्वामी (1961) के अनुसार, "आज कल पूर्वग्रहित निर्णय का अर्थ केवल यही नहीं है कि यह समय से पूर्व लिया गया निर्णय है, अपितु यह भी कि इसमें प्रतिकूल अभिवृत्ति है।"
- ❖ सेकर्ड तथा बैकमैन(Secord &Backman,1974) के अनुसार "पूर्वाग्रह एक मनोवृत्ति है जो व्यक्ति को किसी समूह यह उसके सदस्यों के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल ढंग से सोचने, प्रत्यक्षण करने, अनुभव करने तथा क्रिया करने के लिए पहले से ही तत्पर बना देती है।"

- ❖ फेल्डमैन (Feldman, 1985) के अनुसार, "किसी समूह के सदस्यों के प्रति ऐसी स्वीकारात्मक निर्णय या मूल्यांकन को पूर्वाग्रह कहा जाता है, जो मुख्यतः उस समूह की सदस्यता पर आधारित होता है न कि सदस्यों के विशेष गुणों पर।"
- ❖ मेयर्स(Mayers 1987) के अनुसार "पूर्वाग्रह किसी समूह उसके सदस्यों के प्रति एक अनुचित नकारात्मक मनोवृत्ति को कहा जाता है।
- ❖ बेरोन तथा बर्न (Baron And Byrne],1977) के अनुसार ''समाज मनोविज्ञान में पूर्वाग्रह को सामान्यतः किसी प्रजातीय, मानवजातीय या धार्मिक समूह के सदस्यों के प्रति एक नकारात्मक मनोवृत्ति के रूप परिभाषित किया जाता है।''
- ❖ किम्बल यंग के अनुसार "एक व्यक्ति की दूसरी व्यक्ति के प्रति पूर्वनिर्धारित अभिवृत्तियाँ अथवा विचार, जो किसी संस्कृति द्वारा उपलब्ध मूल्यों एवं अभिवृत्तियों पर आधारित होते हैं, पूर्वाग्रह कहलाते हैं"।
- ❖ जेम्स ड्रेवर की दृष्टि में "र्वाग्रह एक ऐसी अभिवृत्ति है जो प्रायः संवेग से समायुक्त है और जो कुछ विशेष प्रकार के कार्यों और वस्तुओं के प्रति, कुछ विशेष व्यक्तियों तथा विशेष सिद्धान्तों के प्रति प्रतिकूलता अथवा अनुकूलता प्रकट करती हो"।
- ❖ आगबर्न ने लिखा है कि "पूर्वाग्रह जल्दबाजी में लिया गया एक ऐसा निर्णय या मन है जिसमें उचित परीक्षण नहीं किया गया है"।
- ❖ क्रेच एंव क्रचफील्ड के अुनसार ''पूर्वाग्रह का तात्पर्य उन अभिवृत्तियों एवं विश्वासों से है,जो विषयों को शुभ अथवा अशुभ घोषित कर देती हैं। शैरिफ एवं शैरिफ के मत में "समूह पूर्वाग्रह किसी अन्य समूह तथा उनके सदस्यों के प्रति एक समूह विशेष सदस्यों की, उनके अपने स्थापित आदर्श नियमों से प्राप्त की जाने वाली नकारात्मक अभिवृत्तियाँ हैं"।

सभी परिभाषाओं का अध्ययन कर आपनेपाया होगा कि समाज मनोवैज्ञानिकों ने पूर्वाग्रह को एक मनोवृत्ति माना है। कुछ लोगों ने इसे स्वीकारात्मक मनोवृत्ति तथा कुछ लोगों ने नकारात्मक मनोवृत्ति माना है। नकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में पूर्वाग्रह होने पर व्यक्ति दूसरे समूह के सदस्यों के प्रति घृणा दिखलाता है एवं विवेकहीन विचारों को व्यक्त करता है। स्वीकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में पूर्वाग्रह होने पर व्यक्ति दूसरे समूह के सदस्यों के प्रति अत्यधिक स्नेह एवं प्यार दिखलाता है,तथा परिस्थिति विपरीत होने पर भी विवेक पूर्ण विचारों को ही व्यक्त करता है।

पूर्वाग्रह चाहे स्वीकारात्मक हो या नकारात्मक यह एक मनोवृत्ति है और मनोवृत्ति होने के नाते इसमें मनोवृत्ति के तीनों संघटक (component) मौजूद होते हैं-

- संज्ञानात्मक संघटक (Cognitive Component)
- भावात्मक संघटक (Affective Component)
- व्यवहारात्मक संघटक (Behavioral component)

पूर्वाग्रह की स्थिति में संज्ञानात्मक संघटक से तात्पर्य किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति उन विचारों एवं विश्वासों से होता है, जो एक तरफा तथा अनुचित होते हैं। पूर्वाग्रह के भावात्मक संघटक में दूसरे समूह के सदस्यों का नकारात्मक मूल्याकंन किया जाता है। जिसमें प्रायः घृणा, डर, विद्वेष का भाव होता है। पूर्वाग्रह का व्यावहारिक संघटक में व्यक्ति दूसरे समूह के सदस्यों के प्रति खुलकर अप्रिय व्यवहार करता है। पूर्वाग्रह के अर्थ के बारे में समाज मनोवैज्ञानिकों में विभिन्नता होने के बावजूद भी इसका प्रयोग एक समान ढंग से किया गया है। उपरोक्त वर्णन के आधार पर हमें पूर्वाग्रह के बारे में निम्न तथ्य मिलते हैं- पूर्वाग्रह एक तरह की मनोवृत्ति है, जो तथ्यों पर आधारित नहीं होती है। पूर्वाग्रह को कुछ समाज मनोवैज्ञानिकों ने सिर्फ नकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में परिभाषित किया है, परन्तु कुछ समाज मनोवैज्ञानिकों ने इसे नकारात्मक मनोवृत्ति के अलावा स्वीकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में परिभाषित किया है। इस मतभेद के बावजूद भी हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं होती है कि अधिकतर समाज मनोवैज्ञानिकों ने इसका प्रयोग नकारात्मक मनोवृत्ति के रूप् में किया है। इस तरह से पूर्वाग्रह का प्रभाव व्यक्ति के चिन्तन, प्रत्यक्षण, भाव एवं व्यवहार सभी पर पड़ता है।

5.4 पूर्वाग्रह की उत्पत्ति

i. **पूर्वाग्रह और बाल्यकाल-** पूर्वाग्रहों का जन्म बाल्यकाल से होना प्रारम्भ हो जाता है। बालक जैसे सामाजिक तथा सास्ंकृतिक पर्यावरण में रहेगा, उसी समाज तथा सस्ंकृति में प्रचलित पूर्वाग्रह बालक के समाजीकरण की प्रक्रिया के साथ-साथ उसमें आते चले जायेंगें।

ii. **पूर्वाग्रह एवं सामाजिक मानक-** सामाजिक मानकों का पूर्वाग्रह की रचना एवं उनके स्थायित्व में बड़ा महत्वपूर्ण कार्य रहता है। जिस समाज में सामाजिक संरचना इस प्रकार की होगी कि एक वर्ग दूसरे वर्ग से ऊँचा माना जाता है तो उस समूह में ऊँच-नीच की भावनाओं को उस समाज के लोगों में बनाए रखने के लिए उसी प्रकार के मानक एवं मूल्य भी निर्धारित हो जाते हैं।

iii. **पूर्वाग्रह एवं प्रजातीय लक्षण-** पूर्वाग्रह का एक प्रमुख आधार प्रजातीय शारीरिक विशेषताएँ भी मानी जाती हैं। इसमें कोई सन्देह नही है कि मानव जाति में मानवशास्त्र के सिद्धान्तों के आधार पर विभिन्न प्रकार की शारीरिक भिन्नताएँ पायी जाती हैं,किन्तु इन शारीरिक विभिन्ताओं के आधार पर मानव में ऊँच-नीच, छोटे-बड़े, बुद्धिमान-मूर्ख आदि होने का अन्तर अवैज्ञानिक माना गया है। किन्तु इन्हीं आधारों पर विश्व के अनेक समाजों में अनेक प्रकार के पूर्वाग्रह प्रचलित हैं, जिनके कारण विश्व में विभिन्न प्रकार के पारस्परिक द्वेष, तनाव, संघर्ष एवं युद्ध होते रहते हैं।

iv. **पूर्वाग्रह और भय का वातावरण-** जब किसी एक समूह और दूसरे समूह में अथवा दो पक्षों में पारस्परिक भय का वातावरण उत्पन्न हो जाता है तो इस भय के वातावरण के कारण भी अनेक प्रकार के पूर्वाग्रहों को उत्पन्न होने का झूठा-सच्चा आधार मिल जाता है।

v. **पूर्वाग्रह और सामाजिक परम्पराएँ-** पूर्वाग्रहों का एक विशेष आधार समाज की प्रचलित परस्पराएँ, विश्वास, रीतिरिवाज और रूढ़ियाँ अदि भी होते हैं।

पूर्वाग्रह की रचना के मनोवैज्ञानिक आधार-

i. **आत्म-सम्मान की भावना-** प्रत्येक मानव में मनोवैज्ञानिक रूप से आत्म सम्मान की भावना पायी जाती है। अपने आत्म-सम्मान को बनाए रखने का प्रत्येक मानव प्रयास करता है। वह अपने को अन्य लोगों की अपेक्षा किसी न किसी आधार पर श्रेष्ठतर सिद्ध करना चाहता है। पूर्वाग्रह उत्पत्ति का यह एक मनोवैज्ञानिक आधार है।

ii. **असामान्य व्यक्तित्व-** समाज में भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति होते हैं, जैसे समाज के कुछ व्यक्ति अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान होते हैं, कुछ शरीर में लम्बे तो कुछ छोटे होते हैं, कुछ व्यक्ति शिक्षित तो कुछ अशिक्षित है, कुछ स्त्री है तो कुछ पुरूष होते हैं आदि। इस व्यक्तित्व की विभिन्नता का मनोवैज्ञानिक प्रभाव यह पड़ता है कि एक प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति अन्य प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति की अपेक्षा अपने को अधिक उच्च, श्रेष्ठ एवं प्रगतिशील मानते हैं।

iii. **सामाजिक जटिल परिस्थितियाँ-** सामाजिक जटिल परिस्थितियाँ भी समाज में पूर्वाग्रहों को बराबर जन्म देती रहती हैं। जब कभी समाज में कोई भी परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है,जिसका सरलीकरण समूह की शक्ति से परे होता है, तो उस अवस्था में उस समूह में विभिन्न प्रकार के पूर्वाग्रह उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। इस प्रकार के पूर्वाग्रह प्रायः पूंजीपति एवं श्रमिक वर्ग में उत्पन्न हो जाया करतें हैं।

iv. **मानव जीवन में अथवा सामाजिक जीवन में असफलता-** मानव को अपने जीवन में जब किसी भारी असफलता का मुख देखना पड़ता है, तो उस समय भी जीवन में अनेक प्रकार की पूर्व धारणाएँ अथवा पूर्वाग्रह उत्पन्न हो जाया करते हैं। यदि हम किसी वकील को अपने मुकदमे में रखकर हार जाते हैं तो हम हर दशा में वकील को ही दोषी बताऐंगे और अपने मुकदमे की कमजोरियों को ध्यान नहीं देंगे।

v. **जन्मजात स्वभाव का सिद्धान्त-** प्रत्येक समाज में एक स्वाभाविक प्रेरणा पायी जाती है कि वह अपनी जाति के लोगों से प्रेम करता है। उन्हीं में घुल-मिल जाता है और उसी समूह में अपनी नातेदारी भी स्थापित करता है। इस प्रकार उस समूह के अतिरिक्त अन्य समूहों के प्रति उनके मन में अनेक प्रकार के पूर्वाग्रह उत्पन्न हो जाते हैं।

vi. **प्रजातीयता का सिद्धान्त-** प्रजातीयता का सिद्धान्त भी मनोवैज्ञनिक दृष्टि से पूर्वाग्रह को जन्म देता है। जैसे यूरोप के निवासियों के चमड़ी का रंग सफेद और अफ्रीका के नीग्रो लोगों का रंग काला होता है। ये दोनों जातियाँ प्रजातीयता के आधार पर भिन्न-भिन्न हैं। इन्हीं प्रजातीय भिन्नताओं ने यूरोप निवासियों के मन में काले लोगों की अपेक्षा अपने को श्रेष्ठतर मानने की प्रबल धारणा बन गयी है।

vii. **मनोविश्लेषणवादी विचार-** मनोविश्लेषणवादी विद्वानों के अनुसार मानव अपने स्वयं के अनुभव के आधार पर कुछ समूहों अथवा व्यक्तियों के प्रति अपने पूर्वाग्रह बनाता है। जिन व्यक्तियों से उसे सुखद अनुभव होते हैं। उनके प्रति अच्छे पूर्वाग्रह और जिनके प्रति कटु अनुभव होते हैं, उनके प्रति विरोधी पूर्वाग्रह उनके मन में स्थायित्व ग्रहण कर लेते हैं।

5.5 पूर्वाग्रह की प्रमुख विशेषताएँ

पूर्वाग्रह की प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं-

- **पूर्वाग्रह अर्जित होता है-** पूर्वाग्रह एक तरह की मनोवृत्ति है, अतः आधुनिक समाज मनोवैज्ञानिकों ने इसे एक अर्जित प्रक्रिया माना है। बच्चा जब जन्म लेता है तो उसमें दूसरे समूह, धर्म, जाति के लोगों के प्रति न तो स्वीकारात्मक पूर्वधारणा होती है और ना ही नकारात्मक पूर्वधारणा होती है। वह परिवार के सदस्यों से अन्य समूह, धर्म या जाति के लोगों के बारे में सुनता है। उसी के अनुसार वह उनके बारे में पूर्वधारणा विकसित कर लेता है।
- **पूर्वाग्रह विवेकहीन होता है-** पूर्वाग्रह का स्वरूप कुछ ऐसा होता है कि इसमें विवेक तर्क एवं संगति का कोई स्थान नहीं होता है। अनेक प्रकार के विरोधी तथ्य एवं सूचनाओं को व्यक्ति के सामने प्रस्तुत करने पर भी वह अपनी पूर्वधारणा या पूर्वाग्रह पर अडिग रहता है।
- **पूर्वाग्रह में संवेगात्मक रंग होता है-** पूर्वाग्रह में सवेगात्मक रंग होते हैं और वे किसी समूह, धर्म जाति के लोगों के या तो अनुकूल होते हैं, या प्रतिकूल होते हैं। यदि पूर्वाग्रह अनुकूल हुए तो व्यक्ति दूसरे समूह, धर्म या जाति के लोगों के प्रति अधिक स्नेह एवं प्रेम दिखलाता है। परन्तु यदि पूर्वाग्रह प्रतिकूल हुए तो व्यक्ति दूसरे जाति, धर्म या समूह के व्यक्तियों के प्रति घृणा, द्वेष आदि संवेग के रूप में दिखलाता है। पूर्वाग्रह चाहे अनुकूल हो या प्रतिकूल, उसमें संवेगात्मक रंग निश्चित रूप से होता है।
- **पूर्वाग्रह निर्णय चेतन और अचेतन होते हैं-** पूर्वाग्रह निर्णय यद्यपि चेतन और अचेतन दोनों स्तर पर निर्मित होते हैं। फिर भी यह देखा गया है कि अधिकांश व्यक्ति कभी भी जान बूझ कर यह निर्णय नहीं लेता है कि विशेष जाति के रूप में लोग बुरे हैं या उनसे घृणा करनी चाहिए। अतः व्यक्ति को न तो याद रहता है और न पता चलता है कि किस प्रकार उसमें पूर्वाग्रहित निर्णय उत्पन्न हुए हैं। इसलिए कहा जाता है कि पूर्वाग्रहित निर्णय अधिकाशतः अचेतन होते हैं।
- **पूर्वाग्रह का सम्बन्ध वास्तविकता से नहीं होता है-** पूर्वाग्रहित निर्णय और वास्तविकता में कोई सम्बन्ध नहीं होता है, क्योंकि इन पूर्वाग्रहित निर्णयों के आधार पर वास्तविक जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती है। सत्य केवल इतना ही है कि प्रत्येक व्यक्ति में पूर्वग्रहित निर्णय होते हैं और वह इसके अनुसार व्यवहार भी करता है। सत्यता पूर्वग्रहित निर्णयों के अनुसार भी हो सकती है और इसके विपरीत भी हो सकती है, जैसे निग्रो को तुच्छ दृष्टि से देखा जाता है,उन्हें अच्छा खिलाड़ी नहीं समझा जाता है,परन्तु वह खेल में श्रेष्ठता प्राप्त कर रहे हैं।
- **पूर्वाग्रह दृढ़ एवं स्थिर सामान्यीकरण पर आधारित होते हैं-** पूर्वाग्रह में दृढ़ता पायी जाती है तथा यह स्थिर सामान्यीकरण पर आधारित होते हैं। पूर्वग्रहित व्यक्ति के सामने उसके विश्वास एवं विचार के विरोधी विचार भी यदि प्रस्तुत किये जाते हैं तो वह अपनी पूर्वधारणा में परिवर्तन लाने के लिए तैयार नहीं होता है। इसका कारण यह है कि पूर्वधारणा का सम्बन्ध कुछ दृढ़ एवं स्थिर विचारों , अंधविश्वासों

एवं सामाजिक रीति-रिवाजों से होता है न कि विवेक तर्क एवं बुद्धि से। स्पष्ट है कि पूर्वधारणा काफी दृढ़ एवं स्थिर विचारों पर आधारित होती है।

- **पूर्वग्रहित निर्णय हमें सन्तोष प्रदान करते हैं-** पूर्वग्रहित निर्णय यद्यपि सामाजिक दृष्टि से हानिकारक हैं, फिर भी समूह के लोगों में यह इसलिए विद्यमान है कि क्योंकि इनमें हम सभी को सन्तोष मिलता है। कभी पूर्वग्रहित निर्णयों के माध्यम से हम श्रेष्ठता की भावना का अनुभव कर सन्तोष प्राप्त करते हैं। तो कभी पूर्वग्रहित निर्णयों से हिंसा और शत्रुता का बहाना मिलता है। इसलिए सन्तोष का अनुभव प्राप्त होता है।

- **पूर्वाग्रह पूणरूपेण किसी समूह की ओर संचालित होते हैं-** पूर्वाग्रह की एक विशेषता यह भी है कि इसका निशाना कोई विशेष व्यक्ति नहीं होता है, बल्कि पूरे समूह की ओर संचालित होता है। अमेरिका में प्रजातीय पूर्वधारणा से ग्रसित गोरे द्वारा एक निग्रो के प्रति इसलिए घृणा की जाती है क्योंकि वह विशेष समुदाय अर्थात निग्रो समुदाय का सदस्य है। वैयक्तिक गुणों में श्रेष्ठता के बावजूद जो भी व्यक्ति उस समूह का सदस्य होगा, उसके प्रति उच्च जाति के लोगों में उसी प्रकार का प्रतिकूल पूर्वाग्रह होगा।

- **पूर्वाग्रह प्रायः नकारात्मक होते हैं-**पूर्वाग्रह प्रायः नकारात्मक होते हैं। इसी कारण लोगों मे दूसरे वर्ग या समुदाय के प्रति असहिष्णुता,आक्रामकता, न्याय तथा मानवता का अभाव पाया जाता है।

- **पूर्वाग्रह में मानवता का अभाव होता है-**पूर्वाग्रह के कारण लोगों में मानवता की भावना घटती है। लोग दूसरों के प्रति उदासीनता, आक्रामकता, शत्रुता तथा अस्वीकार्यता का व्यवहार करते हैं। साम्प्रदायिक दंगे आज इसी कारण अधिक होते हैं।

- **पूर्वाग्रह तथा ऐतिहासिक घटनाएँ-** कभी-कभी मानव इतिहास में ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित हो जाती हैं जो मानव की आधार भूत विचारधाराओं, विश्वासों एवं अभिवृत्तियों को एक नवीन रूप प्रदान करती हैं। ऐसी एक महान घटना कोलम्बस द्वारा अमेरिका महाद्वीप की खोज थी। अमेरिका महाद्वीप की खोज के उपरान्त अनेक यूरोपीय प्रजातियों एवं राष्ट्रों के लोग वहाँ गये और उन्होंने वहाँ की आदिवासी जातियों पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। इस प्रकार यूरोप के गोरे लोगों ने अमेरिका के नीग्रों को अपने अधीन कर अपनी प्रजातीय श्रेष्ठता की झूठी एवं अवैज्ञानिक आधार पर घोषणा कर दी। आगे चलकर यूरोपीय लोगों का यह एक विशेष पूर्वाग्रह बन गया कि वह काले लोगों से मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में श्रेष्ठतर हैं।

- **पूर्वाग्रहों का युक्तिकरण-**अपने-अपने पूर्वाग्रहों के समर्थन, प्रचलन एवं स्थायित्व के लिए प्रायः प्रत्येक मानव-समूह अपनी-अपनी युक्तियाँ अवश्य खोज लेता है, जैसे भारत में उच्चजाति के लोगों ने अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए यह उदाहरण दिया कि ब्राह्मण जाति का जन्म ब्रह्मजी के मुख से और शूद्रों का जन्म ब्रह्मजी के चरणों से हुआ है। इसी प्रकार की अवैज्ञानिक युक्तियों के आधार पर अफ्रीका के गोरे लोग वहाँ के नीग्रो लोगों से अपनी प्रजातीय श्रेष्ठता के ढोल पीटते हैं।

- **पूर्वाग्रह और अवैज्ञानिकता-**पूर्वधारणाओं और अवैज्ञानिक विचार धाराओं का घनिष्ठ सम्बन्ध है। पूर्वधारणायें प्रायः प्राचीन परम्पराओं, विचारधारओं एवं अशिक्षित युग की देन हैं। पूर्वधारणाओं की उत्पत्ति मानव-मस्तिष्क में बाल्यकाल से ही प्रारम्भ होती है। एक बालक जैसी धारणाएँ, विचार, विश्वास एवं अभिवृत्ति अपने माता-पिता से सुनता एवं देखता है, वही वह स्थायी रूप् से ग्रहण करता चला जाता है, और अन्त में वैसे ही विचार, विश्वास और धारणाएँ उस बालक के व्यक्तित्व के अभिन्न अंग बन जाते हैं।

5.6 पूर्वाग्रह के प्रकार

i. **प्रजातीय पूर्वाग्रह-** ये वे पूर्वाग्रह हैं जिनमें एक प्रजाति के सदस्य दूसरी प्रजाति की तुलना में अपने को श्रेष्ठ समझते हुए उसके प्रति अनादर, अवहेलना, घृणा आदि की भावनाओं का पोषण करते हैं। प्रजातीय पूर्वाग्रह तब बड़े व उग्र रूप में व्यक्त होते हैं, जब एक प्रजाति के सदस्य अपने को दूसरी प्रजाति के सदस्यों की तुलना में शारीरिक एवं मानसिक गुणों में श्रेष्ठ समझते हैं और दूसरों को बड़ा निम्नस्तरीय मानते हुए उनके साथ सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक सभी प्रकार के भेद-भाव करते हैं, स्वयं को श्रेष्ठ समझने वाली प्रजाति यदि शासक वर्ग की होती है तो वह दूसरी प्रजाति की अपनी प्रजा पर अत्याचार करने से भी नहीं चूकती। प्रजातीय पूर्वाग्रह के मुख्य रूप से चार आधार बताए गये हैं- उत्तम वर्ण या रंग, रक्त की श्रेष्ठता, मानसिक योग्यता एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता। लेकिन वैज्ञानिक दृष्टि से इन आधारों की कोई भी प्रामाणिकता सिद्ध नहीं जा सकती। केवल रंग के आधार पर कोई व्यक्ति या प्रजाति उत्तम बने इसे वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार मानव रक्त चार समूहों में विभाजित है और इन रक्त समूहों में उत्तम का कोई प्रश्न नहीं उठता। मानसिक योग्यता का आधार भी ठोस नही है, क्योंकि यदि समान पर्यावरण में विभिन्न प्रजाति के लोगों को रखा जाय तो उनके बुद्धि स्तर में कोई विशेष अन्तर नहीं पाया जायेगा। बुद्विमान व्यक्ति केवल गोरी जाति में ही होते है ऐसा नहीं है। सांस्कृतिक श्रेष्ठता का गीत भी व्यर्थ है। गोरी प्रजातियाँ सास्ंकृतिक आधार पर अपनी श्रेष्ठता की बात करती हैं, लेकिन वे भूल जाती हैं कि जब यूरोप असभ्य था, तब भारत, चीन और मिश्र की सभ्यताएँ बुहत अधिक विकसित हो चुकी थीं।

ii. **धार्मिक पूर्वाग्रह-**यद्यपि सभी धर्म सिद्धान्त रूप में धार्मिक सहिष्णुता और मानव एकता पर बल देते हैं लेकिन व्यवहार में विभिन्न धर्मावलम्बियों में एक दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह दिखायी देते हैं। विभिन्न धर्मों के लोग दूसरे धर्मावलम्बियों को प्रायः अन्धविश्वासी, अज्ञानी आदि समझने की पूर्वधारणाओं से ग्रस्त होते हैं। प्रत्येक धर्म में एक अलौकिक शक्ति पर विश्वास किया जाता है और उस धर्म के लोग यह विश्वास करके चलते हैं कि उनकी यह अलौकिक शक्ति सर्वश्रेष्ठ शक्ति है जिसकी तुलना में दूसरे धर्मों के भगवान गौड़ हैं। इसी तरह प्रत्येक धर्म के अनुयायी अपने धार्मिक आचार-विचारों, सिद्धान्तों, आदर्शों , धार्मिक कर्मकाण्डों को दूसरे धर्मों के आचार विचारों आदि से अच्छा समझते हैं। इस प्रकार के मनोभावों के फलस्वरूप विभिन्न धार्मिक जन समूहों में एक दूसरे के प्रति असहयोग, अवहेलना यहाँ तक कि घृणा

आदि भाव पनपते हैं और अनेक बार तो भारी तनाव तथा सघंर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। धर्म पर आधारित पूर्वाग्रहों के कारण ही कई बार धर्म के नाम पर खूनी सघंर्ष हुए हैं।

iii. **जातीय पूर्वाग्रह-** भारत एक ऐसा देश है जिसमें बहुत जाति के लोग रहते हैं। प्रायः देखा गया है कि एक जाति के लोग दूसरे जाति के लोगों को अपने से तुच्छ व गिरा हुआ समझते हैं तथा उनके प्रति भेदभाव दिखलाते हैं। इसे ही जाति पूर्वाग्रह की संज्ञा दी जाती है। जाति पूर्वाग्रह का एक लाभ यह होता है कि एक जाति के लोग आपस में एक-दूसरे को एक समाज का सदस्य मानते हैं, चाहे वे किसी क्षेत्र, व्यवसाय या वर्ग के हों । फलस्वरूप उनमें अपनी जाति के नाम पर एकता बनी रहती है। इसका स्पष्ट परिणाम यह होता है कि उनका पूर्वाग्रह अपनी जाति के लोगों के प्रति स्वीकारात्मक होता है,परन्तु अन्य जाति के लोगों के प्रति नकारात्मक होता है और उनके प्रति शत्रुता एवं विद्वेष बढ़ जाता है जिसकी अधिक मात्रा होने से जातीय दंगो का जन्म होता है।

iv. **राजनीतिक पूर्वाग्रह-** हम देखते हैं कि एक राजनीतिक दल के सदस्य अपने दलीय आदर्शों और सिद्धान्तों को दूसरे दल के आदर्शों की तुलना में अच्छा बताते हैं। अपने को दूसरे की तुलना में अधिक नैतिक और स्वागत योग्य घोषित करते हैं। सत्तारूढ़ दल के सदस्यों में राजनीतिक पूर्वाग्रह प्रायः कटु होता है और उस दल के सदस्य अपने हितों की रक्षा के लिए विरोधी दलों के सदस्यों के प्रति पक्षपात करने का कोई अवसर सम्भवतः नहीं चूकते।

v. **आर्थिक वर्ग में पूर्वाग्रह -** श्रमिकों में पूँजीपति वर्ग के विरूद्ध और इसी प्रकार पूँजीपतियों में श्रमिकों के विरूद्व, जो पूर्वाग्रह देखने को मिलते हैं,वो सभी को ज्ञात हैं। श्रमिक प्रायः यह धारणा बनाये रखते हैं कि उनके सभी कष्टों के लिए पूँजीपति वर्ग अत्तरदायी है। इसी प्रकार पूँजीपति या मिल मालिक इस पूर्वाग्रह से ग्रस्त होते हैं कि श्रमिक उनके सच्ची हितैषी कभी नहीं हो सकते। जब दोनों ही पक्ष एक दूसरे को अपना शुभचिन्तक न मानने का पूर्वाग्रह रखते हैं तो दोनों के बीच मनोमालिन्य का प्रसार होता है और फलस्वरूप औद्योगिक संघर्ष, आर्थिक शोषण आदि जोर पकड़ते हैं।

vi. **भाषा पूर्वाग्रह -**भारत में बहुत जाति के लोग रहते हैं, उनकी भाषा भी अलग-अलग होती है, जिससे भाषा पूर्वाग्रह का जन्म होता है। इस तरह की पूर्वधारणा में एक भाषा बोलने वाले सभी व्यक्ति अपने को एक समूह का सदस्य मानकर आपस में कुछ एकता दिखलाते हैं तथा दूसरी भाषा बोलने वाले लोगों को अपने से तुच्छ समझकर उनके प्रति कुछ विद्वेष भाव भी दिखलाते हैं। कुछ ऐसे पूर्वाग्रह बन जाते हैं कि अपनी भाषा बोलने वाला व्यक्ति अपना और दूसरी भाषा बोलने वाला व्यक्ति पराया मालूम पड़ता है। अभी भी दक्षिण भारत के लोग हिन्दी भाषा के प्रति एक नकारात्मक मनोवृत्ति बनाये रखे हुए हैं और उन्हें इस बात का डर हमेशा बना रहता है कि कहीं इस भाषा को हम पर थोप न दिया जाय।

vii. **यौन पूर्वाग्रह -**आधुनिक युग में विभिन्न समाजों में आज भी पुरूषों एवं महिलाओं में भेदभाव देखा जाता है। आज भी यौन आधारित भूमिकाओं का प्रभाव दिखायी पड़ता है। आज भी हर संस्था, संगठन एवं संसद में भी पुरूष अधिक हैं। वे महिलाओं को बराबरी का दर्जा देने में बाधा डाल रहें है। यह प्राचीन परम्परा आज भी बनी हुई है। पुरूषों को अधिक योग्य, सक्षम, विचारवान एव प्रभावशाली माना जाता है। महिलाओं को शान्त, एकान्तप्रिय कम सामाजिक होने की सलाह दी जाती है। यदि कोई महिला

योग्य निकल जाती है तो अपवाद मान लिया जाता है। अर्थात लिगं आधारित पूर्वाग्रह का प्रभाव समाज में आज भी पाया जाता है।

viii. **साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह -**साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह से तात्पर्य किसी विशेष सम्प्रदाय या समुदाय के प्रति दूसरे समुदाय के लोगों की मनोवृत्ति है। भारत में तीन समुदाय अर्थात हिन्दू समुदाय, मुस्लिम समुदाय एवं सिक्ख समुदाय की मनोवृत्तियाँ एक-दूसरे के प्रति तीक्ष्ण हैं। फलस्वरूप इनमें से एक समुदाय के लोंगों के प्रति अधिक पूर्वाग्रहित हैं। समय-समय पर हिन्दू-मुस्लिम में साम्प्रदायिक दंगे तथा पजांब में हिन्दू एवं सिक्खों में साम्प्रदायिक दंगे इसी तरह के पूर्वाग्रह के ही उदाहरण हैं।

ix. **क्षेत्रीय पूर्वाग्रह-**प्रायः यह देखा गया है कि शहर में रहने वाले व्यक्ति अपने को अधिक बुद्धिमान, चतुर एवं आधुनिक समझते हैं,तथा देहात या गाँव में रहने वाले व्यक्ति को वे मन्दबुद्धि एवं नासमझ तथा बेवकूफ समझते हैं। इतना ही नहीं, शहरी क्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों के भी पूर्वाग्रह आपस में कुछ अलग-अलग होते हैं। दिल्ली और मुम्बई जैसे महानगरों में रहने वाले व्यक्तियों को छोटे शहर में रहने वाले व्यक्ति प्रायः अधिक धूर्त खुदगर्ज समझते हैं।

x. **गन्ध पर आधारित पूर्वाग्रह-** विभिन्न मनुष्यों के शरीर की गन्ध में थोड़ा बहुत अन्तर होता है। कई बार ऐसे उदाहरण देखने को मिलते हैं कि किसी गन्ध विशेष से किसी व्यक्ति विशेष को चिढ़ सी उत्पन्न हो जाती है। और जब कभी उस गन्ध वाला कोई भी व्यक्ति या व्यक्ति समूह उसे मिलता है तो उसके हृदय में उस व्यक्ति के प्रति प्रतिकूलता के भाव जड़ जमाए रखते हैं। जो व्यक्ति सिगरेट या बीड़ी की गन्ध पसन्द नहीं करते, वे ऐसे लोगों के पास बैठने से हिचकते हैं जो धूम्रपान करते हैं। प्रायः ऐसे लोगों में धूम्रपान करने वाले व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रह बन जाता है। और वे उन्हें कुछ अच्छी निगाह से नहीं देखते। लम्बे समय तक सम्पर्क में रहने पर गन्ध पर आधारित पूर्वाग्रह में परिवर्तन भी आ सकता है। किम्बल यंग ने अपने अध्ययन में देखा कि जो श्वेत लोग हब्शियों के साथ लम्बे समय तक सम्पर्क में रहे उन्हें हब्शियों के शरीर की गन्ध अच्छी लगने लगी। वेशभूषा आदि पर आधारित पूर्वाग्रह पर भी यही बात लागू होती है।

xi. **वेशभूषा पर आधारित पूर्वाग्रह-**वेशभूषा पर आधारित पूर्वाग्रह भी समाज में प्रदर्शित होते हैं । जैसे- शहरी लोग गाँव वालों की वेशभूषा देखकर हँस पड़ते हैं और उन्हें गंवार तथा असभ्य भी कहते हैं। दूसरी तरफ गाँव वाले शहर की वेशभूषा के कारण उन्हें शर्म-हया से विहीन, नक्शे बाज तथा नग्नता-पसन्द कहते पाए जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न प्रकार के प्रान्तों के पहनावे में भी अन्तर देखा जाता है। उसे देखकर लोग एक-दूसरे की हँसी उड़ते हैं।

xii. **वर्ण पर आधारित पूर्वाग्रह-** वर्ण पर आधारित पूर्वधारणाएँ सब स्थानों पर पायी जाती हैं। काले-गोरों का भेद इत्यादि वर्ण पर ही आधारित पूर्वधारणा है। जब वर्ण पर आधारित पूर्वधारणा बन जाती है तो व्यक्तियों के व्यवहार, स्वभाव, बुद्धि व क्षमता का अनुभव इन्हीं के आधार पर लगाया जाता है।

xiii. **मुखाकृतियों पर आधारित पूर्वाग्रह-**मुखाकृतियों में भिन्नता के कारण कभी-कभी लोगों में एक-दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह उत्पन्न हो जाता है। उदाहरणार्थ- कभी किसी व्यक्ति से जब हमें किन्हीं कारणों से विरोध होता है तो उसी प्रकार की मुखाकृति के प्रति हमारे हृदय में एक पूर्वधारणा बन जाती है और जहाँ कहीं

उस मुखाकृति का व्यक्ति हमें दिखायी देता है, वहीं उसके प्रति हमारे मन में अवहेलना जागृत हो जाती है।

xiv. **संस्कृति पर आधारित पूर्वधारणाएँ**-व्यक्ति अपनी संस्कृति के प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाता है। वह अन्य संस्कृति को निम्न दृष्टि से देखता है। भारतीय अपनी संस्कृति को पाश्चात्य संस्कृति से श्रेष्ठ मानते हैं। इसी प्रकार पाश्चात्य संस्कृति वाले भारतीय संस्कृति को बहुत हीन मानते हैं। इसी प्रकार विभिन्न समूहों में संस्कृति के आधार पर पूर्वधारणा बन जाती है।

अभ्यास प्रश्न

1. मेयर्स के अनुसार ''पूर्वाग्रह किसी समूह या उसके सदस्यों के प्रति एक अनुचित_____मनोवृत्ति को कहा जाता है''।
2. मनोवृत्ति होने के नाते पूर्वाग्रह में _____संघटक मौजूद होते हैं।
3. नकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में पूर्वाग्रह होने पर व्यक्ति दूसरे समूह के सदस्यों के प्रति_____दिखलाता है।
4. पूर्वाग्रहों का जन्म_____से होना प्रारम्भ हो जाता है।
5. पूर्वाग्रह का अर्थ है_____।
6. दूसरों के प्रति तार्किकता विहीन अभिवृत्ति को कहा जाता है-
    a. साम्प्रदायिकता
    b. विचारधारा
    c. पूर्वाग्रह
    d. रूढ़ियुक्ति
7. पूर्वाग्रह एक तरह की मनोवृत्ति है।
    a. अर्जित
    b. विवेकहीन
    c. नकारात्मक
    d. उपरोक्त सभी
8. सामाजिक असमानता पूर्वाग्रह को जन्म देती है। (सत्य /असत्य)
9. पूर्वाग्रह का हस्तान्तरण पीढ़ी दर पीढ़ी होता रहता है। (सत्य /असत्य)
10. पूर्वाग्रह का सम्बन्ध वास्तविकता से होता है। (सत्य /असत्य)
11. पूर्वाग्रह भी अभिवृतियॉ है। (सत्य /असत्य)
12. पूर्वाग्रह एक वांछित प्रवृत्ति है। (सत्य /असत्य)
13. धार्मिक असहिष्णुता पूर्वाग्रह को बढ़ाती है। (सत्य /असत्य)
14. पूर्वाग्रह में मानवता का अभाव होता है। (सत्य /असत्य)
15. निरंकुश व्यक्तियों में पूर्वाग्रह अधिक पाया जाता है। (सत्य /असत्य)

16. स्वीकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में व्यक्ति पूर्वाग्रह होने पर दूसरे व्यक्ति के प्रति घृणा दिखलाता है।(सत्य /असत्य)
17. पूर्वाग्रह एक अर्जित प्रक्रिया है। (सत्य /असत्य)

5.7 सारांश

जिस प्रकार मनोवृत्ति समाज मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण विषय है, उसी प्रकार पूर्वाग्रह, पक्षपात तथा रूढ़ियुक्तियाँ भी महत्वपूर्ण हैं। मुख्यतः आधुनिक चिन्तायुक्त, उग्रवादी तथा आतंकवादी सामाजिक परिप्रेक्ष्य में इन विषयों की महत्ता तथा इनको समझने, इनके मनोगतिकीय कारणों का पता लगाने तथा दूर करने के उपायों की जानकारी की जितनी आवश्यकता है शायद उतनी कभी नहीं थी। अन्य धर्म, जाति, क्षेत्र तथा भाषा-भाषी के लोगों के साथ अन्तः क्रिया करके सम्बन्ध स्थापित करते और निर्णय करते समय बहुधा हमारे पूर्वाग्रह तथा रूढ़ियुक्तियाँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। और हम उनके विषय में गलत व आधाररहित धारणा बना लेते हैं। इसी प्रकार उनके विषय में हमारे निर्णय पक्षपात युक्त हो जाते हैं, जिनके कारण समूहों तथा व्यक्तियों के मध्य प्रतिद्वन्द उत्पन्न हो जाता है। पूर्वधारणाएं ऐसे निर्णायों पर आधारित होती हैं जिनका कोई अस्तित्व नहीं होता। ये दूसरों के सम्बन्ध में प्रतिकूल भावना प्रदर्शित करती हैं। इनके निर्माण में व्यक्तिगत अन्तर भी दिखायी पड़ते हैं। विभिन्न जाति समूहों या राष्ट्र-समूहों में जो शारीरिक विषमताएँ दिखायी पड़ती हैं। उनके आधाार पर भी पूर्वधारणाओं का निर्माण हो जाता है। पूर्वधारणाओं का विकास परम्पराओं, रीतिरिवाज के कारण भी हो सकते हैं। इनमें उस समय अधिक वृद्धि हो जाती है जब एक समूह को दूसरे समूह से आक्रमण का भय होता है।

पूर्वाग्रह जिस प्रकार भारतीयों में पायी जाती हैं उसी प्रकार इग्लैण्ड और जर्मनी के निवासियों में भी पायी जाती है। पूर्वाग्रहों का आधार धर्म, भाषा, प्रजाति एवं राष्ट्र कुछ भी हो सकता है। बालक हो या वृद्ध, नर हो या नारी, ग्रामीण हो या नगरीय सभी में पूर्वाग्रह का थोड़ा-बहुत अंश अवश्य पाया जाता है।

5.8 शब्दावली

1. **पूर्वाग्रह** - पूर्वनिर्णय
2. **प्रत्यक्षण** - देखने, सोचने, समझने की योग्यता
3. **संघटक** - एक पूर्ण वस्तु बनाने में सहायक
4. **असहिष्णुता** - आतुर, अधीर, उतावलापन
5. **मनोमालिन्य** - नफरत, मेल-जोल न रखना

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. नकारात्मक
2. तीन
3. घृणा
4. बाल्यकाल
5. पूर्वनिर्णय
6. पूर्वाग्रह

7. उपरोक्त सभी
8. सत्य
9. सत्य
10. असत्य
11. सत्य
12. असत्य
13. सत्य
14. सत्य
15. सत्य
16. असत्य
17. सत्य

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, अरूण कुमार समाज मनोविज्ञान की रूप रेखा, मोतीलाल बनारसी दास, प्रकाशन दिल्ली।
2. लवानिया,एम.एम. सामाजिक मनोविज्ञान, रिसर्च पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
3. सिंह, आर. एन. आधुनिक समाज मनोविज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
4. माथुर,एस. एस. समाज मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. हस्नैन, एन. नवीन समाज मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
6. खान बी. एन. तथा गुप्ता, किरन आधुनिक समाज मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
7. श्रीवास्तव , डी. एन., पाण्डे,जगदीश सिंह, रणजीत, आधुनिक समाज मनोविज्ञान, हर प्रसाद भार्गव आगरा।

5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूर्वाग्रह से आप क्या समझते है ? उदाहरण सहित इनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए ?
2. पूर्वाग्रह का विकास कैसे होता है ? इसके प्रमुख कारणों का वर्णन कीजिए।
3. पूर्वाग्रह के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिए।
4. पूर्वाग्रह की परिभाषा दीजिए तथा पूर्वाग्रह के किन्ही दो प्रकार का वर्णन कीजिए।
5. टिप्पणी लिखिए -
    a. पूर्वाग्रह के लाभ तथा हानियाँ
    b. प्रजातीय पूर्वाग्रह
    c. पूर्वाग्रह की उत्पत्ति
    d. पूर्वाग्रह के नकारात्मक प्रभाव

इकाई 6- पूर्वाग्रह के कारण, पूर्वाग्रह के प्रभाव पूर्वाग्रह एवं विभेदन में भेद(Causes of Prejudice, Effects of Prejudice, Difference between Prejudice and Discrimination)

इकाई संरचना-

6.1प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 पूर्वाग्रह के कारण
6.4 पूर्वाग्रह के प्रभाव
6.5 विभेदन
6.6 पूर्वाग्रह एवं विभेदन में भेद
6.7 सारांश
6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
6.10 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

पूर्वाग्रह एक ऐसी मनोवृत्ति है जो व्यक्ति को किसी समूह या उसके सदस्यों के प्रति अनुकूल अथवा प्रतिकूल ढंग से सोचने, प्रत्यक्षीकरण करने, महसूस करने, तथा कार्य करने के लिए उन्मुख करती है। जैसा कि पहले हम जान चुके हैं कि पूर्वाग्रह के कई प्रकार होते हैं। सभी व्यक्ति में सभी तरह के पूर्वाग्रह नहीं होते। किसी में यौन, जाति, उम्र तो किसी में प्रजातीय व धार्मिक पूर्वाग्रह पाया जाता है। पूर्वाग्रह के निर्माण, विकास और संपोषण को अनेक कारक प्रभावित करते हैं। यह अपेक्षाकृत स्थायी या दीर्घकालिक प्रक्रम है जो व्यक्ति से अधिक समाज के स्तर पर सक्रिय रहता है। यह व्यक्तियों द्वारा अनुभव किये जाने वाले सामाजिक यथार्थ का एक अपरिहार्य अंग होता है। यहाँ यह विचार किया जायेगा कि पूर्वाग्रहों का विकास क्यों होता है ? इसे कौन-कौन से कारक प्रभावित करते हैं?

6.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप -

1. पूर्वाग्रह के कारण जान सकेगें।
2. पूर्वाग्रह के प्रभाव को समझ पाएंगे ।
3. विभेदन का अर्थ एवं स्वरूप जान सकेगें।
4. पूर्वाग्रह एवं विभेदन में भेद जान सकेगें।

6.3 पूर्वाग्रह के कारण

हम दूसरों के बारे में राय क्यों बनाते हैं या दूसरों के प्रति पूर्वाग्रह का निर्माण क्यों करते हैं ? आलपोर्ट ने अपनी पुस्तक 'दी नेचर ऑफ प्रिजूडिस' में पूर्वाग्रह के कारणों को कुछ विशेष सिद्धान्तों एवं उपागमों के अन्तर्गत बताया है। व्यक्ति के स्तर पर ये कारक उसके अधिगम एवं अन्य प्रक्रमों पर निर्भर करते हैं। पूर्वाग्रह के कारकों में मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, परिस्थितिजन्य, संज्ञानात्मक आदि हैं। इन सभी कारकों में से कुछ प्रमुख कारकों का उल्लेख किया जा रहा है-

i. **सामाजिक अधिगम-** बच्चों में अपने माता-पिता, भाई-बहनों, अध्यापकों, पड़ोसियों के व्यवहार को अनुकरण करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। समाजीकरण के इन माध्यमों से उन्हें जैसी शिक्षा मिलती है, उनमें वैसी ही मनोवृत्ति विकसित होती है। यही कारण है कि यदि माता-पिता किसी जाति या धर्म के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित होते हैं तो उनके बच्चों में भी उसी तरह का पूर्वाग्रह विकसित हो जाता है। अधिगम व अनुकरण के आधार पर ही बच्चा दूसरी जाति के लोगों के व्यवहारों और मूल्यों आदि के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करता है। इसी आधार पर वह विभिन्न प्रकार के पूर्वाग्रहों को सीख लेता है। अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से इस तथ्य की पुष्टि हुई है कि बच्चे अपने माता-पिता की पूर्वाग्रही मनोवृत्ति को काफी कम उम्र में सीख लेते हैं।

ii. **शिक्षा-** पूर्वाग्रह को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक शिक्षा है। शिक्षा औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों तरीकों से दी जाती है। औपचारिक शिक्षा विद्यालय में दी जाती है। औपचारिक शिक्षा अधिक होने से व्यक्तियों में किसी समस्या या अन्य व्यक्तियों के बारे में तथ्यपरक रूप से सोचने-समझने की शक्ति विकसित होती है। अनौपचारिक शिक्षा परिवार के सदस्यों द्वारा बच्चों को दी जाती है। माता-पिता बच्चों को इस बात की शिक्षा देते हैं कि उन्हें किस समूह के बच्चों के साथ खेलना चाहिए, कौन समूह ठीक है, और किस समूह से दूर रहना चाहिए। इस दिशा में हुए अध्ययनों में देखा गया है कि औपचारिक शिक्षा में जैसे-जैसे वृद्धि होती है; पूर्वाग्रहों की मात्रा उसी रूप में कम हो जाती है। आलपोर्ट (1954)एवं विलियम (1964) के अध्ययन के परिणाम से स्पष्ट हुआ है कि शिक्षित व्यक्तियों में अशिक्षित व्यक्तियों की अपेक्षा पूर्वाग्रह की मात्रा कम होती है।

iii. **जाति-** अपने देश में भिन्न-भिन्न जातियों के लोग रहते हैं। कुछ जातियाँ अपने को ऊँचा व श्रेष्ठ मानती हैं। ऊँची जाति के लोग निम्न जाति के लोगों के प्रति अधिक पूर्वाग्रही होते हैं। अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में पाया गया है कि उच्च जाति के हिन्दुओं में जाति पूर्वाग्रह निम्न जाति की हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक होती है। सिंह एवं भूषण (1969) ने पाया कि ब्राह्मण, कायस्थ एवं राजपूतों में निम्न जाति के लोगों की अपेक्षा अपनी जातियों को ऊँचा समझने की प्रवृत्ति अधिक होती है। कुछ अध्ययन परिणाम यह भी बतलाते हैं कि ब्राह्मण जाति के लोग अपने को अधिक श्रेष्ठ समझते हैं। इन अध्ययनों में यह भी देखा गया है कि भिन्न-भिन्न जाति के लोग अपनी जाति वाले लोगों के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं और दूसरी जाति वाले लोगों के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति रखते हैं। पश्चिमी देशों में भारतीय जाति की तरह कोई जाति नही होती है। फलतः इन देशों में जाति के नाम पर कोई पूर्वाग्रह नही होता है।

iv. **धार्मिक सम्बन्धन-** भारतवर्ष में अनेक धर्म के मानने वाले लोग रहते हैं। किसी भी धर्म को मानने वाले व्यक्तियों में उस धर्म के प्रति अगाध प्रेम व विश्वास होता है, वे उसे श्रेष्ठ समझते हैं और दूसरे धर्म के लोगों को हेय दृष्टि से देखते हैं। अपने धर्म के प्रति विधेयात्मक अभिवृत्ति जबकि दूसरे धर्म के लोगों के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति रखते हैं, जो पूर्वाग्रह को जन्म देते हैं। अनेक मनोवैज्ञानिक (सिंह 1980), चौधरी 1958 (हसन एवं सिंह 1973) के अध्ययनों से यह तथ्य सामने आया है कि हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में हिन्दुओं के प्रति अधिक पूर्वाग्रह होता है तथा परम्परागत, सामाजिक, राजनैतिक मनोवृत्तियाँ अधिक तीव्र होती हैं। धार्मिक विश्वास और अन्य विश्वास की कड़ी इतनी मजबूत हो जाती है कि उस विशेष धर्म के समक्ष अन्य धर्म उसे तुच्छ लगते हैं। दूसरे धर्म के प्रति पूर्वाग्रह जन्म ले लेता है।

v. **जनसंचार माध्यम-** पूर्वाग्रहों के निर्माण और विकास में सिनेमा, दूरदर्शन, समाचार-पत्र, पत्रिकाओं, रेडियो आदि की भूमिका महत्वपूर्ण है। इन माध्यमों के द्वारा हमें दूसरे व्यक्तियों एवं समूहों के बारे में तरह-तरह की सूचनाएँ मिलती हैं जिसके आधार पर पूर्वाग्रह निर्मित होता है। दूरदर्शन पर दिखाये जाने वाले कार्यक्रमों के बीच-बीच में अनेक प्रकार के विज्ञापन दिखाये जाते हैं जिससे प्रभावित होकर हम इन विज्ञापनों के अनुरूप व्यवहार करना सीखते हैं। एक अध्ययन में पाया गया कि जो महिलाएँ दूरदर्शन पर केवल ऐसे कार्यक्रम देखती थीं जिसमें महिलाओं की परम्परागत भूमिका पर अधिक बल डाला जाता था, उनमें महिलाओं के परम्परागत व्यवहारों के प्रति अधिक अनुकूल पूर्वाग्रह विकसित हो गया।

vi. **व्यक्तित्व विशेषताएँ-** अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में यह देखा गया है कि व्यक्ति का जैसा व्यक्तित्व होता है वैसा ही उसमें पूर्वाग्रहों का निर्माण होता है। दृढ़ चिन्तन, दण्डात्मक प्रवृत्ति आदि गुण जिन लोगों में प्रधान होता है, उनमें उन व्यक्तियों की अपेक्षाकृत पूर्वाग्रह अधिक होता है जिनमें ऐसे शीलगुण कम होते हैं। इसी प्रकार जिन लोगों में मैत्री की भावना अधिक पाई जाती है उनमें पूर्वाग्रह उन व्यक्तियों से भिन्न होते हैं जिनमें मैत्री की भावना कम मात्रा में पाई जाती है।

vii. **असुरक्षा और चिन्ता-** व्यक्ति में पूर्वाग्रह असुरक्षा की भावना तथा चिन्ता से विकसित होती है। जिस समाज के लोगों में जितनी ही अधिक असुरक्षा और चिन्ता की भावना पाई जाती है उतनी ही उनमें पूर्वाग्रहों के निर्माण और विकास की सम्भावना अधिक होती है। जिस व्यक्ति में अपनी नौकरी, व्यवसाय, सामाजिक स्तर आदि के बारे में असुरक्षा की भावना नहीं होती है, वह सदैव अन्य व्यक्तियों या समूहों के प्रति एक स्पष्ट एवं वस्तुनिष्ठ विचार विकसित करता है। फलस्वरूप उसमें पूर्वाग्रह जल्दी विकसित नहीं होता। इसी तरह जब व्यक्ति में चिन्ता का स्तर अधिक होता है तो उनमें पूर्वाग्रह की मात्रा भी बढ़ जाती है।

viii. **शहरी-ग्रामीण क्षेत्र-** मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन से यह स्पष्ट किया है कि ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों में पूर्वाग्रह तथा रुढ़िवाद की मात्रा शहरी क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों की पूर्वाग्रह एवं रुढ़िवाद की मात्रा से अधिक होती है। यह भी पाया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा शहरी क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों की मनोवृत्ति अधिक उदार होती है। परिणामस्वरूप इनमें पूर्वाग्रह कम होता है।

6.4 पूर्वाग्रह के प्रभाव (Effect of Prejudice)

आपने ईकाई 5 में जाना कि पूर्वाग्रह एक ऐसी मनोवृत्ति (Attitude) है जो धनात्मक (Positive) भी होती है तथा नकारात्मक (Negative) भी होती है। परन्तु अधिकतर मनोवैज्ञानिकों ने इसमें नकारात्मक प्रवृत्ति की प्रधानता को ही स्वीकार किया है। इसलिए इन लोगों ने नकारात्मक मनोवृत्ति को ही पूर्वाग्रह मान लिया है। जैसे- किसी चीज के दो पक्ष होते हैं, उसी ढंग से पूवाग्रह के भी दो पक्ष हैं। अतः इसके धनात्मक प्रभाव तथा नकारात्मक प्रभाव दोनों ही होते हैं। इसके प्रमुख धनात्मक प्रभाव निम्नांकित हैं-

1. पूर्वाग्रह द्वारा व्यक्ति की दमित इच्छाओं की संतुष्टि होती है। समाज के सबल या लाभान्वित समूह (Advantaged group) निर्बल या अलाभान्वित समूह (Disadvantaged group) के प्रति अपनी दमित इच्छाओं जिसमें घृणा, बैर-भाव आदि की प्रधानता होती है, कि सतुंष्टि कर सकते हैं।
2. पूर्वाग्रह द्वारा समाज के लाभान्वित समूह को अपनी निराशा तथा कुण्ठा (Frustration) को दूर करने में सहायता मिलती है।
3. पूर्वाग्रह से सबल समूह के सदस्यों में श्रेष्ठता की भावना उत्पन्न होती है तथा प्रतिष्ठा आवश्यकता की सतुंष्टि होती है। उच्च जाति के लोगों में पिछड़ी जाति एवं दलितों के प्रति जातीय पूर्वाग्रह विकसित होने से उनमें श्रेष्ठता की भावना जगती है एवं साथ-ही-साथ साथ उनकी प्रतिष्ठा आवश्यकता की संतुष्टि होती है।
4. पूर्वाग्रह में सबल समूह के सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति स्वीकारात्मक मनोवृत्ति होती है परन्तु अलाभान्वित समूह के सदस्यों के प्रति नकारात्मक मनोवृत्ति होती है। इसका एक विशेष लाभ यह होता है कि सबल समूह के सदस्यों में एकता तथा भाईचारा का सम्बन्ध तेजी से जगता है।
5. सेकर्ड तथा बैकमैन ने (Secord & Backman, 1974) ने यह बतलाया है कि पूर्वाग्रह से आर्थिक लाभ भी होता है। अगर कोई कर्मचारी (Employee) यह देखता है कि उसका बॉस किसी व्यक्ति के प्रति नकारात्मक मनोवृत्ति दिखलाने से खुश होता है तो वह तुरन्त उस व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रही (Prejudiced) होकर अपने बॉस को खुश कर देता है और अपनी पदोन्नति अन्य लाभ प्राप्त कर लेता है।

पूर्वाग्रह के नकारात्मक प्रभाव अधिक स्पष्ट रूप से देखने को मिलते हैं। प्रमुख ऐसे प्रभाव निम्नांकित हैं-

i. पूर्वाग्रह से सामाजिक संघर्ष (Social conflict) में वृद्धि होती है। पूर्वाग्रह के कारण ही हमें अक्सर हिन्दू-मुस्लिम दंगे एवं अन्य जातीय दंगे देखने को मिलते हैं। पूर्वाग्रह के कारण हिन्दू मुसलमान को तथा मुसलमान हिन्दू को घृणा एवं शक की निगाह से देखते हैं तथा ऐसी भावना धीरे-धीरे एकत्रित होकर दंगों के रूप में प्रस्फुटित होती है।
ii. पूर्वाग्रह से सामाजिक विघटन (Social disorganization) होता है। भिन्न-भिन्न तरह की पूर्वाग्रहों जैसे जातीय पूर्वाग्रह, साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह, धर्म से सम्बन्धित पूर्वाग्रह के कारण समाज उत्तरोत्तर खण्डित होता चला जाता है और प्रत्येक खण्ड में सामाजिक दूरी बढ़ती जाती है। मेयर्स (Myers, 1975) के

अनुसार जब समाज में सामाजिक दूरी अधिक बढ़ जाती है, तो इससे गृहयुद्ध की सम्भावना बढ़ जाती है।

iii. पूर्वाग्रह से राष्ट्रीय समाकलन (National Integration) के मार्ग में काफी कठिनाई होती है। विभिन्न तरह के पूर्वाग्रहों के कारण विभिन्न सम्प्रदाय के लोग आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं स्थापित कर पाते हैं। फलतः राष्ट्रीय अखण्डता के तहत चलाई जाने वाली परियोजनाओं को अभी तक काफी सफलता नहीं मिल पायी है।

iv. पूर्वाग्रह के कारण ही सरकार एवं समाजसेवी संस्थानों द्वारा चलाये गये मानव कल्याण प्रोग्राम अभी तक अपने लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सके हैं।

इस तरह से हम देखते हैं कि नकारात्मक प्रभाव स्वीकारात्मक प्रभाव से अधिक हानिकारक हैं। अतः पूर्वाग्रह के उद्भव (origin) तथा सम्पोषण (maintenance) आदि को रोकना अनिवार्य है।

6.5 विभेदन

किसी जाति, प्रजाति अथवा अल्पसंख्यक समूह के प्रति समूह सदस्यता के कारण उत्पन्न गलत अथवा अनुचित अभिवृत्तियों पर आधारित व्यवहार को विभेदन कहते हैं। यह सम्भव है कि बिना किसी पूर्वाग्रह के भी विभेदन हो और बिना किसी विभेदन के भी पूर्वाग्रह हो। पूर्वाग्रह विभेदन के रूप में परिलक्षित होगा अथवा नहीं, यह पूर्वाग्रह की तीव्रता तथा सामाजिक बाधाओं पर निर्भर करता है। फेल्डमैन का कथन है कि, ''पूर्वाग्रह की व्यवहारात्मक अभिव्यक्ति विभेदन कहलाती है। विभेदन में किसी विशेष समूह में सदस्यता के कारण उस समूह के सदस्यों के साथ धनात्मक या ऋणात्मक ढंग से व्यवहार किया जाता है।'' व्यक्ति में पूर्वाग्रह होने पर भी वह हमेशा लक्ष्य समूह के प्रति विभेदन दिखलायेगा ही, यह कोई जरूरी नहीं है। ऐसा इसलिए होता है कि सामाजिक परिस्थितियाँ ही कुछ ऐसी होती हैं जो पूर्व ग्रसित व्यक्ति को खुलकर विभेदन की अनुमति नहीं देती। उदाहरण के लिए, एक उच्च जाति का जातीय पूर्वाग्रह से ग्रसित अधिकारी कार्यालय में एक निम्न जाति के कर्मचारी के प्रति किसी प्रकार का विभेद नहीं दिखला सकता है क्योंकि दोनों ही सरकारी नौकर हैं और कानून सामाजिक विभेद की आज्ञा नहीं देता है।

एक व्यक्ति अपने घर में मुस्लिम किरायेदर रखने के प्रति पूर्वाग्रहित नहीं हो सकता फिर भी वह मुहल्लेवासियों के डर से अपना घर उसे किराये पर देने से इंकार कर सकता है यहाँ विभेद तो हो रहा है परंतु उसके पीछे कोई पूर्वाग्रह नही है।

6.6 पूर्वाग्रह एवं विभेदन में भेद

पूर्वाग्रह तथा विभेदन शब्दों का व्यवहार हम अक्सर करते हैं और प्रायः दोनों शब्दों का प्रयोग समान अर्थ में करते हैं। लेकिन यह सही नहीं है, दोनों दो भिन्न अर्थ वाले शब्द हैं। दोनों में निम्नलिखित अन्तर है-

i. पूर्वाग्रह एक तरह की अभिवृत्ति है, जबकि विभेदन पूर्वाग्रह को व्यक्त करने वाली क्रिया है। बैरन एवं बायर्न ने कहा है कि अपने से भिन्न किसी सामाजिक समूह के सदस्यों के प्रति व्यक्ति की नकारात्मक मनोवृत्ति को पूर्वाग्रह कहेंगे जबकि उसकी नकारात्मक क्रियाओं को विभेदन कहेंगे।

ii. पूर्वाग्रह के तीन पक्ष हैं जिन्हें संज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक कहते हैं, जबकि विभेदन में केवल क्रियात्मक पक्ष ही प्रधान होता है। उदाहरण के लिए एक ब्राह्मण हरिजनों के प्रति नकारात्मक तथा बैर पूर्ण मनोवृत्ति रखता है, यह पूर्वाग्रह है। इससे प्रभावित होकर वह हरिजनों को मन्दिर में जाने से रोकता है तथा धार्मिक व पवित्र पुस्तकों को पढ़ने पर पाबन्दी लगा देता है और इसका उल्लंघन करने पर शारीरिक दण्ड देता है, उसका यह व्यवहार विभेदन है।

iii. पूर्वाग्रह का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इसका सम्बन्ध तीन विमाओं अर्थात् संज्ञानात्मक, भावनात्मक एवं क्रियात्मक होता है। इसके विपरीत विभेदन का क्षेत्र सीमित होता है इसका सम्बन्ध केवल क्रियात्मक विमा से होता है।

iv. विभेदन के लिए पूर्वाग्रह एक कारण है जबकि विभेदन स्वयं उसका परिणाम है।

v. पूर्वाग्रह के बिना विभेदन सम्भव नहीं है जबकि विभेदन के बिना भी पूर्वाग्रह सम्भव है। उदाहरण के लिए यदि किसी ब्राह्मण में हरिजनों के प्रति नकारात्मक तथा बैरपूर्ण मनोवृत्ति नहीं हो तो वह हरिजनों के साथ विभेदमूलक व्यवहार नहीं करेगा, दूसरी ओर विभेदमूलक व्यवहार नहीं करने पर भी उस ब्राह्मण में नकारात्मक मनोवृत्ति हो सकती है।

अभ्यास प्रश्न

1. पूर्वाग्रह एक प्रकार है -
    a. मनोवृत्ति का
    b. मूल प्रवृत्ति का
    c. संवेग का
    d. प्रेरणा का
2. पूर्वाग्रह का एक मुख्य कार्य है-
    a. स्वधारणा का निर्माण
    b. आत्मविश्वास का प्रोत्साहन
    c. अहं प्रतिरक्षा
    d. इनमें से कोई नहीं
3. पूर्वाग्रह जन्मजात होते हैं। (सत्य/असत्य)
4. पूर्वाग्रह एक पक्षपातपूर्ण मत है। (सत्य/असत्य)
5. विभेदन पूर्वाग्रह की व्यवहारात्मक अभिव्यक्ति है। (सत्य/असत्य)
6. पूर्वाग्रह के कारण व्यक्ति विभेदन दिखायेगा ही। (सत्य/असत्य)

6.7 सारांश

भारतवर्ष में रहने वाले लोग भिन्न-भिन्न जाति, धर्म, सम्प्रदाय के ही नहीं हैं बल्कि भिन्न-भिन्न भाषाओं को बोलने वाले भी हैं। लेकिन फिर भी सभी में सांस्कृतिक एकता है। इसके बावजूद भी हम विभिन्न जातियों, धर्मों व सम्प्रदायों के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित हैं। जैसा कि आपको बताया जा चुका है कि पूर्वाग्रह के कई प्रकार होते हैं।

इनके विकास के कारण भी अलग-अलग होते हैं। पूर्वाग्रह के कारणों का अध्ययन मनोवैज्ञानिकों के साथ ही साथ समाजशास्त्रियों, मानवशास्त्रियों, इतिहासविदों ने भी किया है। इनमें मुख्य रूप से सामाजिक कारक यथा सामाजिक शिक्षण, औपचारिक, धार्मिक विश्वास तथा अन्धविश्वास, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, ग्रामीण-शहरी क्षेत्र, सामाजिक परिवेश, सामाजिक श्रेणीकरण आदि, मनोवैज्ञानिक कारकों में कुण्ठा तथा आक्रमण, सामाजिक संज्ञान, व्यक्तित्व । इसके अलावा सांस्कृतिक, प्रचार, आघातजन्य अनुभव, विफलता एवं नैराश्य भी पूर्वाग्रह के कारण हैं। जैसे- किसी चीज के दो पक्ष होते हैं, उसी ढंग से पूवाग्रह के भी दो पक्ष हैं। अतः इसके धनात्मक प्रभाव तथा नकारात्मक प्रभाव दोनों ही होते हैं। पूर्वाग्रह द्वारा समाज के लाभान्वित समूह को अपनी निराशा तथा कुण्ठा को दूर करने में सहायता मिलती है। इसका एक विशेष लाभ यह होता है कि सबल समूह के सदस्यों में एकता तथा भाईचारा का सम्बन्ध तेजी से जगता है। पूर्वाग्रह से सामाजिक संघर्ष में वृद्धि होती है। पूर्वाग्रह के कारण ही हमें अक्सर हिन्दू-मुस्लिम दंगे एवं अन्य जातीय दंगे देखने को मिलते हैं। विभिन्न तरह की पूर्वाग्रहों के कारण विभिन्न सम्प्रदाय के लोग आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं स्थापित कर पाते हैं। फलतः राष्ट्रीय अखण्डता के तहत चलाई जाने वाली परियोजनाओं को अभी तक काफी सफलता नहीं मिल पायी है। पूर्वाग्रह में लक्ष्य समूह के सदस्यों के प्रति किया जाने वाला ऋणात्मक व्यवहार विभेदन है। पूर्वाग्रह के कारण व्यक्ति जिस समूह के प्रति पूर्वाग्रह ग्रस्त होता है, उस समूह के सदस्य के साथ सामान्य बर्ताव नहीं करता है। उसे उन अधिकारों और लाभों से वंचित कर दिया जाता है जो अन्य समूह के सदस्य स्वाभाविक रूप से प्राप्त करते हैं। विभेदन और पूर्वाग्रह के बीच वही सम्बन्ध है जो व्यवहार और अभिवृत्ति के बीच होता है। पूर्वाग्रह की अभिवृत्ति के कारण कोई व्यक्ति विभेदन व्यवहार करेगा या नहीं? यदि करेगा तो कैसा करेगा? यह कई अन्य कारणों पर निर्भर करता है। पूर्वाग्रह एक तरह की अभिवृत्ति है, जबकि विभेदन पूर्वाग्रह को व्यक्त करने वाली क्रिया है। यह सम्भव है कि बिना किसी पूर्वाग्रह के भी विभेदन हो और बिना किसी विभेदन के भी पूर्वाग्रह हो।

पूर्वाग्रह का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इसका सम्बन्ध तीन विमाओं अर्थात् संज्ञानात्मक, भावनात्मक एवं क्रियात्मक होता है। इसके विपरीत विभेदन का क्षेत्र सीमित होता है इसका सम्बन्ध केवल क्रियात्मक विमा से होता है। विभेदन के लिए पूर्वाग्रह एक कारण है जबकि विभेदन स्वयं उसका परिणाम है।

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. a
2. a
3. असत्य
4. सत्य
5. सत्य
6. असत्य

6.9 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीवास्तव, डी0एन0, (दसवाँ संस्करण), 'सामाजिक मनोविज्ञान', साहित्य प्रकाशन, आगरा।

2. सिंह,अरुण कुमार,(2006)'समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. हसनैन, एन0, (1994) 'नवीन सामाजिक मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. त्रिपाठी, लालबचन, (1998.99) 'आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान', एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
5. मायर्स, डी0जी0, (1999) 'सोशल साइकोलॉजी', मैक्ग्रा हिल कॉलेज, न्यूयार्क।
6. सीकार्ड बेकमैन, (1974) 'सोशल साइकोलॉजी', मैक्ग्रा हिल इण्टरनेशनल बुक कम्पनी, टोकियो।

6.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूर्वाग्रह के मुख्य कारणों का वर्णन कीजिए।
2. पूर्वाग्रह तथा विभेदन में अन्तर बताइए।
3. पूर्वाग्रह केप्रभावों का उदाहरण सहित वर्णन कीजिये।

इकाई 7- पूर्वाग्रह एवं विभेद को दूर करने की विधियाँ, भारत में साम्प्रदायिकता(Methods of reducing Prejudice and Discrimination, Communalism in India and it's Causes)

इकाई संरचना-

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 पूर्वाग्रह एवं विभेदन दूर करने की विधियाँ
7.4 भारत में सम्प्रदायिकता
7.4.1 हिन्दू-मुसलमान साम्प्रदायिकता
7.4.2 हिन्दू-सिख साम्प्रदायिकता
7.5 सारांश
7.6 शब्दावली
7.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न एवं उनके उत्तर
7.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
7.9 उपयोगी सहायक ग्रंथ
7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

पिछली इकाईयों में आपने जाना कि पूर्वाग्रह क्या है ? इसका सम्पोषण व विकास कैसे होता है ? यह कितने प्रकार का होता है तथा इसके क्या-क्या प्रभाव होते हैं ? इस इकाई में हम पूर्वाग्रह को दूर करने के उपायों के बारे में बात करेंगे, साथ ही साम्प्रदायिकता के बारे में जानेंगे। पूर्वाग्रह एक ऐसी मनोवृत्ति है जिसका सामाजिक कुप्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। पूर्वाग्रह के कारण अन्तर-धार्मिक, जातीय व अन्तरवैयक्तिक संघर्ष देखने को मिलते हैं। इससे लोगों में भेदभाव, तनाव, साम्प्रदायिक दंगे आदि उत्पन्न होते हैं। पूर्वाग्रह को दूर व कम करने की विभिन्न विधियों का उल्लेख समाज मनोवैज्ञानिकों ने किया है। इस इकाई में आपको इन विधियों से अवगत कराया जायेगा ताकि आप इन्हें दूर कर सकें या कम कर सकें। साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह के प्रति तीव्र निष्ठा की भावना है। साम्प्रदायिकता के कारण लोग अपने जातीय समूह को विशेष महत्व देते हैं। यह एक अन्तर-धार्मिक संघर्ष की स्थिति पैदा करता है जिसमें आपसी घृणा, पक्षपात, पूर्वाग्रह तथा सन्देह पाये जाते हैं जिसके कारण सामाजिक तनाव उत्पन्न होता है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य होंगे कि:

1. पूर्वाग्रह एवं विभेदन को दूर करने की विधियों को जान सकें।
2. साम्प्रदायिकता का अर्थ जान सकें, और
3. भारत में साम्प्रदायिकता के बारे में जान सकें।

7.3 पूर्वाग्रह दूर करने की विधियाँ

पूर्वाग्रह समाज तथा व्यक्ति दोनों ही स्तरों पर मानव हितों को नुकसान पहुँचाता है। पूर्वाग्रह के कारण समाज में अनेक समस्याएँ पैदा होती हैं और व्यक्ति के सामाजिक चिन्तन का स्वरूप विकृत हो जाता है। समाज में तनाव व संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। इसके प्रभाव के कारण अनावश्यक मनमुटाव, वैमनस्य और लड़ाई-झगड़े पैदा होते हैं। पूर्वाग्रहों के परिणामों को देखते हुए समाज मनोवैज्ञानिकों ने इसे दूर करने व कम करने के उपायों पर भी विचार किया है। यहाँ पर पूर्वाग्रह को दूर व कम करने की कुछ विधियों का उल्लेख किया जा रहा है।

1. **शिक्षा**- उचित शिक्षा प्रदान कर पूर्वाग्रह को कम किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि औपचारिक शिक्षा जो स्कूल, मदरसा, कॉलेज आदि द्वारा दी जाती है, इनके शिक्षकों को चाहिए कि बच्चों को ऐसी शिक्षा न दें जिससे उनमें किसी प्रकार की पूर्वाग्रह की वृद्धि होती है। ऐसे पाठ्यक्रम का निर्माण करना चाहिए जिनको पढ़ने से बच्चों में अच्छा मानसिक स्वास्थ्य विकसित हों एवं किसी प्रकार का पूर्वाग्रह इनके मन में न विकसित हो। कुछ मनोवैज्ञानिकों जैसे. ट्रियानडिस (Trindis1972) ,फाईडलर एवं उनके सहयोगियो (Fiedler et.al.1979) ने अपने अध्ययन में पाया है कि शिक्षा का स्तर ऊँचा होने से व्यक्ति में पूर्वाग्रह की मात्रा कम हो जाती है क्योंकि शिक्षा से व्यक्ति में उदारता बढ़ती है। अनौपचारिक शिक्षा माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्यों तथा पास-पड़ोस के लोगों द्वारा बच्चों को दी जाती है। इन लोगों को चाहिए कि बच्चों के सामने ऐसी बातें नहीं करें जिससे वे किसी समुदाय, जाति या वर्ग के लोगों के प्रति पूर्वाग्रही हो जायें।
2. **अन्तर समूह सम्पर्क**- सर्वप्रथम ऑलपोर्ट ने इस बात पर बल दिया कि पूर्वाग्रह से ग्रस्त व्यक्ति और लक्षित व्यक्ति अर्थात् जिस व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रह है, यदि इन दोनों व्यक्तियों में उचित सम्पर्क कराया जाता है तो वे एक दूसरे के निकट आते हैं, तो पूर्वाग्रही व्यक्ति को उनके बारे में समझने का अधिक अवसर मिलता है। परिणामस्वरूप लक्ष्य व्यक्ति के बारे में बहुत सारी गलतफहमियाँ अपने आप दूर हो जाती हैं और व्यक्ति में पूर्वाग्रह कम हो जाता है। एक अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ है कि अन्तर समूह सम्पर्क रखने वालों जब समान स्तर के होते हैं तब इस स्थिति में अन्तर समूह सम्पर्क का पूर्वाग्रह को कम करने में अधिक प्रभाव पड़ता है। जब भिन्न-भिन्न जातीय समूहों, धार्मिक समूहों के सदस्यों को आपस में प्रत्यक्ष रूप से मिलने-जुलने का तथा नजदीक से एक-दूसरे से बातचीत करने का मौका मिलता है तो वे जान पाते हैं कि वे एक-दूसरे को जितना भिन्न समझते थे , वास्तव में वे उतना भिन्न नहीं है। उनकी नकारात्मक मनोवृत्ति सकारात्मक बन जाती है या नकारात्मक मनोवृत्ति की प्रबलता घट जाती है। इस कारण एक दूसरे के प्रति आकर्षण बढ़ता है और पूर्वाग्रह दूर हो जाता है।

3. **कानूनी प्रतिबंध**- कानून के माध्यम से भी पूर्वाग्रह को दूर किया जा सकता है। कानून द्वारा सामाजिक संरचना में परिवर्तन लाने से पूर्वाग्रह को विकसित व सम्पोषित करने वालों परिवेश सम्बन्धी कारक कमजोर हो जाते हैं या समाप्त हो जाते हैं जिससे पूर्वाग्रह दूर या कम हो जाता है। भारतवर्ष में हरिजनों से सम्बन्धित अनेक तरह के पूर्वाग्रह मौजूद थे जिनमें छुआछूत प्रमुख था। सरकार ने सामाजिक कानून बनाकर छुआछूत को गैर कानूनी घोषित किया, फलस्वरूप हरिजनों से छुआछूत सम्बन्धी पूर्वाग्रह अब करीब-करीब समाप्त हो गया है। इसी तरह जातीय पूर्वाग्रह को कम करने के लिए भारत सरकार ने अन्तर्जातीय विवाह को कानूनी घोषित किया है इससे भी एक जाति का दूसरे जाति के प्रति पूर्वाग्रह कम हुआ है।
4. **प्रचार**- पूर्वाग्रहों को कम करने में प्रचार द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त किया जा सकता है। रेडियो, फिल्म, दूरदर्शन, समाचार-पत्रों के माध्यम से किया गया प्रचार पूर्वाग्रह को कम करने में काफी सहायक हुआ है। मायर्स ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह परिणाम प्राप्त किया है कि पूर्वाग्रह विरोधी प्रचार से पूर्वाग्रह 60 प्रतिशत तक कम हो जाते हैं।
5. **व्यक्तित्व परिवर्तन**- समाज मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व में मनोचिकित्सा की विभिन्न विधियों एवं विरेचन द्वारा परिवर्तन करके उनमें व्याप्त पूर्वाग्रह को कम करने पर जोर दिया है। अतः यदि व्यक्तित्व में परिवर्तन उत्पन्न किया जाय तो पूर्वाग्रहों में भी परिवर्तन हो सकता है। परन्तु यह विधि अधिक समय लेती है और व्यक्तित्व परिवर्तन कठिन भी है| इसलिए यह अपेक्षाकृत कम उपयोगी सिद्ध हो पाती है। व्यक्तित्व परिवर्तन के साथ-साथ परिस्थितियाँ भी परिवर्तित की जाय तो अधिक सहायता मिल सकती है।
6. **समूह सदस्यता में परिवर्तन**- पूर्वाग्रह के निर्माण में सामाजिक समूहों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। अतः यदि किसी पूर्वाग्रह से ग्रसित व्यक्ति को उस समूह की सदस्यता मिल जाय जिसके प्रति वह पूर्वाग्रह से ग्रसित है तो उसके पूर्वाग्रह में कमी आयेगी, ऐसा इसलिए होगा क्योंकि वह समूह का अनुमोदन तथा प्रशंसा प्राप्त करने के लिए समूह के साथ तादात्मीकरण करेगा और अनुकूल विचार विकसित करेगा। वाटसन ने भी यह निष्कर्ष दिया है कि नवीन समूहों की सदस्यता ग्रहण करने पर उसके प्रति विचार परिवर्तित हो जाते हैं और पूर्वाग्रहों में कमी आती है। इसी प्रकार विभिन्न राजनैतिक दल एक दूसरे के प्रति पूर्वाग्रसित बातें करते हैं, परन्तु जब वे अपनी पार्टी छोड़कर किसी अन्य पार्टी में चले जाते हैं तो उस पार्टी के प्रति उनका भाव बदल जाता है।
7. **अलगाव विरोधी नीति**- भिन्न-भिन्न समूहों के बीच अलगाव नीति के कारण पूर्वाग्रह के विकास तथा सम्पोषण में सहायता मिलती है। अतः सरकारी अधिकारियों व समाज सुधारकों को चाहिए कि समूह अलगाव नीति का विरोध करें तथा समूह समाकलन नीति पर अमल करें। आज भी देखा जा रहा है कि हरिजनों, दलितों, शोषितों के लिए अलग आवासीय योजना चलाई जा रही है, जातीय छात्रावास बनाये जा रहे हैं। इसी प्रकार अलग-अलग जाति व धर्म के लोग अपनी आवासीय योजनाएँ चलाते हैं। अनेक शहरों व कस्बों में जाति और वर्ग के आधार पर अलग-अलग मुहल्लों व बस्तियाँ बनी हैं। इस तरह के अलगाव का यदि समाज में विरोध किया जाये तो इससे भी पूर्वाग्रह को कम किया जा सकता है क्योंकि

भिन्न-भिन्न जाति, धर्म और सम्प्रदाय के लोगों की साथ रहने की प्रवृत्ति जब बढ़ेगी तो पारस्परिक सम्पर्क के कारण उनमें पूर्वाग्रह कम होंगे।

8. **नागरिक संगठन**- पूर्वाग्रहों को दूर या कम करने में नागरिक संगठन या नागरिक समितियों की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। इन नागरिक संगठनों में भिन्न-भिन्न जाति, वर्ग, धर्म व सम्प्रदाय के लोगों, वरिष्ठ व सम्मानित लोगों को रखा जाय जो आपस में भाई-चारा बढ़ाने और पूर्वाग्रहों को कम करने का कार्य करें तो इससे समाज में शान्ति स्थापित होगी और पूर्वाग्रह दूर होगा।

7.4 भारत में सम्प्रदायिकता

किसी विशेष प्रकार की संस्कृति और धर्म को दूसरों पर आरोपित करने की भावना या धर्म अथवा संस्कृति के आधार पर पक्षपातपूर्ण व्यवहार करने की क्रिया साम्प्रदायिकता है। साम्प्रदायिकता समाज में वैमनस्य उत्पन्न करती है। और एकता को नष्ट करती है। साम्प्रदायिकता के कारण समाज को दंगे और विभाजन जैसे कुपरिणामों को भुगतना पड़ता है। साम्प्रदायिकता वह संकीर्ण मनोवृत्ति है जो एक धर्म अथवा सम्प्रदाय के लोगों में अपने धार्मिक एवं राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए पाई जाती है तथा जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न धार्मिक समूहों में तनाव एवं संघर्ष पैदा होते हैं। साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह के प्रति तीव्र निष्ठा की भावना है, न कि सम्पूर्ण समाज के प्रति । किसी विद्वान ने ठीक ही लिखा है कि अपने धार्मिक सम्प्रदाय से भिन्न अन्य सम्प्रदायों के प्रति उदासीनता, उपेक्षा, हेय दृष्टि, घृणा, विरोध और आक्रमण की वह भावना साम्प्रदायिकता है, जिसका आधार काल्पनिक भय या आशंका है कि उक्त सम्प्रदाय हमारे अपने सम्प्रदाय और संस्कृति को नष्ट कर देने या हमें जान-माल की क्षति पहुँचाने के लिए कटिबद्ध है। वास्तव में साम्प्रदायिकता के अन्तर्गत वे सभी भावनाएँ व क्रियाकलाप आ जाते हैं जिनमें किसी धर्म अथवा भाषा के आधार पर किसी सम्प्रदाय विशेष के हितों पर बल दिया जाये। साम्प्रदायिकता के कारण व्यक्ति अपने सम्प्रदाय या जातीय एवं धार्मिक समूह को अधिक महत्व देता है और अन्य समाजों एवं राष्ट्रों के हितों की अवहेलना करता है। जनसंख्या के आधार पर भारत में मुसलमान यद्यपि अल्पसंख्यक हैं फिर भी इनकी संख्या पाकिस्तान की तुलना में यहाँ अधिक है। हिन्दू कई सम्प्रदायों जैसे- आर्यसमाजी, शैव , सनातनी और वैष्णव में बँटे हुए हैं। इसी प्रकार मुसलमान शिया और सुन्नी में विभक्त हैं। हिन्दूओं और मुसलमानों के पारस्परिक सम्बन्ध एक लम्बे अन्तराल से तनावपूर्ण रहे हैं जबकि हिन्दुओं और सिखों ने एक-दूसरे को कुछ वर्षों विशेष कर 1984 से 1990 के बीच से सन्देह की दृष्टि से देखना शुरू किया। यहाँ हम मुख्यतः हिन्दू-मुसलमान और हिन्दू-सिख सम्बन्धों का विश्लेषण करेंगे।

7.4.1 हिन्दू-मुसलमान साम्प्रदायिकता

भारत में मुसलमानों के आक्रमण दसवीं शताब्दी में आरम्भ हो गए थे, परन्तु मोहम्मद गजनवी और मोहम्मद गोरी जैसे प्रारम्भिक मुसलमान विजेता धार्मिक आधिपत्य जमाने की अपेक्षा लूटमार में अधिक दिलचस्पी रखते थे। उस समय जब कुतुबुद्दीन दिल्ली का पहला सुल्तान बना तब इस्लाम ने भारत में पैर जमाये, इसके पश्चात् मुगलों ने अपने साम्राज्य तथा इस्लाम को काफी संगठित तथा विकसित किया। मुगल शासकों द्वारा किये जा रहे कुछ कार्य जैसे मंदिरों को तोड़कर मस्जिद बनवाना, तथा हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के लिए बाध्य करना आदि से हिन्दू और मुसलमानों के बीच साम्प्रदायिक झगड़े बढ़े। इसके बाद जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी के माध्यम से

अंग्रेजों ने भारत पर अपना आधिपत्य जमाया, तो उन्होंने प्रारम्भ में हिन्दुओं को संरक्षण देने की नीति अपनाई तथा मुसलमानों को भी खुश करने का भरसक प्रयत्न किया। 1857 में जब प्रथम स्वतंत्रता संग्राम प्रारम्भ हुआ तो हिन्दुओं एवं मुसलमानों ने कन्धों से कंधा मिलाकर लड़ाई लड़ी। इस लड़ाई में उन्हें सफलता तो नहीं मिली परन्तु अंग्रेजों को यह समझ में आ गया कि इन दोनों के मिल जाने पर भारत में वे पैर नहीं जमा पाएंगे। अतः अंग्रेजों ने 'फूट डालो और राज करो' (Divide and Rule) की नीति अपनाई जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू एवं मुसलमानों के साम्प्रदायिक झगड़ों को प्रोत्साहन मिला। यद्यपि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच पारस्परिक विरोध एक पुराना मामला है परन्तु भारत में हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अंग्रेजी शासन की विरासत है। हम भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन से उपलब्ध तथ्यों पर विचार करें तो यह स्पष्ट होगा कि 1918 तथा 1922 के बीच जितने गम्भीर प्रयास हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए हुए, वे इन समुदायों एवं कांग्रेस के शीर्षस्थ नेताओं के वार्तालाप के रूप में हुए। इन नेताओं के बीच प्रारम्भ से ही एक अप्रत्यक्ष सहमति थी कि हिन्दू, मुसलमान एवं सिख ऐसे पृथक समुदाय हैं जिनके धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रथाओं में एकता न होकर केवल राजनीतिक एवं आर्थिक मामलों में ही एकता है। इस तरह हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता के बीज तो इसी अवधि में ही पड़ चुके थे। 1942 के बाद मुस्लिम लीग एक सशक्त राजनीतिक दल की तरह उभरी और उसके नेता एम0ए0 जिन्ना ने कांग्रेस को एक 'हिन्दू' संगठन कहा जिसका अनुमोदन अंग्रेजों ने इस आशय से किया कि वे मुसलमानों को हिन्दुओं के विरूद्ध भड़का सकने में सफल हो पाएं। कांग्रेस के अन्दर भी मदनमोहन मालवीय, सरदार वल्लभ भाई पटेल एवं के0एम0 मुंशी जैसे कुछ नेताओं ने हिन्दू-समर्थक दृष्टिकोण अपनाया जिससे साम्प्रदायिक तत्वों का मनोबल ऊँचा हुआ। पाकिस्तान का नारा मुस्लिम लीग ने लाहौर में सर्वप्रथम 1940 में दिया। बाद में जब कांग्रेस नेताओं ने 1946 में विभाजन की स्वीकृति दे दी, तो उससे 1947 में लाखों की संख्या में हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखों का रक्तपात हुआ। लगभग 2 लाख लोगों के मारे जाने का अनुमान है और लगभग 60 लाख मुसलमान और साढ़े चार लाख हिन्दू एवं सिख शारणार्थी हो गए।

विभाजन के बाद भी कांग्रेस साम्प्रदायिकता पर काबू नहीं पा सकी। इसलिए यह कहा जा सकता है कि भारत में हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता के राजनीतिक-सामाजिक स्रोत थे और उनमें झगड़े के लिए केवल धर्म ही कारण नहीं था। आर्थिक स्वार्थ, सांस्कृतिक और सामाजिक रीति-रिवाज (जैसे त्यौहार, सामाजिक प्रथाएँ और जीवनशैलियाँ) भी महत्वपूर्ण कारक थे जिन्होंने दोनों समुदायों को और विभाजित किया। आज भारत में मुसलमान दूसरा सबसे बड़ा धार्मिक समुदाय है और विश्व में दूसरे सबसे बड़े मुस्लिम अल्पसंख्यक हैं। जम्मू और कश्मीर, असम और पश्चिम बंगाल जैसे कुछ राज्यों में हिन्दू जनसंख्या की तुलना में मुस्लिम अनुपात अधिक है। मुसलमान भी भाषा, संस्कृति और सामाजिक आर्थिक स्थितियों में इतने ही भिन्न हैं जितने कि हिन्दू। उत्तर प्रदेश के मुसलमानों और केरल के मुसलमानों में कोई समानता नहीं है। उनको मिलाने वाला कारक केवल धर्म है, यहाँ तक कि उनकी भाषा भी एक नहीं है। सूक्ष्म अवलोकन से यह स्पष्ट है कि 16 शहर जो हिन्दू-मुस्लिम दंगों के लिए अतिसंवेदनशील हैं वे हैं-उत्तर प्रदेश में मुरादाबाद, मेरठ, अलीगढ़, आगरा और वाराणसी; महाराष्ट्र में औरंगाबाद; गुजरात में अहमदाबाद, आन्ध्र प्रदेश में हैदराबाद, बिहार में जशेदपुर और पटना; असम में सिल्चर और गौहाटी; पश्चिम बंगाल में कलकत्ता; मध्य प्रदेश में भोपाल; जम्मू और कश्मीर में श्रीनगर, और उड़ीसा में कटक। आधुनिक भारत में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध किन-किन कारकों से प्रभावित होता है, एक मनोवैज्ञानिक ने

स्पष्ट किया है कि हिन्दू एवं मुस्लिम की मनोवृत्ति एवं प्रत्यक्षण में काफी अन्तर है जो इन दोनों के आपसी सम्बन्ध को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। 1992-93 के रामजन्मभूमि-बाबरी मस्जिद के फैसलों ने साम्प्रदायिक सदभाव के सन्तुलन को गड़बड़ा दिया है। आज मुसलमान अपनी सुरक्षा और बचाव के लिए अधिक चिन्तित हैं।

7.4.2 हिन्दू-सिख साम्प्रदायिकता

भारत में सिखों का सबसे बड़ा केन्द्रीयकरण पंजाब में है जहाँ वे बहुमत में हैं। इतिहास से यह तथ्य सामने आया है कि सिख धर्म का आरम्भ हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों के विरुद्ध एक सुधार आन्दोलन के रूप में हुआ था। दसवें गुरु के बाद सिखों में गुरुओं की परम्परा समाप्त हो गई और ग्रन्थ साहब को सर्वाधिक आदर दिया जाने लगा। सिख आन्दोलन जो अस्सी के दशक में प्रारम्भ में हुआ। जब एक स्थानीय सम्पादक की हत्या कर दी गई, श्रीनगर की उड़ानों पर एक वायुयान का अपहरण हुआ और एक कल्पित राष्ट्र, खलिस्तान के लिए पासपोर्ट जारी किये गए ,तब से यह आन्दोलन तेजी पकड़ने लगा। हत्याओं की संख्या बढ़ने लगी और सिखों का विरोध संगठित उग्रवादी एवं अधिक हिंसक हो गया। 1984 में जब अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर में उग्रवादी सिखों द्वारा इकट्ठे किये गए हथियारों को जब्त करने और आतंकवादियों को निकालने के लिए पुलिस ने गुरुद्वारे में 'आपरेशन ब्लू स्टार' योजना के अन्तर्गत प्रवेश किया तो यह सिख बर्दाश्त नहीं कर पाये और अनेक सिख सरकार एवं कुछ हिन्दुओं के विरुद्ध हो गए। फिर 31 अक्टूबर 1984 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी की हत्या की गयी तो भारत के अनेक शहरों में हजारों सिखों की हत्या की गयी व उनके मकान एवं दुकानें जला दी गयीं एवं सम्पत्ति लूट ली गयी। इससे सिखों में हिन्दुओं के प्रति आक्रोश उत्पन्न हो गया और कुछ आतंकवादी सिखों ने ट्रेन और बसों में यात्रा करने वालों हिन्दुओं को चुन-चुनकर मार डाला। हिन्दुओं और सिखों के बीच साम्प्रदायिक सदभाव के लिए प्रयत्नशील हरचन्द सिंह लोगोवाल की हत्या सन् 1985 में एक सिख हठधर्मी द्वारा की गयी। 1988 में जब अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर में पुनः'आपरेशन ब्लैक थन्डर' योजना द्वारा अनेक उग्रवादियों को दस दिन तक घेरे रहने के उपरान्त समर्पण करने के लिए मजबूर किया गया तब सिख उग्रवादियों ने पुनः अपना आन्दोलन तीव्र किया तथा कई शहरों में बम विस्फोट किये। यहाँ तक कि कनाडा से भारत आने वाले एक जहाज को बम-विस्फोट द्वारा उड़ाकर सैकड़ों हिन्दुओं को मार डाला गया। बहुत से हिन्दू उनके इन आतंकवादी गतिविधियों से डरकर पंजाब छोड़कर अन्य राज्यों में बस गए। पंजाब में आतंकवाद की समस्या अब समाप्त हो चुकी है। परिणामस्वरूप हिन्दू-सिख समुदाय के बीच उत्पन्न मनमुटाव, अविश्वास, वैमनस्य, नकारात्मक मनोवृत्ति में थोड़ी कमी आई है और दोनों समुदायों के बीच सम्बन्ध पहले जैसे सामान्य होने लगे हैं।

साम्प्रदायिकता को रोकने के उपाय

डी. आर. गोयल ने साम्प्रदायिकता को रोकने के लिए निम्न उपायों को बताया है|

1. प्रशासनिक व्यवस्था प्रभावी बने जिससे साम्प्रदायिक तनावों का पूर्वानुमान लगाया जा सके तथा इन्हें रोकने के लिये उचित कदम उठाये जा सकें|
2. साम्प्रदायिक तत्वों को पहचान कर उनका खुलासा किया जाना चाहिये ताकि संदेह की स्थिति में जनता इसे तत्वों का साथ न दे|

3. राष्ट्रीयता के बारे में साम्प्रदायिक विचारों का मुकाबला राजनीतिक प्रचार द्वारा किया जाना चाहिये| शिक्षण संस्थाओं को इन तत्वों का विरोध करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिये|
4. विभिन्न साम्प्रदायिक संगठनों पर रोक लगनी चाहिए राजनीतिक दलों की हितों की पूर्ति के लिये इनका उपयोग नही किया जाना चाहिए|

अभ्यास प्रश्न

1. पूर्वाग्रह का अर्थ है-
    a. वह मनोवृत्ति जो युक्ति संगत न हो
    b. वह व्यवहार जो किसी समूह के प्रति अनुचित हो
    c. वह व्यवहार जो विभेदन पर आधारित हो
    d. उपर्युक्त सभी
2. व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा पूर्वाग्रह को कम करना तभी सम्भव होता है, जबकि:
    a. परिचय क्षमता हो
    b. समान हैसियत हो
    c. सहकारी पुरस्कार हो
    d. उपर्युक्त सभी
3. साम्प्रदायिकता की विशेषता नहीं है:
    a. साम्प्रदायिकता एक व्यवस्था है
    b. साम्प्रदायिकता एक विचाराधारा है
    c. साम्प्रदायिकता एक विशेष धर्म के प्रति अन्धभक्ति है
    d. साम्प्रदायिकता चरमवादी होती है
4. साम्प्रदायिकता के परिणाम नहीं कहे जा सकते:
    a. पारस्परिक विश्वास
    b. राष्ट्रीय एकता में बाधक
    c. राष्ट्रीय सुरक्षा में बाधक
    d. पारस्परिक तनाव
5. सम्प्रदायवाद के कारण हैं:
    a. संकीर्णता
    b. राजनीति
    c. मतान्ध धार्मिक मूल्य
    d. उपर्युक्त सभी
6. पूर्वाग्रह को अन्तर समूह सम्पर्क द्वारा दूर किया जा सकता है। (सत्य/असत्य)

7. समूह सदस्यता में परिवर्तन करके पूर्वाग्रह को कम किया जा सकता है। (सत्य/असत्य)
8. साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह के प्रति तीव्र निष्ठा की भावना है। (सत्य/असत्य)
9. भारत में मुसलमानों की संख्या पाकिस्तान की तुलना में अधिक है। (सत्य/असत्य)

7.5 सारांश

पूर्वाग्रह सामाजिक रूप से परिभाषित समूह तथा उसके सदस्यों के प्रति एक निषेधात्मक अभिवृत्ति है। पूर्वाग्रह एवं विभेद के कारण अन्तर्वैयक्तिक संघर्ष तथा अन्तःसमूह संघर्ष उत्पन्न होते हैं। इससे लोगों में भेदभाव, तनाव, साम्प्रदायिक दंगे आदि उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति तथा समाज दोनों ही स्तर पर पूर्वाग्रह के भयंकर परिणाम को देखते हुए समाज मनोवैज्ञानिकों ने पूर्वाग्रह को दूर करने हेतु अनेक तकनीकों का विकास किया है। इसके अन्तर्गत माता-पिता तथा अध्यापकों द्वारा समाजीकरण, शिक्षा, पूर्वाग्रहयुक्त व्यक्ति तथा लक्ष्य व्यक्ति के बीच सम्पर्क, कानून, व्यक्तित्व परिवर्तन, अलगाव विरोधी नीति, समूह सदस्यता में परिवर्तन, नागरिक संगठन आदि का उपयोग पूर्वाग्रह के निराकरण में किया गया है। साम्प्रदायिकता का अर्थ है अपने सम्प्रदाय का हित चाहना और दूसरे सम्प्रदाय या सम्प्रदायों के हितों की उपेक्षा करना।

साम्प्रदायिकता के अन्तर्गत वास्तव में वे सभी भावनाएँ व क्रियाकलाप आ जाते हैं जिनमें किसी धर्म अथवा भाषा के आधार पर किसी समुदाय विशेष के हितों पर बल दिया जाय और उन हितों के ऊपर भी प्राथमिकता दी जाये तथा उस समूह में पृथकता की भावना उत्पन्न की जाये या उसको प्रोत्साहन दिया जाये। भारत में साम्प्रदायिकता मुख्य रूप से अंग्रेजों की 'फूट डालो और शासन करो' नीति की ही एक उपज है। भारत में देश के विभाजन से उत्पन्न हिन्दू मुस्लिम सम्बन्ध सामाजिक तनाव तथा साम्प्रदायिकता का एक महत्वपूर्ण स्रोत रहा है।

7.6 शब्दावली

1. औपचारिक शिक्षा-ऐसी शिक्षा जो विद्यालय या अन्य शिक्षण संस्थाओं द्वारा दी जाती है।
2. अनौपचारिक शिक्षा- अनौपचारिक शिक्षा माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्यों व पास-पड़ोस के लोगों द्वारा बच्चों को दी जाती है।
3. मानसिक स्वास्थ्य- व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से अच्छी तरह तालमेल बिठाते हुए कार्य करते रहना।
4. तादात्मीकरण- किसी व्यक्ति के साथ स्व को आत्मसात करके उसी के अनुरूप व्यवहार करने तथा उसके व्यक्तित्व के अनुरूप अपना भी व्यक्तित्व विकसित करने से है।
5. विरासत- जो हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त होती है।
6. प्रथा- समाज से मान्यता प्राप्त, पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होने वाली सुव्यवस्थित दृढ़ जनरीतियाँ।
7. परम्परा- समुदायों में व्यक्तियों के उन सभी विचारों, आदतों और प्रथाओं का योग, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है।

7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. d

2. d
3. a
4. a
5. d
6. सत्य
7. सत्य
8. सत्य
9. सत्य
10. असत्य

7.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची व उपयोगी सहायक ग्रंथ

1. सिंह, अरुण कुमार, (2006), 'समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
2. त्रिपाठी , लालबचन, (1998-99), 'आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान', एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
3. रामआहूजा, (2000), 'सामाजिक समस्याएँ', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
4. मिश्र, गिरीश्वर एवं जैन उदय, (1994), 'समाज मनोविज्ञान के मूल आधार', मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
5. मो0 सुलेमान एवं दिनेश कुमार (2010), 'मनोविज्ञान और सामाजिक समस्याएँ', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
6. श्रीवास्तव, डी0एन0, (दसवाँ संस्करण), 'सामाजिक मनोविज्ञान', साहित्य प्रकाशन, आगरा।

7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूर्वाग्रह क्या है? इसे कैसे कम किया जा सकता है?
2. पूर्वाग्रह एवं विभेदन को दूर करने की विधियों का संक्षेप में वर्णन करें।
3. भारत में साम्प्रदायिकता पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
4. टिप्पणी लिखिए
   i. पूर्वाग्रह
   ii. साम्प्रदायिकता
   iii. हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता

इकाई 8- सामाजिक प्रभाव स्वरूप, अवयव एवं प्रकार अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के सिद्धांत(Social Influence: Nature, Components and Kind, Theories of Interpersonal Attraction)

इकाई संरचना-

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 सामाजिक प्रभाव की परिभाषा एवं अर्थ
8.4 सामाजिक प्रभाव का स्वरूप
8.5 सामाजिक प्रभाव प्रक्रिया के अवयव
8.5.1 लक्ष्य क्रिया
8.5.2 लक्ष्य व्यक्ति
8.5.3 लक्ष्य व्यक्ति एवं अन्य व्यक्तियों में संबंध
8.5.4 लक्ष्य क्रिया का सामाजिक परिवेश
8.5.5 सामाजिक प्रभाव मॉडल
8.6 सामाजिक प्रभाव के प्रकार
8.6.1 सूचनात्मक सामाजिक प्रभाव
8.6.2 मानकात्मक सामाजिक प्रभाव
8.7अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के सिद्धांत
8.8 सारांश
8.9 शब्दावली
8.10 अभ्यास पश्नों के उत्तर
8.11 निबंधात्मक प्रश्न
8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.1 प्रस्तावना

सामाजिक अन्तःक्रियाओं के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करता है। सामाजिक अन्तःक्रियाओं के कारण ही शिक्षक अपने छात्रों को तथा माता पिता अपने बच्चों को प्रभावित करते हैं। अतः सामाजिक प्रभाव , जन्म से मृत्यु तक व्यक्ति के व्यवहारों को प्रभावित करने वाला एक मुख्य कारक है। यही कारण है कि ''सामाजिक मनोविज्ञान'' को व्यक्ति के व्यवहार पर सामाजिक प्रभावों का अध्ययन करने वाले

विज्ञान के रूप में भी जाना जाता है। अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के कारण ही लोग एक दूसरे के निकट सम्पर्क में आते हैं।

मित्रता स्थापित होती है और पारस्परिक सहायता का व्यवहार प्रदर्शित होता है। इसके अभाव में लोगों में दूरी, आशंका, घृणा एवं विकर्षण बढता है। सामाजिक जीवन इसके अभाव में नीरस हो जाता है , सामाजिक संरचना विघटित हो सकती है। मानव व्यवहार को निर्धारित व नियंत्रित करने हेतु समाज की शक्ति एवं सामाजिक अन्तःक्रिया की उपयुक्त दिशा सुनिश्चित करना आवश्यक होता है। अन्तःवैयक्तिक आकर्षण को बढावा देकर ही इस लक्ष्य तक पहुंचा जा सकता है। प्रस्तुत इकाई से इनके विषय में आप जान सकेगें तथा इनका विस्तृत अध्ययन कर सकेंगे।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप-

1. सामाजिक प्रभाव के अर्थ , स्वरूप , अवयव एवं प्रकार को भली प्रकार समझ सकें।
2. मानव व्यवहार निर्धारण एवं नियंत्रण में सामाजिक प्रभाव की भूमिका से अवगत हो सकें।
3. सामाजिक शक्ति, एवं सामाजिक अन्तःक्रिया तथा अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के आपसी संबन्धों की व्याख्या कर सकें।
4. सामाजिक अन्तःक्रिया की दिशा (धनात्मक तथा ऋणात्मक) पर स्पष्ट विचार कर सकें।
5. अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के अर्थ , स्वरूप को समझ सकें।
6. सामाजिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित संतुलन ,पुनर्बलन,विनिमय समदृष्टि एवं पूरक आवश्यकताओं आदि सिद्धांतोंके आधार पर अन्तवैयक्तिक आकर्षण की समुचित विवेचना कर सकें।

8.3 सामाजिक प्रभाव की परिभाषाएं एवं अर्थ

- **फ्रेंच तथा रेवेन (1959) एवं रेवेन तथा क्रुगलान्सकी (1970) के अनुसार** "सामाजिक प्रभाव का अर्थ किसी व्यक्ति के विश्वासों, मनोवृत्तियों, अभिप्रेरकों आदि में ऐसे परिर्वतन से है, जिसे किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों ने उत्पन्न किया है"।
- **रेवेन (1974) के अनुसार** "सामाजिक प्रभाव से तात्पर्य व्यक्ति की मनोवृत्ति तथा व्यवहार में उस परिवर्तन से होता है जो अन्य व्यक्ति द्वारा उत्पन्न किया जाता है"।
- **सिकार्ड एवं बैकमैन (1974) के अनुसार** "यदि किसी व्यक्ति की क्रियाओं के कारण दूसरा व्यक्ति क्रियाएं करता है तो इसे सामाजिक प्रभाव कहा जाता है"। (A social influence may be said to have occurred when the actions of one person are conditions for the actions of another.)
- **फ्रेच तथा रेवेन (1969) के अनुसार** "सामाजिक प्रभाव का ही परिणाम है कि व्यक्ति का विचार या अभिवृत्ति अनुकूल से प्रतिकूल या प्रतिकूल से अनुकूल बन जाती है"।

इस प्रकार स्पष्ट है कि जब किसी व्यक्ति का प्रभाव दूसरे व्यक्ति पर पड़ता है और उसके व्यवहार में परिवर्तन प्रदर्शित होता है तो इसे सामाजिक प्रभाव कहा जाता है। सामाजिक अन्तःक्रिया के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करता है , जैसे शिक्षक अपने छात्रों को , माता पिता अपने बच्चों को तथा नेता अपने अनुयायियों को तरह तरह से सामाजिक अन्तःक्रिया करके उन्हें प्रभावित करता है। इस तरह का प्रभाव किसी अभिप्राय से हो सकता है अथवा प्रासंगिक भी हो सकता है जो प्रभाव डालता है उसे प्रभावक अभिकर्ता तथा जो व्यक्ति प्रभावित होता है उसे लक्षित व्यक्ति कहा जाता है । समाज की प्रभावित करने की क्षमता को सामाजिक शक्ति कहते हैं। सामाजिक प्रभाव तथा सामाजिक शक्ति में मूल अंतर यह है कि सामाजिक प्रभाव तब उत्पन्न होता है जब व्यक्ति वास्तव में अन्य व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन ला पाता है जबकि सामाजिक शक्ति से तात्पर्य मात्र ऐसा परिवर्तन लाने की क्षमता से होता है।

8.4 सामाजिक प्रभाव का स्वरूप

यह सर्वदा स्थायी नहीं होता हैं। सामाजिक प्रभाव तभी तक प्रभावित होते हैं जब तक व्यक्ति प्रभावक अभिकर्ता के संपर्क में रहता है। जैसे विद्यालय की फाइनल परीक्षा पास करने के बाद छात्र का संबन्ध स्कूल के शिक्षक से समाप्त हो जाता हैं और शिक्षक का प्रभाव भी छात्र पर से समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार कुछ सामाजिक प्रभाव, सामाजिक रूप से आश्रित प्रभाव होते हैं तथा वे स्थाई होते हैं। जैसे यदि रोगी ,डाक्टर द्वारा दी गई सलाह को स्वीकार कर उसका पालन करता है तो यह सामाजिक रूप से आश्रित प्रभाव होगा तथा यह प्रभाव स्थायी होगा। अर्थात डाक्टर की अनुपस्थिति में उसके निदशों का अनुपालन होता रहेगा।

i. अनुरूपता, आज्ञाकारिता, तथा अनुपालन आदि सामाजिक प्रभाव के व्यावहारिक परिणाम हैं।

ii. सामाजिक प्रभाव 'धनात्मक' तथा ऋणात्मक दोनों हो सकते हैं।

- धनात्मक सामाजिक प्रभाव का तात्पर्य, प्रभावक अभिकर्ता की इच्छानुसार लक्षित व्यक्ति पर प्रभाव उत्पन्न हो। जैसे शिक्षक छात्र को यह कहते हैं कि उन्हे गृहकार्य करके कल दिखाना होगा। यदि छात्र ऐसा अनुपालन करते हैं तो यह धनात्मक सामाजिक प्रभाव होगा । धनात्मक सामाजिक प्रभाव की विशेषता यह होती है कि इसमें व्यक्ति सामाजिक व्यवस्था के नियमों के अनुरूप व्यवहार करता है।
- ऋणात्मक सामाजिक प्रभाव के अन्तर्गत लक्षित व्यक्ति प्रभावक अभिकर्ता द्वारा किये गये प्रबलों के विपरीत, व्यवहार करता है । इस तरह से सामाजिक प्रभाव के विपरीत होने पर व्यक्ति विपरीत व्यवहार करके विचलित हो जाता है।
- धमाका प्रभाव कभी कभी सामाजिक प्रभाव डालने के कारण व्यक्ति में विपरीत प्रभाव पहले से भी अधिक प्रबल हो जाता है। इसे समाज मनोवैज्ञानिकों ने धमाका प्रभाव कहा है।

iii. सामाजिक प्रभाव का स्वरूप सामाजिक शक्तियों के श्रोतों या आधारों द्वारा निर्धारित होती है। रवेन तथा रूबिन (1983) के अनुसार पुरस्कार, अवपीड़न, विशेषज्ञता, संदर्भ , तथा आत्मीकरण वैधता एवं सूचना आदि सामाजिक प्रभाव के छः आधार हैं।

iv. सामाजिक प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करने वाला स्वतंत्र परिवर्त्य है।

v. सामाजिक प्रभाव , प्रभावक व्यक्ति की सामाजिक शक्ति से प्रभावित होता है अर्थात अधिक शक्तियुक्त व्यक्ति का प्रभाव अधिक और कम शक्तियुक्त व्यक्ति का प्रभाव कम पड़ता है।
vi. सामाजिक प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भी घटित हो सकता है।
vii. प्रभावक व्यक्ति, सामाजिक प्रभाव का प्रदर्शन किसी निश्चित इरादे या बिना इरादे से भी कर सकता है।

8.5 सामाजिक प्रभाव प्रक्रिया के अवयव

i. लक्ष्य क्रिया (Target Act)
ii. लक्ष्य व्यक्ति (Target Person)
iii. लक्ष्य व्यक्ति एवं अन्य व्यक्तियों में सम्बन्ध (Relation between target person and other persons)
iv. लक्ष्य क्रिया का सामाजिक परिवेश (Social Context of Target Act)

8.5.1 लक्ष्य क्रिया

लक्ष्य क्रिया का आशय उस कार्य या व्यवहार से है जो प्रभावित होने वाले व्यक्ति ;लक्षित व्यक्ति द्ध को करना होता है। इस प्रकार जब कोई प्रभावक व्यक्ति किसी लक्षित व्यक्ति को प्रभावित करके उससे अपेक्षित व्यवहार कराता है या वैसा करने के लिये तत्पर कर लेता है तो उसे ही लक्ष्य क्रिया कहा जाता है। किसी विक्रेता द्वारा ग्राहक को प्रभावित करके सामान की बिक्री कर लेना या नेता द्वारा मतदाताओं को अपने पक्ष में मतदान करने के लिये तैयार कर लेना या किसी की अभिवृत्ति परिवर्तित करना आदि लक्ष्य क्रिया के उदाहरण हैं।

8.5.2 लक्ष्य व्यक्ति

सामाजिक प्रभाव की प्रक्रिया में प्रभावक व्यक्ति समूह या संगठन जिसको प्रभावित करने का लक्ष्य बनाता है उसे लक्ष्य व्यक्ति कहते है। जैसे - अपना अपराध स्वीकार करने वाला अपराधी , विक्रेता से प्रभावित ग्राहक , शिक्षक से प्रभावित होने वाला छात्र आदि लक्ष्य व्यक्ति के उदाहरण है।

8.5.3 लक्ष्य व्यक्ति एवं अन्य व्यक्तियों से संबन्ध

प्रभावक जितना शक्तियुक्त या प्रभावशाली होगा , लाभ एवं हानि के निर्धारण पर उसका उतना ही अधिक प्रभाव होगा, उसका लक्ष्य व्यक्ति पर उतना ही प्रभाव भी पड़ेगा। प्रभावक की विश्वसनीयता भी लक्ष्यव्यक्ति को प्रभावित करती है। लक्ष्य व्यक्ति प्रभावक व्यक्ति पर कितना आ्रिश्रत है अथवा प्रभावक का लक्ष्य व्यक्ति पर कितना प्रभाव है इनका भी प्रभाव ,लक्षित व्यक्ति के व्यवहार पर पड़ता है ।

8.5.4 लक्ष्य क्रिया का सामाजिक परिवेश

सामाजिक परिवेश का सीधा असर सामाजिक प्रभाव प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में दिखाई देता है। जैसे - किसी कार्य को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त है तो व्यक्ति उसको करने में संकोच नहीं करेगा , अन्यथा वह उसे नहीं करेगा। ड्रग लेने वालों को उसके कुपरिणामों की जानकारी देकर मादक पदार्थों के सेवन से रोकने का प्रयास किया जा सकता है। किसी कार्य को करने के लिये अकेले में प्रतिबद्धता करायी जाये तो अपेक्षाकृत उसका प्रभाव कम पड़ेगा ,परन्तु यदि उस व्यक्ति से सामूहिक रूप में वचनबद्धता करायी जाये तो उसका प्रभाव अधिक पड़ेगा। सामाजिक प्रभाव, संभावित परिस्थिति पर भी निर्भर करता है। जैसे-यदि कोई शिक्षक किसी छात्र पर गृह कार्य

पूरा करने के लिये बल देता है तो वह इसे वैध मानकर स्वीकार कर लेगा। इसके विपरीत बाल छोटा कराने , दाढ़ी नहीं रखने या फिल्म कम देखने की बात को अप्रत्याशित या अवैध मानकर उसे अस्वीकार कर सकता है। प्रभावक एवं प्रभावित व्यक्तियों में यदि कोई आपसी सहमति अथवा सामाजिक संविदा है तो इससे उनके व्यवहार प्रभावित होंगे। जैसे दो मित्र प्रायः मिलते जुलते रहने की आशा करते हैं ऐसा न होने पर वे परेशान हो जाते हैं।

8.5.5. सामाजिक प्रभाव का मॉडल

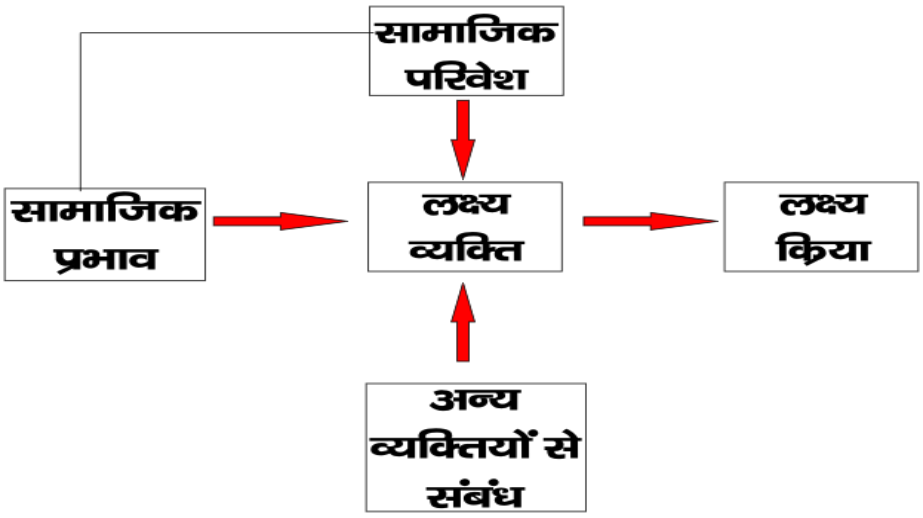

8.6. सामाजिक प्रभाव के प्रकार

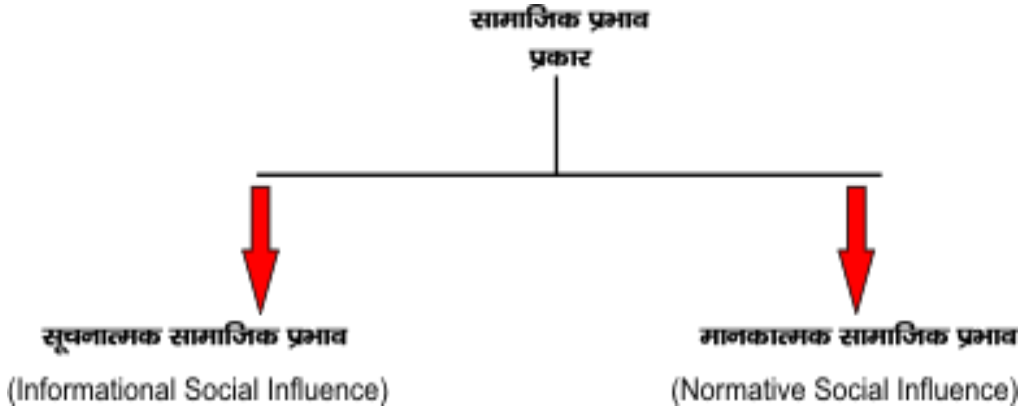

i. सूचनात्मक सामाजिक प्रभाव (**Informational Social Influence**)
ii. मानकात्मक सामाजिक प्रभाव (**Normative Social Influence**)

8.6.1 सूचनात्मक सामाजिक प्रभाव

यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति या स्रोत से प्राप्त सूचना के आधार पर अपने व्यवहार , विचार ,कार्य या अभिवृत्ति में परिवर्तन करता है तो इसे सूचनात्मक सामाजिक प्रभाव कहते हैं। सूचनात्मक सामाजिक प्रभाव व्यक्ति में सामाजिक वास्तविकताओं के बारे में सही या वैध जानकारी प्राप्त करने की इच्छा के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। जैसे - यदि कोई विश्वसनीय व्यक्ति यह सूचना देता है कि कल भूकम्प आ सकता है और इससे प्रभावित होकर यदि दूसरा व्यक्ति मकान छोड़कर किसी मैदान में बसेरा कर लेता है , तो यह प्रभाव सूचनात्मक सामाजिक प्रभाव कहा जायेगा।

8.6.2. मानकात्मक सामाजिक प्रभाव

यदि कोई व्यक्ति सामाजिक प्रशंसा , पुरस्कार , लाभ पाने के प्रयास में अथवा किसी कष्ट या असफलता से बचने के लिये किसी के सुझाव को स्वीकार करके तदनुसार व्यवहार करता है तो उसे मानकीय सामाजिक प्रभाव कहते हैं। जैसे - परीक्षा में असफल हो जाने पर विद्यार्थी अपने माता पिता का पढाई से संबन्धित प्रत्येक सुझाव को तुरंत मान लेता है क्योंकि वह समझता है कि ऐसा करने से वह माता पिता की फटकार से बच जायेगा।

8.7 अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के सिद्धान्त

अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के अर्थ एवं स्वरूप

परस्पर एक दूसरे के प्रति आकर्षित होना ही अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण है। दूसरे के प्रति खिंचाव को आकर्षण कहा जाता है।

समाज मनोविज्ञान में आकर्षण का अर्थ पसंदगी या नापसंदगी की एक मनोवृत्ति (Attitude) से होती है। समाज के व्यक्ति आपस में एक दूसरे को पसंद नापसंद बहुधा अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के कारण ही करते हैं। यह सामाजिक अन्तः क्रियाओं का एक मुख्य आधार है। इसके कारण ही लोग एक दूसरे के समीप आते हैं , मित्रता स्थापित होती है और पारस्परिक सहायता का व्यवहार प्रदर्शित होता है। इसके अभाव में लोगों में दूरी , आशंका ,घृणा एवं विकर्षण बढ़ता है। इसके बगैर सामाजिक जीवन नीरस हो जाता है। यह एक अनुकूल या रचनात्मक अन्तःक्रिया है।

बैरोन तथा वर्न (1988) के अनुसार –अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण से तात्पर्य "दूसरों के प्रति हमारी मनोवृत्ति से होता है। इस तरह की मनोवृत्ति अस्वीकारात्मक - स्वीकारात्मक विमा जो घृणा से प्रेम तक प्रसारित होती है , में सुसज्जित होती है"। इस परिभाषा के विश्लेषण से अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के स्वरूप का निम्नवत पता चलता है।

i. अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण दूसरे के प्रति एक तरह की हमारी मनोवृत्ति होती है।
ii. मनोवृत्ति के अनुरूप अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण स्वीकारात्मक या धनात्मक तथा अस्वीकारात्मक या ऋणात्मक कुछ भी हो सकता है।

व्यक्ति जब किसी लक्षित व्यक्ति के प्रति आकृष्ट होता है तो इसका मतलब हुआ कि वह लक्षित व्यक्ति के प्रति धनात्मक मनोवृत्ति विकसित करता है। तथा वह उसके प्रति प्रेम भाव दिखलायेगा। जब प्रभावक , लक्षित व्यक्ति

के प्रति ऋणात्मक या निषेधात्मक मनोवृत्ति विकसित कर लेता है। इससे परस्पर घृणा का भाव उत्पन्न होता है। लोगों के आकर्षण संबन्धों का निर्धारण अन्तर्वैयक्तिक मूल्यांकनों की दिशा (धनात्मक या ऋणात्मक) और तीव्रता कम या अधिक के आधार पर होती है।

अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के प्रमुख सिद्धांत

अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण की व्याख्या के लिए समाज मनोवैज्ञानिकों ने कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। जिसमें निम्न लिखित प्रमुख हैं:-

- समानता या संतुलन सिद्धांत (Similarity or balance theory)
- पुनर्बलन सिद्धांत (Reinforcement Theory)
- विनिमय सिद्धांत (Exchange Theory)
- समदृष्टि सिद्धांत (Equity Theory)
- पूरक आवश्यकता सिद्धांत (Complimentary Need Theory)

i. **समानता या संतुलन सिद्धांत (Similarity or Balance Theory)-** स्तुलन सिद्धांत का प्रतिपादन हाइडर (1946,1958) द्वारा किया गया। हाइडर के विचारों से प्रभावित होकर न्यूकाम्ब (1956, 1961) ने समानता सिद्धांत का प्रतिपादन किया। न्यूकाम्ब के सिद्धांत को ABX सिद्धांत के नाम से भी जाना जाता है। यह एक प्रमुख संज्ञानात्मक सिद्धांत (Cognitive Theory) है।

मान्यता के आधार:- संज्ञानात्मक समानता या संज्ञानात्मक संतुलन ही अन्तःवैयक्तिक आकर्षण का आधार है। जिन व्यक्तियों में संज्ञानात्मक समानता या संतुलन पाया जाता है , उनके प्रत्यक्षीकरण और अभिवृत्तियां समान और धनात्मक होती हैं। संज्ञानात्मक असमानता की स्थिति में उनकी अभिवृत्तियां ऋणात्मक भी हो सकती हैं।

प्रमुख मान्यताएं

- संज्ञानात्मक संतुलन या समानता का अर्थ है परस्पर आकर्षित होने वाले व्यक्तियों के विचारों एवं विश्वासों में संगति का होना।
- संज्ञानात्मक संतुलन में व्यक्ति का ध्यान आकृति पर होता है तथा इस व्यक्ति की आकृति के विभिन्न तत्वों में संतुलन का प्रत्यक्षीकरण होता है।
- संज्ञानात्मक संतुलन की स्थिति में व्यक्ति एक दूसरे के अनुरूप होते है और उनमें परस्पर में ल होता है ।
- अद्ध जब व्यक्तियों की प्रकृति में में ल न होकर विषमता होती है तब असंतुलन की स्थिति दिखलाई देती है। इस अवस्था में विषमता के साथ साथ संज्ञानात्मक तनाव भी दिखाई देता है।

संतुलन सिद्धांत की व्याख्या **ABX** के रूप में:-

A = वह व्यक्ति जो आकर्षित हो रहा है।

B= वह व्यक्ति जो दूसरे व्यक्तियों को आकर्षित कर रहा है।

X = सामान्य तथ्य, वस्तु या विचार या व्यक्ति।

जब A,B,X, में परस्पर समानता पायी जाती है तब संतुलन की स्थिति रहती है। इस स्थिति में व्यक्ति एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं। यह आकर्षण दो व्यक्तियों के बीच हो या तीन व्यक्तियों के बीच हो या समूह में तीन से अधिक व्यक्ति हों। व्यक्ति के विचारों , भावनाओं और अभिवृत्तियों में परस्पर जितनी ही समानता या संतुलन होता है उनमें अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण उतना ही अधिक पाया जाता है।

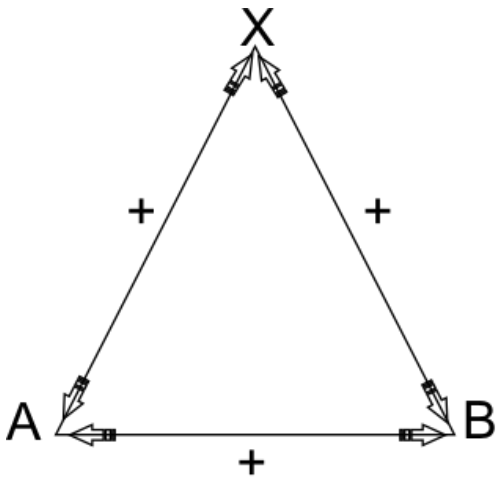

संतुलन की स्थिति

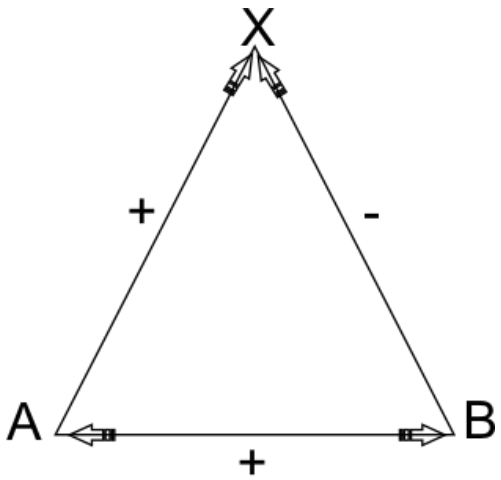

असंतुलन की स्थिति

तीनों में से किसी एक की भी भिन्नता या असमानता असंतुलन उत्पन्न कर देती है। इस स्थिति में परस्पर आकर्षण की कमी हो जाती है। व्यक्तियों में आकर्षण के स्थान पर तनाव, चिंता , और कुण्ठा दिखाई देने लगती है।

ABX **सिद्धान्त में असंतुलित स्थिति से बचने के उपाय-**

i. यदि A, B के गुण समान हैं और X के गुण A और B के गुणों से पूर्णतया भिन्न हैं। तो A, B दोनों ही X के असमान गुणों का प्रव्यक्षीकरण न करें। ऐसा करने से असंतुलन स्थिति से बचा जा सकता है।

ii. A और B व्यक्ति X के असमान गुणों या विशेषताओं को स्वयं में अपना लें तभी A, B और X में असंतुलन की स्थिति समाप्त हो जायेगी।

iii. व्यक्ति X अपने गुणों को A और B के अनुरूप कर लें तो संतुलन की स्थिति बन जाती है। फलतः परस्पर आकर्षण उत्पन्न होता है।

संतुलन सिद्धांत की उपयोगिता

i. संतुलन बनाने की किसी विधि को अपनाकर असंतुलन से बचा जा सकता है और समूह को टूटने से बचाया जा सकता है।

ii. न्यूकाम्ब के सिद्धान्त द्वारा समानता आधारित अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण की व्याख्या संतोषप्रद ढंग से हो जाती है।

संतुलन सिद्धांत की सीमाएं

i. अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के लिए संतुलन सिद्धान्त में अभिवृत्तियों में समानता को आवश्यक माना जाता हैं , परन्तु कभी कभी समान अभिवृत्तियाँ ईर्ष्या एवं प्रतिस्पर्धा का कारण बन जाती हैं। जैसे कोई वस्तु दोनों व्यक्तियों (A,B) को पसंद है। दोनों उसे प्राप्त करना चाहते हैं। ऐसा हेाने पर परस्पर आकर्षण के स्थान पर तनाव बढ़ सकता है।

ii. यदि लोगों के बीच भावनात्मक संबन्ध है तो उनमें आकर्षण भी होगा परन्तु उनमें किसी लक्ष्य या कार्य के लिये प्रतिस्पर्धा है तो परस्पर आकर्षण नहीं होगा। ऐसा होने पर यह सिद्धान्त आकर्षण की व्याख्या नहीं कर सकेगा। मोरान (1996) लेस्टर 1965)।

iii. यह सिद्धान्त नापसंदगी की व्याख्या नहीं कर पाता (Devol,1959) ऐसी दशा में संतुलन कैसे स्थापित होगा , इसकी समुचित व्याख्या न्यूकाम्ब के सिद्धांत द्वारा नहीं हो पाती हैं।

ii. **पुनर्बलन या पुरस्कार सिद्धान्त-**मायर्स (1988) के अनुसार आकर्षण के पुरस्कार सिद्धांत का आशय यह है कि हम उन्हें पसंद करते हैं , जिनका व्यवहार हमारे लिये सुखद या पुरस्कार उपलब्ध कराने वाली घटना से संबन्धित होता है। इससे स्पष्ट है कि हमें जिनसे पुरस्कार या संतुष्टि प्राप्त होती है या जो संतुष्टि के माध्यम होते हैं उनके प्रति पसंद स्थापित हो जाती है और प्रबलनों में वृद्धि के परिणाम स्वरूप आकर्षण में भी वृद्धि हो जाती है।

- **गौण पुनर्बलन सिद्धान्त-**लाट्ट तथा लाट्ट (1974) का मत है कि पुनर्बलन नियम के अनुसार जब व्यक्ति को किसी व्यक्ति से पुरस्कार प्राप्त होता है तो पुरस्कार पाने वाला व्यक्ति पुरस्कार दाता के प्रति आकर्षित हो जाता है । मानव के संबन्ध में पुरस्कार से तात्पर्य आदर, सम्मान , धन , सामग्री सेवा या श्रम सम्बन्धी सहायता , प्रेम ,स्नेह , आदि से होता है। प्रबलन प्राथमिक भी हो सकता है तथा गौण भी हो सकता है। पुनर्बलन के समय घटित होने वाली अनुक्रियाएं जैसे किसी व्यक्ति द्वारा मुस्कुरा देना , शाबासी देना आदि प्राथमिक प्रबलन के अन्तर्गत आते हैं। ये अनुक्रियाऐं उपस्थित व्यक्ति के प्रति अनुबंधित हो जाती हैं। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति अन्य व्यक्तियों की उपस्थिति में दण्ड पाता है, तो उसकी विकर्षणात्मक अनुक्रियाऐं उन अन्य व्यक्तियों के प्रति भी अनुबंधित हो जाती है जो अक्सर उस दण्डनात्मक परिस्थिति में उपस्थित रहते हैं । इससे स्पष्ट हुआ कि अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण पुनर्बलन या प्रबलन पर आधारित अनुबंधित अनुक्रिया होती है। लाट्ट ने इस सिद्धान्त के समर्थन में किये गये प्रयोगों के आधार पर यह भी बतलाया है कि तात्कालिक पुनर्बलन के बाद आकर्षण अधिक तथा विलम्बित पुनर्बलन के बाद आकर्षण कम होता है। वैसे प्रबलन आकर्षण का स्वयं एक मुख्य आधार

है। यह एक सामान्य अनुभव की बात है , इसे सिद्धान्त का नाम देना आवश्यक नहीं है। साधारण आलोचनाओं के बावजूद भी इस सिद्धान्त की वैधता आज भी प्रासंगिक है।

- **प्रबलन अन्तःभाव सिद्धान्त-**बाइरने इत्यादि (Byrne and Clore 1970,1974) ने यह मत व्यक्त किया कि किसी के प्रति आकर्षण अनुभव किया जायेगा या विकर्षण , यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसके प्रति हमारी भावना कैसी है। किसी से पुरस्कार या प्रशंसा प्राप्त होने पर उसके प्रति अनुकूल भावना पैदा होती है और दण्ड या आलोचना प्राप्त होने पर प्रतिकूल भावना पैदा होती है। प्रथम दशा में आकर्षण और द्वितीय दशा में विकर्षण अनुभव किया जायेगा। बाइरने तथा उनके सहयोगियों द्वारा प्रस्तुत कुछ अभिग्रह निम्नवत हैं:-

i. धनात्मक पुरस्कार प्रदान करने वाले व्यक्ति के प्रति अनुकूल एवं निषेधात्मक व्यवहार करने वालों के प्रति प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न होते हैं।
ii. पुरस्कार या प्रशंसा प्राप्त होने की दशा में उदीप्त व्यक्ति या प्रयोज्य वस्तु की तरफ अग्रसर होता है और दण्ड या आलोचना की दशा में उसका परिहार करता है।
iii. किसी वस्तु के प्रति कितना आकर्षण या विकर्षण अनुभव किया जायेगा , यह पुरस्कार या दण्ड की मात्रा पर निर्भर करता है।
iv. अनुबंधन (conditioned) के आधार पर तटस्थ वस्तुओं व्यक्तियों के प्रति भी आकर्षण या विकर्षण का भाव पैदा किया जा सकता है।
v. सुखद भाव उत्पन्न होने पर उद्दीपक व्यक्ति के प्रति आकर्षण पैदा होता है और दुखद भाव उत्पन्न होने पर विकर्षण पैदा होता है। (May and Hamilton 1974, Griphitt and white 1971)

उदाहरण के लिए कल्पना कीजिए कि घर से निकलते ही कोई अजनबी व्यक्ति आपको तमाचा मार कर चला जाय , तो इस स्थिति में आपके अन्दर उस व्यक्ति के लिए ऋणात्मक भावना उत्पन्न होगी। इस स्थिति में यदि आपसे उस अजनबी का मूल्यांकन करने को कहा जाये तब आप यही कहेंगे कि उस अजनबी व्यक्ति का अकारण तमाचा मारना अच्छी बात नहीं है। मूल्यांकन में आप कहेंगे कि अजनबी व्यक्ति आपको तनिक भी पसंद नहीं है , इस घटना को देखने वाला अन्य समझदार व्यक्ति उस अजनबी को पसंद नहीं करेगा और उसका मूल्यांकन ऋणात्मक अन्तःभाव या भावनाओं के साथ ऋणात्मक रूप से करेगा। कल्पना कीजिए कि दूसरे दिन जब आप अपने घर से बाहर निकल रहे हों तब एक अजनबी व्यक्ति आपको सिनेमा देखने के लिए फी्र पास दे जाये। इस अवस्था में इस अजनबी व्यक्ति के लिये आपके अन्दर धनात्मक भावना उत्पन्न होगी। यदि आपसे इस अजनबी व्यक्ति का मूल्यांकन करने को कहा जाये तो निश्चय ही अपनी सुखद अनुभूतियों के कारण आप उस अजनबी व्यक्ति को बहुत अच्छा कहेंगे।

पुनर्बलन सिद्धान्त की सीमायें:-यदि धनात्मक भावना ही आकर्षण पैदा कर सकती है , तो दुखद दशाओं में आकर्षण नहीं उत्पन्न होना चाहिये परन्तु कभी कभी ऐसा होता है कि किसी दुखद परिस्थिति में सहभागियों में

परस्पर आकर्षण बढ़ जाता हैं। ऐसे निष्कर्ष इस सिद्धान्त की महत्ता सीमित कर देते हैं। फिर भी यह मानना ही पड़ेगा कि आकर्षण की अनुभूति में भावना का विशेष महत्व है।

iii. विनिमय सिद्धान्त (**Exchange Theory**)- निमय सिद्धान्त के आधार पर अनेक मनोवैज्ञानिकों (Thibant and Kelley 1959,Homans 1961, Blau1964) ने अन्तर्वैयक्तिक और सामाजिक अन्तःक्रियाओं की व्याख्या की है। विनिमय सिद्धान्त में पुरस्कार लागत या व्यय जैसे पुर्नबलन प्रत्ययों का प्रयोग अन्तः वैयक्तिक आकर्षण की व्याख्या के लिये किया जाता है। मायर्स (1988) ने लिखा है "सामाजिक विनिमय सिद्धान्त ''का आशय है कि मानव अन्तर्क्रियाएं पारस्परिक आदान प्रदान हैं जिसमें व्यक्ति लागत या निवेश की तुलना में अधिकाधिक पुरस्कार प्राप्त करना चाहता है"। Myers

व्यक्ति प्रय़त्न परिश्रम तथा लागत कम करना चाहता है और लाभ या पुरस्कार अधिक प्राप्त करना चाहता है। इसे ही सामाजिक विनिमय का सिद्धांत कहा जाता है इससे स्पष्ट है कि यदि कोई सामाजिक संबन्ध हमारे लिये अपेक्षाकृत अधिक सुखदायी या लाभदायक हैं और हमें उसमें श्रम अथवा अर्थ का निवेश करना पड़ता है तो उसे हम जारी रखना पसन्द करेंगे। परंतु जो संबन्ध अधिक बोरियत वाले , द्वन्द्वात्मक और अपव्ययी हैं उन्हें हम जारी नहीं रखना चाहते हैं। (Burgess and Huston 1979, Kelly 1979, Rusbult 1980)

विनिमय सिद्धांत के मूल सम्प्रत्यय

a. **पुरस्कार (Reward)** - ऐसा कार्य ,व्यवहार या घटना जिससे किसी व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति होती है , व्यक्ति की अभिवृत्ति की पुष्टि होती है , तथा असंवादिता का समाधान होता है या नकारात्मक अंतर्नोद (Negative Drive) में कमी होती है , पुरस्कार कहा जाता है।
b. **व्यय या लागत (Cost) -** लागत एक तरह की दण्डात्मक अनुभूति है, किसी के प्रति आकर्षित होने में किसी व्यक्ति को जो कठिनाई होती है उसे लागत या व्यय का नाम दिया जाता है। जैसे चिंता , थकान , परेशानी , तनाव एवं श्रम आदि को लागत के रूप में देखा जाता है। इसका अर्थ बहुत व्यापक होता है।
c. **प्रतिफल या परिणाम (Outcome) -** अन्तर्वैक्तिक आकर्षण की परिस्थिति में प्राप्त पुरस्कार (R) और लागत (C) का अन्तर परिणाम कहा जाता है। पुरस्कार - लागत = प्रतिफल अन्तर धनात्मक होने पर व्यक्ति लाभ (Profit)) की स्थिति में और अन्तर - ऋणात्मक होने पर हानि (loss) की स्थिति में होता है। लाभ की दशा में आकर्षण और हानि की दशा में विकर्षण अनुभव किया जायेगा। लाभ की दशा में यह आवश्यक नहीं है कि वह दूसरे व्यक्ति को पसंद करेगा ही या उसके प्रति आकर्षित ही होगा। सचमुच में आकर्षण उत्पन्न होने के लिए प्रतिफल को प्रत्याशा (Expectation) के न्यूनतम स्तर से ऊँचा होना चाहिए।
d. **तुलना स्तर (Comparison level) -** तुलना स्तर से तात्पर्य उस न्यूनतम प्रत्याशा स्तर से होता है जिसके अनुरूप एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ अन्तःक्रिया करने पर लाभ की उम्मीद करता है। इस प्रकार के लाभ का स्तर तुलना स्तर से जितना ही अधिक ऊपर होगा उतना ही अधिक आकर्षण अनुभव किया जायेगा। एक ही परिस्थिति में भिन्न भिन्न लोगों की प्रत्याशा भिन्न भिन्न होती है। ऐसा

भी देखा जाता है कि कुछ लोग पुरस्कार को , तो कुछ लोग लागत को अधिक महत्व देते हैं। व्यक्ति के पुरस्कार तथा व्यय में परिवर्तन होने से उसके परिणाम में भी परिवर्तन हो जाता है।

विनिमय सिद्धांत के मौलिक अभिग्रह (Myers 1988)

- सामाजिक सम्बन्ध या अन्तर्क्रिया पारस्परिक आदान प्रदान पर आधारित होती है।
- संतुष्टिदायक सम्बन्धों में आकर्षण अधिक और कष्टदायक तथा तटस्थ संबन्धों में आकर्षण कम अनुभव होता है।
- सामाजिक संबन्धों में सहभागियों के योगदान समान होने पर पारस्परिक आकर्षण अधिक अनुभव किया जाता है।
- कुछ संबन्धों की दशा में जैसे (प्रेम) व्यक्ति प्रतिफल की तुलना में योगदान अधिक भी कर सकता है।
- आकर्षण को स्थायित्व प्रदान करने के लिए अन्तर्क्रिया होती रहनी चाहिए।
- स्वभावतः व्यक्ति न्यूनतम निवेश या योगदान करके अधिकतम प्रतिफल प्राप्त करना चाहता है।
- एक जैसी ही परिस्थिति किसी को कम तो किसी को अधिक आकर्षक लग सकती है। अर्थात इस पर वैयक्तिक भिन्नताओं का प्रभाव भी पड़ता है।

विनिमय सिद्धान्त की उपयोगिता (Application of Exchange Theory) अन्य सिद्धांतों की तुलना में विनिमय सिद्धांत के द्वारा आकर्षण के विभिन्न पक्षों की व्याख्या सरलता से की जा सकती है।

a. समान विशेषता के व्यक्ति के साथ अन्तर्क्रिया सुखदायी होती है। अतः पारस्परिक आकर्षण में वृद्धि होती है। अतः विनिमय सिद्धान्त द्वारा अन्तर्वैक्तिक आकर्षण में समानता एवं पारस्परिक आकर्षण के महत्व को समझाया जा सकता है। जैसे एक धर्म , जाति, भाषा, एवं आयु। एक ही विद्यालय के लोगों में आपस में अन्तःक्रिया अधिक होती है।
b. विनिमय में भौतिक समीपता से पारस्परिक आकर्षण बढ़ता है। निकट एवं पड़ोस में रहने वाले लोगों में आकर्षण अधिक होता है। थोड़ी दूर रहने वाले लोगों के मूल्यों में भी समानता अधिक पायी जाती है। दूर रहने पर दिन प्रतिदिन के तनाव तथा ईर्ष्या से संबन्ध प्रभावित नहीं होते हैं तथा पारस्परिक आकर्षण बना रहता है।
c. विनिमय सिद्धांत द्वारा मित्रता की स्थापना तथा प्रेम आदि जैसे व्यवहारों की भी व्याख्या की जा सकती है। मित्रता एवं प्रेम की स्थापना शून्य स्थिति से प्रारम्भ होती है।

इससे अन्तर्क्रिया या किसी अन्य रूप में सूचना प्राप्त होने पर दोनों पक्षों में एक दूसरे के प्रति कुछ चेतना पैदा होती है। आकर्षण का अनुभव होगा परस्पर संबन्ध स्थापना का प्रयास होगा। फिर आकर्षण प्रगाढ़ होने लगेगा , मित्रता प्रगाढ़ हो जाती है। परिस्थितियां या अनुभव नकारात्मक होने पर आकर्षण घटता है।

विनिमय सिद्धान्त के दोष:-अनेक उपयोगिताओं के बाबजूद इस सिद्धान्त में कुछ कमियां हैं:

i. इस सिद्धान्त में आकर्षण तथा संबन्धों की स्थापना में लागत व पुरस्कार एवं परिणाम को महत्व दिया जाता हैं। सामान्यतः इसी आधार पर संबन्ध स्थापित होते हैं परन्तु गहन प्रेम की स्थिति में लाभ - हानि पर ध्यान नहीं दिया जाता है। इसी प्रकार सामुदायिक संबन्धों में यह बात देखने को नहीं मिलती हैं। (Myres 1985 Clark 1984)

ii. आकर्षित होने वाले व्यक्ति की लागत, पुरस्कार व परिणामों को आधार मान कर आकर्षण की व्याख्या की जाती है, दूसरे पक्ष पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता है।

iv. साम्य या समदृष्टि सिद्धान्त (Equity Theory) - इस सिद्धान्त के प्रमुख समर्थक वास्टलर, वास्टलर तथा बर्सचीड (Wastler& Wastler & Berschid 1978) हैं। इसका आशय यह है कि किसी सामाजिक संबन्ध से लोगों को जो प्रतिफल या परिणाम (outcome) प्राप्त होता है वह उस संबन्ध के लिये दिये गये योगदान (Input) के अनुपात में होना चाहिए (Myers1988) । इससे स्पष्ट है कि अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण , सामाजिक विनिमय (न्यूनतम निवेश अधिकतम लाभ) की प्रत्याशा से प्रभावित होता है और सामाजिक संबन्धों के सहयोगियों को चाहिए कि वे साम्य (Equity) को बनाये रखें। इससे संबन्धों में स्थायित्व तथा अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण बना रहेगा।

अतः यदि A और B व्यक्तियों में अन्तः वैर्यक्तिक आकर्षण है तो निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिए।

$$\frac{\text{A's outcomes}}{\text{A's inputs}} = \frac{\text{B's Outcomes}}{\text{B's input}}$$

इससे स्पष्ट है कि यदि दोनों पक्षों के योगदान निवेश और प्रतिफल या परिणाम समान है तो परस्पर आकर्षण की स्थिति बनी रहेगी। यदि लोग मनमाने ढंग से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास करते हैं तो संबन्ध कमजोर पड़ने लगेगा और अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण कम होता जायेगा। दोनो पक्षों के लागत तथा परिणाम में असमानता होने पर असंतुलन या असाम्य की अनुभूति होगी। इसका पारस्परिक आकर्षण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

सिद्धांत के मुख्य अभिग्रह

i. यदि दोनों पक्षों (A एवं B) के लागत तथा परिणाम में समानता है तो संतुलन तथा आकर्षण बना रहेगा।

ii. मनमाने ढंग से इच्छाओं की पूर्ति करने से संबन्ध कमजोर पड़ता है और आकर्षण भी घटता है।

iii. असंतुलन उत्पन्न होने पर लोग अपने चिंतन में परिवर्तन करके संतुलन की स्थिति ला सकते हैं।

समालोचना:-साम्य सिद्धान्त को विनिमय सिद्धान्त का परिमार्जित रूप माना जाता है। इसकी अच्छाई यह है कि यह दोनों पक्षों (A , B) की लागत तथा परिणाम दोनों को आकर्षण के लिये आवश्यक मानता है। यह सिद्धान्त पुरस्कार तथा व्यय में संतुलन की बात तो अवश्य करता है परन्तु संतुलन के आदर्श बिन्दुओं का उल्लेख नहीं करता है।

सामाजिक जीवन में सदैव साम्य नहीं पाया जाता है फिर भी लोगो में संबन्ध किसी न किसी कारण से बना रहता है। जैसे दो व्यक्तियों के पुरस्कार तथा व्यय अनुपात में भिन्नता तो होती है परन्तु किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह से उन दोनों को समान मात्रा में धमकी मिल रही हो।

v. **पूरक आवश्यकता सिद्धान्त (Complementary NeedTheory) -** के अनुसार यदि लोग एक दूसरे की आवश्यकताओं के लिये पूरक व्यक्तियों के रूप में कार्य करते हैं तो उनमें परस्पर आकर्षण अधिक अनुभव किया जायेगा। ऐसी दशा में मित्रता परस्पर आकर्षण का आधार बनती है इसे संपूरकता आकर्षण परिकल्पना (Complementary attraction hypothesis) कहा जाता है।

मायर्स (1988) के अनुसार 'लोगों के संबन्धों में पायी जाने वाली यह ऐसी प्रवृत्ति है जिसके कारण लोग एक दूसरे की आवश्यकताओं (कमियों) को पूरा करने का प्रयास करते हैं। व्यक्ति उन व्यक्तियों के प्रति आकर्षण का अनुभव करता है जिनकी आवश्यकता भिन्न तो है परन्तु उनसे उनकी स्वयं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि पूरक आवश्यकता सिद्धांत विभिन्नता को पारस्परिक आकर्षण के लिये आवश्यक माना जाता है। जैसे स्त्री पुरूष में असमानता होने पर भी लैंगिक आवश्यकता के परस्पर पूरक होते हैं। इस लिए इनमें परस्पर आकर्षण देखने को मिलता है।

पूरक आवश्यकताओं का आकर्षण का आधार बनने के कारण:-

i. जब लोग एक दूसरे की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं तो यह उनके लिये पुरस्कार का कार्य करता है इससे परस्पर आकर्षण बढ़ता है। जैसे एक व्यक्ति चापलूसी पसंद है और दूसरा उसके द्वारा अपना लक्ष्य प्राप्त करना चाहता है ,तो वह चापलूसी करके अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। इससे दोनों में प्रगाढ़ता बढ़ेगी।

ii. कोई व्यक्ति किसी ऐसी विशेषता या गुण वाले व्यक्ति ;Bद्ध के प्रति आकर्षित होता है जिसे प्राप्त करने की इच्छा उसे कभी हुई थी परन्तु परिस्थितिवश वह उसे प्राप्त करने में सफल नहीं हो सका था।

पूरक आवश्यकताओं के प्रकार

- **प्रथम प्रकार की संपूरकता-** यदि एक व्यक्ति की एक तरह की आवश्यकता अधिक प्रबल है (जैसे प्रभुत्व) दूसरे में यह आवश्यकता कम है तो ऐसे दो लोगों में परस्पर आकर्षण अधिक पाया जायेगा।
- **द्वितीय प्रकार की संपूरकता-** यदि एक व्यक्ति में एक तरह की आवश्यकता अधिक उच्च है (जैसे निर्भरता) और दूसरे व्यक्ति में किसी अन्य तरह की आवश्यउच्च है (जैसे स्नेह , प्यार , संबन्ध) तो उनमें पारस्परिक आकर्षण अधिक पाया जायेगा।

पूरक सिद्धान्त की सीमाएं (Limitation of complementarity Theory)

i. इसे व्यापक शोध समर्थन प्राप्त नहीं हुआ है और प्राप्त निष्कर्षों में एक रूपता नहीं है (Secord 1972)

ii. पूरक आवश्यकताओं की अपेक्षा समान आवश्यकताएं आकर्षण को अधिक प्रभावित करती हैं। (Secord and Muthard 1965)

iii. इसके सम्प्रत्यय (Concepts) एवं विधियाँ भी अपेक्षाकृत कम स्पष्ट हैं जिसका निष्कर्षों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। इस प्रकार पूरक आवश्यकता सिद्धान्त अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण की व्याख्या करने में पूर्णतः सक्षम नहीं है।

अभ्यास प्रश्न

1. सामाजिक प्रभाव से तात्पर्य व्यक्ति की मनोवृत्ति तथा व्यवहार में _____ से होता हैं , जो _____द्वारा उत्पन्न किया जाता है।
2. सामाजिक प्रभाव सर्वदा _____नहीं होता हैं।
3. सामाजिक प्रभाव _____ तथा _____दोनों हो सकते हैं।
4. सामाजिक प्रभाव की प्रक्रिया में प्रभाव डालने को _____कहते हैं।
5. सामाजिक प्रभाव प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में _____का सीधा असर पड़ता है।
6. किसी के प्रति स्नेह या अनुकूलता को _____कहते हैं।
7. _____सामाजिक अन्तःक्रियाओं का एक मुख्य आधार है।
8. लोगों के प्रतिफलों तथा योगदानों के आधार पर आकर्षण की व्याख्या _____से की जाती है।
9. सामाजिक संबन्धों से "कुछ न्यूनतम् प्रत्याशा "को _____कहा जाता है।
10. पारस्परिक समानता पसन्दगी _____उत्पन्न करती है।

8.8 सारांश

- सामाजिक प्रभाव से तात्पर्य व्यक्ति की मनोवृत्ति तथा व्यवहार में परिवर्तन से होता है। जो अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा उत्पन्न किया जाता है।
- जो व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह दूसरों पर प्रभाव डालता है उसे प्रभावक अभिकर्ता कहते हैं।
- प्रभावित होने वाले व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को लक्षित व्यक्ति कहते हैं।
- प्रभावित होने वाले लक्षित व्यक्ति द्वारा कराये जाने वाले कार्य/व्यवहार को लक्ष्य क्रिया कहते हैं।
- सामाजिक परिवेश का सीधा असर सामाजिक प्रभाव प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में दिखाई देता है।
- किसी अन्य व्यक्ति या स्रोत से प्राप्त सूचना के आधार पर, व्यवहार , कार्य, अभिवृत्ति में परिवर्तन 'सूचनात्मक सामाजिक प्रभाव कहलाता है।
- सामाजिक प्रशंसा, पुरस्कार, लाभ पाने अथवा किसी कष्ट या असफलता से बचने के लिये किसी के सुझाव को स्वीकार कर व्यवहार करना मानकात्मक सामाजिक प्रभाव ' कहलाता है।
- परस्पर एक दूसरे के प्रति आकर्षित होना ही अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण है। किसी के प्रति स्नेह या अनुकूलता को अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण कहते है। अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण सामाजिक अन्तःक्रियाओं का आधार है।

- अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण की व्याख्या के लिये समाज मनोवैज्ञानिकों ने, समानता या संतुलन सिद्धान्त पुनर्बलन सिद्धांत, विनिमय सिद्धांत, साम्य या समदृष्टि सिद्धान्त एवं पूरक आवश्यकता सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है।
- व्यक्तियों के विचारों, भावनाओं और अभिवृत्तियों में परस्पर जितनी ही समानता/संतुलन होता है उनमें अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण उतना ही अधिक पाया जाता है। इनमें किसी के भी भिन्न होने पर असंतुलन उत्पन्न होता है। इस स्थिति में उत्पन्न विकर्षण के कारण तनाव ,चिन्ता,और कुण्ठा उत्पन्न होने लगती है।
- मायर्स (1988) के अनुसार पारस्परिक समानता पसंदगी पुनर्बलन उत्पन्न करती है।
- लाट्ट ने यह भी बताया कि तात्कालिक पुनर्बलन के बाद आकर्षण अधिक तथा विलम्बित पुनर्बलन के बाद आकर्षण कम हो जाता है।
- मायर्स (1988) के अनुसार मानव अन्तःक्रियाए, पारस्परिक आदान प्रदान है, जिसमें व्यक्ति लागत या निवेश की तुलना में अधिकाधिक पुरस्कार प्राप्त करना चाहता है। यही सामाजिक विनिमय सिद्धान्त का आशय है।
- साम्य या समदृष्टि सिद्धान्त का प्रतिपादन (Wastler,Wastler & Berschid (1978) ने किया। इसका आशय यह है कि किसी सामाजिक संबन्ध से लोगों को जो प्रतिफल (Outcomes) प्राप्त होता है वह इस संबन्ध के लिए दिये गये योगदान (input) के अनुपात में होना चाहिए।
- विन्च (Winch 1958) के अनुसार यदि लोग एक दूसरे की आवश्यकताओं के लिए पूरक व्यक्तियों के रूप में कार्य करते हैं तो उनमें परस्पर आकर्षण अधिक अनुभव किया जाता है । ऐसी दशा में भिन्नता परस्पर आकर्षण का आधार बनती है।

8.9 शब्दावली

1. **लक्ष्य क्रिया-** सामाजिक व्यवहार प्रक्रिया में कार्य या व्यवहार जो प्रभावित व्यक्ति को करना होता है
2. **लक्ष्य व्यक्ति-** सामाजिक प्रभाव प्रक्रिया में जो व्यक्ति प्रभावित होता है
3. **प्रभावक अभिकर्ता-** सामाजिक प्रभाव प्रक्रिया में प्रभाव डालने वाला व्यक्ति
4. **सामाजिक परिवेश-** सामाजिक स्वीकृति प्राप्त क्रिया-कलाप रीति रिवाज , प्रथा , वातावरण आदि
5. **मानकात्मक-** प्रशंसा , पुरस्कार , लाभ / आदि अर्जित करने का मापदण्ड
6. **अन्तर्वैयक्तिक -** एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से संबन्ध
7. **संतुलन-** समानता
8. **पुनर्बलन-** प्रबलन-पुरस्कार, प्रोत्साहन
9. **अन्तःभाव-** किसी के प्रति आन्तरिक भावना
10. **विनिमय -** पारस्परिक आदान प्रदान
11. **समदृष्टि-** साम्य , समानता

12. **पूरक-** कमी को पूर्ण करने वाला

8.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. परिवर्तन , अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों
2. स्थायी
3. धनात्मक , ऋणात्मक
4. प्रभावक अभिकर्ता
5. सामाजिक परिवेश
6. अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण
7. अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण
8. साम्य सिद्धान्त
9. तुलना स्तर ।
10. प्रबलन

8.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. सामाजिक प्रभाव से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख अवयवों का वर्णन कीजिए।
2. 2.सामाजिक प्रभाव के स्वरूप को समझाते हुये उसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।
3. अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण से क्या तात्पर्य है ? इसके निर्धारकों का वर्णन कीजिए।
4. आकर्षण के संतुलन सिद्धान्त का वर्णन कीजिए।
5. अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण के विनिमय सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या करें।
6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त नोट लिखें:-
   i. पूरक आवश्यकता सिद्धान्त (Complimentary need theory)
   ii. समदृष्टि सिद्धांत (Equity Theory)
   iii. पुनर्बलन सिद्धान्त (Reinforcement theory)

8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह आर. एन. - 2007-2008 आधुनिक समाज मनोविज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा- 7
2. सिंह आर. एन.- (2005) आधुनिक समाज मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मंन्दिर आगरा -2
3. सिंह ए.के - (2002) समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली
4. सिंह ए.के. -(2000) उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान मोती लाल बनारसी दास दिल्ली
5. श्रीवास्तव डी. एन.- (दसवां संस्करण) समाजिक मनोविज्ञान साहित्य प्रकाशन आगरा
6. श्रीवास्तव डी. एन एवं अन्य-(2000-2001)आधुनिक समाज मनोविज्ञान एच.पी. भार्गव बुक हाउस आगरा ।
7. भटनागर ए.बी.एवं अन्य - डेवलपमें न्ट आफ लर्नर एण्ड टीचिंग लर्निगं प्रोसेस विनय राखेजा C/O लाल बुक डिपोमेरठ

8. रोवर्ट, ए बैरन एवं डान बैरन (नौवा संस्करण) पीयर्सन एडूकेशन (सिंगापुर) प्रा. लि. इण्डियन ब्रांच 482 एम. आइ्र पटपरगंज दिल्ली 110092 इंडिया।
9. त्रिपाठी, आर.बी. (2002) व्यक्तित्व का मनोविज्ञान सुमित भार्गव , एवं सिंह आर. एन. गंगा सरन एण्ड ग्रेण्ड सन्स सी. के. 37/44 बी बॉसफाटक वाराणसी
10. मुहम्मद, सुलेमान (2006) सामान्य मनोविज्ञान , मूल प्रक्रियाऐं एवं संज्ञानात्मक प्रक्रियाएं। मोती लाल बनारसी दास दिल्ली
11. अग्रवाल, विमल (2010-11) मनोविज्ञान एस.बी.पी.डी. पब्लिकेशन आगरा।

इकाई 9-प्रसामाजिक व्यवहार ,परोपकारी व्यवहार , परोपकारी व्यवहार सिद्धान्त(Pro-Social Behavior and Altruistic behavior, Theories of Pro-Social behavior)

इकाई संरचना-

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 प्रसामाजिक व्यवहार
    9.3.1 परिभाषाएं एवं अर्थ
    9.3.2 विशेषताएं
9.4 परोपकारी व्यवहार
    9.4.1 परिभाषाएं एवं अर्थ
    9.4.2 विशेषताएं
    9.4.3 प्रकार
9.5 प्रसामाजिक व्यवहार एवं परोपकारी व्यवहार में अन्तर
9.6 परोपकारिता एवं प्रसामाजिक व्यवहार के निर्धारक
    9.6.1 परिस्थितिजन्य कारक
    9.6.2 सामाजिक कारक
    9.6.3 वैयक्तिक कारक
9.7 परोपकारिता एवं प्रसामाजिक व्यवहार के सिद्धान्त
9.8 परोपकारिता में वृद्धि करना
9.9 सारांश
9.10 शब्दावली
9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
9.13 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

प्रकृति में पाए जाने वाले समस्त जीवों को स्वार्थी माना जाता हैं। मनुष्य भी इससे अछूता नही हैं। उसके समस्त क्रियाकलाप प्रायः स्वार्थपरक ही होते हैं। वह जो कुछ भी करता है उसके पीछे उसका स्वार्थ या निजी उद्देश्य छिपा रहता हैं। कभी कभी वह निःस्वार्थ भी कार्य करता है ,दूसरों की सहायता करता है जिसमें उसका कोई स्वार्थ नहीं होता है। ऐसे व्यवहारों को परोपकारी एवं समाजोपयोगी व्यवहार कहा जाता है। इन्हें निष्काम सेवा कहा जाता हैं। कसी के साथ सहयोग करना, किसी की सहायता करना, किसी का दुख बांट लेना, किसी की संतुष्टि के लिए स्वयं को कष्ट में डाल देना, सामाजिक मानकों या मर्यादाओं के अनुरूप व्यवहार करना या अन्य लोगों को लाभ प्रदान करना आदि ऐसे ही व्यवहार कहे जाते हैं। ऐसे व्यवहारों को अच्छा, मानवीय, वांछित, अनुकूल या धनात्मक व्यवहार माना जाता है। ऐसे व्यवहारों से समाज में सहयोग,सामंजस्य तथा सद्भाव की भावना बढ़ती है। यही कारण है कि आधुनिक शोधकर्ता इस तरहं के व्यवहारों में विशेष रूचि ले रहे हैं। ऐसे मानवीय व्यवहार आत्मिक सुख प्रदान करते हैं। रक्त दान करना, मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति देना, गरीब लोगों को रोटी, कपड़ा व मकान के लिए आर्थिक सहायता देना, सूखा, बाढ़ क्षेत्रों के लिए खाद्य पदार्थ एवं अन्य राहत के सामान पहुंचाना, दान देना आदि प्रसामाजिक या प्रतिसामाजिक व्यवहार के उदाहरण हैं। ऐसे कार्यों में लाभ के लिए न सही,स्वान्तः सुखाय आप भी यथासंम्भव सहभागिता करते ही हैं। समाज आपसे ऐसी अपेक्षा भी करता हैं। आशा है, प्रस्तुत पाठ्य सामग्री से आपको जानकारी होगी तथा इन मानवीय व्यवहारों का आपके जीवन में अनुपालन भी सुनिश्चित हो सकेगा।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आपः-

1. परोपकारिता एवं प्रसामाजिक व्यवहार का अर्थ, स्वरूप एवं विशेषता को समझ सकें।
2. परोपकारिता एवं प्रसामाजिक व्यवहार के सिद्धान्तों से अवगत हो सकें।
3. परोपकारिता एवं प्रसामाजिक व्यवहार के अन्तर को समझ सकेंगे ।
4. आप निःस्वार्थ समाज सेवा करने के लिये सदैव तत्पर हो सकें।
5. सामाजिक मानकों के अनुसार व्यवहार करने में अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों को समझें तथा उनका भली प्रकार निर्वहन कर सकें।

9.3 प्रसामाजिक व्यवहार (Pro Social Behaviour)

प्रसामाजिक व्यवहार को प्रतिसामाजिक व्यवहार या समाजोपयोगी व्यवहार कहते हैं। जब कोई व्यक्ति समाज में दूसरों को लाभ पहुंचाने वाला व्यवहार करता है, जो समाज में उपयोगी व वांछनीय समझा जाता है, ऐसे व्यवहार को प्ररसामाजिक या प्रतिसामाजिक या समाजोपयोगी व्यवहार कहा जाता है। प्रतिसामाजिक/प्रसामाजिक व्यवहार की कई श्रेणियां हैं जिनमें से एक प्रमुख श्रेणी सहायता परक व्यवहार (Helping behaviour) भी है। सामान्य शब्दों में 'परोपकारिता को सहायता परक व्यवहार भी कहा जाता है।

परोपकारिता - सहायता परक व्यवहार - प्रसामाजिक व्यवहार (श्रेणी)

9.3.1 परिभाषाएं एवं अर्थ

- **बैरन एवं वाइरन(1987) के अनुसार** समाजोपयोगी व्यवहार वह व्यवहार हैं, जिसमें व्यवहार करने वालो को स्पष्ट लाभ नहीं रहता है बल्कि उन्हें कुछ जोखिम भी उठाना पड़ता हैं, और कुछ त्याग भी करना पड़ता हैं। ऐसे कार्य आचरण के नैतिक मानकों पर आधारित होते हैं। "Prosocial behavior refers to acts that have no obvious benefits for the individual engaging in them and even involve risk and some degree of sacrifice such acts are based on ethical standards of conduct" **Baron & Byrne –**
- **मैक्डेविड और हरारि (Mc David J.W. & Harari.H 1986)** ने समाजोपयोगी व्यवहार के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि समाजोपयोगी व्यवहार समाज के सदस्यों के बीच पारस्परिक सहायता और ष्शुभेच्क्षा का उदार विनिमय है।
- **ब्राउन और कुक (1986) ने** प्रतिसामाजिक व्यवहार को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "प्रतिसामाजिक व्यवहार दूसरों की मदद करने, सहभागिता दिखाने, और सहयोग दिखाने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। प्रतिसामाजिक व्यवहार में अनेक प्रकार के व्यवहार आते हैं जो एक या अधिक व्यक्तियों से संबन्धित होते हैं।

सहायता परक व्यवहार (Helping behaviour) और परोपकारी व्यवहार (Altruistic behaviour) एक प्रकार का समाज के हित में किया गया व्यवहार है तथा ये प्रसामाजिक व्यवहार के अन्तर्गत ही आते हैं। अतः यह कहा जा सकता हैं कि समस्त परोपकारी व्यवहार , प्रसामाजिक व्यवहार हैं परन्तु सभी प्रसामाजिक व्यवहार परोपकारी व्यवहार नहीं हो सकते हैं।

- **रैथस (1984) के अनुसार** बिना स्वार्थ के दूसरों के कल्याण के प्रति चिन्तित होना परोपकारिता कहा जाता है (Altruism is unselfish concern for the welfare of others-Rathus)
- **मायर्स (1988) के अनुसार** "परोपकारिता का आशय , लाभ या प्रतिफल की आशा किए बिना दूसरों की चिंता तथा सहायता करने , अपने स्वार्थ के प्रति सचेष्ट हुए बिना दूसरों के प्रति समर्पित होने से है"। (Altruism is concern and help for others that asks nothing in return, devotion to others about conscious regard for one's self interest)

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि परोपकारिता, सहायतापरक व्यवहार या समाजोपयोगी व्यवहार, ऐसे व्यवहार हैं जो मानवीय मूल्यों से निर्देशित होते हैं। इनका आधार नैतिक मर्यादायें होती हैं, और ऐसे व्यवहार किसी को लाभ या सहायता पहुँचाने के लिए किये जाते हैं। ऐसे व्यवहारों को करने के पीछे व्यक्ति का स्वार्थ या निजी उद्देश्य नहीं होता है। यदि होता भी है तो दूसरों के लिए खर्च करना ही पड़ता है। कभी कभी उसे संकट या जोखिम भी उठाना पड़ सकता है। ऐसे कल्याणकारी व्यवहार व्यक्ति स्वेच्छा से करता है। गरीबों जरूरतमंदों या संकट में पड़े व्यक्तियों की सहायता करना आदि परोपकारिता के उदाहरण हैं। प्रतिसामाजिक व्यवहार से साधनहीन और निर्धन लोगो की सहायता होती हैं। सूखा पीड़ित और बाढ पीड़ित या भूकम्प पीड़ित लोगों के सहायतार्थ किये जाने

वाले कार्य जैसे खाद्य पदार्थों का वितरण, औषधियों का वितरण, वस्त्रों का वितरण निःशुल्क आवास व्यवस्था आदि प्रति सामाजिक व्यवहार के अन्तर्गत आते हैं। निर्धन और मेघावी छात्रों को छात्रवृत्ति या पुस्तकों का वितरण भी प्रतिसामाजिक या समाजोपयोगी व्यवहार कहलाते हैं।

9.3.2 प्रसामाजिक व्यवहार की विशेषताएं

यह एक स्वैच्छिक व्यवहार है। इस प्रकार का व्यवहार व्यक्ति जानबूझकर करता है।

i. यह व्यवहार उनके लिए लाभप्रद होता है जिनके लिए यह किया जाता है।
ii. प्रतिसामाजिक व्यवहार करने वाले व्यक्ति को जोखिम रहता है और ऐसे व्यक्ति को कभी कभी हानि भी सहन करनी पड़ती है।
iii. प्रसामाजिक व्यवहार समाज के नियमों और मानकों के अनुसार होता है।
iv. प्रसामाजिक व्यवहार करने वाले व्यक्ति या व्यक्तियों को ऐसा व्यवहार करने से कुछ न कुछ आत्मसन्तोष का अनुभव होता है।
v. प्रतिसामाजिक व्यवहार करने वाले व्यक्तियों का स्वार्थ स्पष्ट नहीं होता है।

9.4. परोपकारी व्यवहार (Altruistic Behaviour)

9.4.1 परोपकारी व्यवहार का अर्थ एवं परिभाषाएं

परोपकारी व्यवहार एक विशेष प्रकार का सहायता परक व्यवहार है। परोपकारी व्यवहार करने वाला व्यक्ति किसी स्वार्थ की आशा के बिना ही वह दूसरों को लाभ पहुंचाने वाला या दूसरों का कल्याण करने वाला व्यवहार कहलाता है। उसका उद्देश्य दूसरों का कल्याण करना और लाभ पहुंचाना रहता है। परोपकारी व्यक्ति हानि उठा करके भी दूसरों को लाभ पहुँचाने वाला व्यवहार करता है। उदाहरण के लिए:-गर्मी के दिनों में निःशुल्क प्याऊ की व्यवस्था करना, जाड़ों में निर्धन लोगों के लिए, गर्म वस्त्रों का वितरण, शीतलहर चलने पर गरीब लोगों के लिए अलाव की व्यवस्था आदि सभी परोपकारी व्यवहार हैं। इन परोपकारी व्यवहारों में परोपकारी व्यक्ति का कोई स्वार्थ नहीं होता है। लाभ पाने की कोई इच्छा नहीं होती है। यह भी कहा जा सकता है कि परोपकारी व्यवहार में व्यक्ति अपनी कुछ न कुछ हानि उठाकर दूसरों को लाभ पहुंचाता है।

- ❖ आइजेंक (1972) ने परोपकारी व्यवहार को परिभाषित करते हुए लिखा हैं कि यह वह व्यवहार हैं जिसमें परोपकार करने वाले का कोई स्वार्थ नहीं होता हैं। इस प्रकार के व्यवहार में वह सभी व्यवहार सम्मिलित हैं जिनका उद्देश्य दूसरों को लाभ पहुँचाना होता है। लाभ पहुँचाने वाले व्यक्ति का अपना कोई लाभ या स्वार्थ नहीं होता है।
- ❖ रैथस (1984) के अनुसार "बिना स्वार्थ के दूसरों के कल्याण के प्रति चिन्तित होना परोपकारिता कहा जाता है" Altruism is unselfish concern for the welfare of others" . (Rathus 1984)
- ❖ मायर्स (1988) के अनुसार "परोपकारिता का आशय लाभ या प्रतिफल की आशा किये बिना दूसरों की चिन्ता तथा सहायता करने, अपने स्वार्थों के प्रति सचेष्ट हुए बिना दूसरों के प्रति समर्पित होने से है"।

Altruism is concern and help for others that ask nothing in return, devotion to others without conscious regard for one's self interest " --Myers.

9.4.2 परोपकारी व्यवहार की विशेषताएं

i. परोपकारिता का आशय दूसरों के कल्याण के प्रति सचेश्ट रहने से है।
ii. यह व्यवहार स्वेच्छा से किया जाता है।
iii. यह निःस्वार्थ होता है।
iv. सहायता करने वाले को कभी कभी हानि या जोखिम उठानी पड़ती है।
v. ऐसे व्यवहार व्यक्ति या समाज के लिए कल्याणकारी होते है।
vi. ऐसे व्यवहार आत्म चेतना तथा नैतिक मान्यताओं द्वारा प्रेरित होते हैं।

9.4.3 परोपकारी व्यवहार के प्रकार

i. शुद्ध परोपकारी व्यवहार (Pure Altruistic Behavior) - इस प्रकार के परोपकारी व्यवहार में परोपकारी व्यवहार करने वाले व्यक्ति का किसी प्रकार का प्रत्यक्ष या परोक्ष , कोई भी लाभ या स्वार्थ नही होता है।
ii. अशुद्ध परोपकारी व्यवहार (Impure Altruistic Behavior)- इस प्रकार के परोपकारी व्यवहार में परोपकारी व्यवहार करने वाले व्यक्ति का किसी न किसी प्रकार से लाभ (प्रत्यक्ष या परोक्ष) होता है। जैसेः-परलोक सुधार की कामना, यश, कीर्ति पाने की लालसा आदि।
iii. पारस्परिक परोपकारी व्यवहार (ReciprocalAltruistic Behavior) - इसमें परोपकारी व्यवहार इस आशा से करता है कि बदले में दूसरा व्यक्ति भी (परोपकार व्यवहार प्राप्त करने वाला) उसके साथ भविष्य में परोपकारी व्यवहार करेगा।

9.5 प्रसामाजिक व्यवहार व परोपकारी व्यवहार में अन्तर

i. प्रसामाजिक व्यवहार को प्रतिसामाजिक व्यवहार या समाजोपयोगी व्यवहार भी कहते हैं। सहायतापरक व्यवहार प्रसामाजिक व्यवहार की एक श्रेणी है। परोपकारी व्यवहार सहायता परक व्यवहार का एक अंग है जिसमें कोई लाभ या स्वार्थ निहित नहीं होता है। फलतः परोपकारी व्यवहार भी प्रसामाजिक व्यवहार का एक अंग है।
ii. परोपकारी व्यवहार-सहायतापरक एवं प्रसामाजिक व्यवहार है, लेकिन प्रत्येक समाजोपयोगी / प्रसामाजिक/ सहायतापरक व्यवहार, परोपकारी व्यवहार नहीं हेाता है।
iii. प्रसामाजिक व्यवहार करने वाले व्यक्तियों का प्रायः कुछ न कुछ स्वार्थ/लाभ होता है। यह स्वार्थ या लाभ प्रत्यक्ष भी हो सकता है , परोक्ष भी हो सकता है। दूसरी ओर परोपकारी व्यवहार में लाभ एवं स्वार्थ का कोई स्थान नहीं है।

9.6 परोपकारिता एवं प्रसामाजिक व्यवहार के निर्धारक

- परिस्थितिजन्य कारक
- सामाजिक कारक
- वैयक्तिक कारक

9.6.1 परिस्थिति जन्य कारक (Situational Factors)

i. **सहायता की पुकार (Cry for help)** साधारण रूप से निवेदन करने पर, लोग कम ध्यान देते हैं, रोते हुए सहायता की माग करने पर लोग सहायता के लिये तुरन्त तत्पर हो जाते हैं। जैसे किसी दुर्घटना में घायल लोगों की चीख पुकार पर सहायता के लिये लोग तुरन्त पहुँच जाते हैं । (Clark and Baird 1972,1974)

ii. **दर्शक प्रभाव (Bystander's Effect)-** दुर्घटना स्थल पर भीड़ होने पर कोई व्यक्ति सहायता के लिए आगे आने के लिए दूसरे की प्रतीक्षा करता है। कुछ लोगों के आगे आने पर अन्य काफी लोग सहायता कार्य में लग जाते हैं (Latane and Nida 1981)

iii. **समय की कमी (Lack of time)** समय कम होने या किसी कार्य में व्यस्त रहने के कारण लोग सहायता के लिए आगे नहीं आते हैं (Darley and Baston1973)

iv. **हानि की सम्भावना (Probability of loss)** आजकल प्रायः दुर्घटना में घायल व्यक्ति की सहायता से लोग इस भय से कतराते हैं कि वह स्वयं किसी परेशानी में न पड़ जायें । (Pilliavin Act 1984)

9.6.2 सामाजिक कारक (Social Factors)

- **सामाजिक उत्तरदायित्व (social responsibility):-** जिनमें मानवीय भावना एवं सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना अधिक होती है वे परोपकारी एवं सामाजिक व्यवहारों में काफी रूचि लेते हैं। (Berkorditz and Daniels1963) सज्जन व्यक्ति की सहायता के लिए लोग शीघ्र तत्पर हो जाते हैं जबकि शरारती शराबी या दुष्ट की सहायता के लिए प्रयत्न नहीं करते (Bryan and Davenport 1968, Berkowitz etc 1964, Schwart 1978)
- **पारस्परिक (Reciprocity):-**यदि कोई व्यक्ति समझता है कि दूसरा व्यक्ति पूर्व में उसकी सहायता कर चुका है या भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर उसकी सहायता करेगा तो वह व्यक्ति उसकी सहायता के लिऐ आगे आयेगा। यदि वह समझता है कि जिसकी सहायता करना चाहता है वह भविष्य में उसके काम नहीं आयेगा तो वह सहायता करने से कतरायेगा।
- **सामाजिक विनिमय (Social Exchange):-**जब सहायता का विचार हानि लाभ के आंकलन पर आधारित होता है तो इसे सामाजिक विनिमय सहायता कहते हैं। सुख, शान्ति, प्रशंसा, पुरस्कार या आर्थिक लाभ आदि की सम्भावना होने पर व्यक्ति सहायता कार्य में उत्सुकता दिखाता है। वह धन हानि या आलोचना के भय से सहायता कार्य नहीं करेगा। (Pilliavin etc 1982 , Grusec and Redler 1980, Allen 1980)

9.6.3 वैयक्तिक कारक (Individual Factor)

a. **समानता (Similarity):-** सहायता करने वाले एवं सहायता पाने वाले व्यक्तियों में व्यावहारिक, वैचारिक या अन्य प्रकार की समानता है तो परोपकारी व्यवहार शीघ्रता से प्रदर्शित होगा (Baron 1971) । इसी प्रकार पहनावे में समानता या राजनैतिक विचारों में समानता होने पर भी (Ahlert etc 1973) लोग एक दूसरे की सहायता आसानी से करने को आगे आ जाते हैं।

b. **प्रजाति (Race):-** लोग एक दूसरे की सहायता जाति या धर्म के आधार पर करते पाए जा रहे हैं (Benson 1973)। यद्यपि ऐसा भेदभाव समाज में मिलता है , परंतु कभी कभी लोग दूसरे वर्गों एवं प्रजातियों के लोगों की सहायता करने में भी अधिक रूचि लेते हैं (Dutton 1973) । पीड़ित व्यक्ति का लिंग (Sex of victim) यदि पीड़ित व्यक्ति महिला है तथा आकर्षक भी है तो उसकी सहायता के लिए पुरूषवर्ग अधिक आगे आएंगे।

c. **व्यक्तित्व (Personality):-** सामाजिक बहिर्मुखी, मित्रवत, संवेदनशील एवं दायित्वपूर्ण के लोग दूसरों की सहायता में अधिक रूचि लेते हैं (Moriarty 1975)। मनोदशा (Mood) यदि व्यक्ति अच्छी या सुखद मनोदशा में है तो वह सहायतापरक व्यवहार में अधिक रूचि लेगा (Cunnigham etc 1980 Rosechan etc 1980)। चिंता या अवसाद की दशा में व्यक्ति परोपकारिता में कम रूचि लेगा (Mayer etc 1985 Rosers etc 1982)।यदि व्यक्ति यह धारणा बना लेता है कि पीड़ित व्यक्ति अपने कर्मों का फल पा रहा है तो वह उसकी सहायता में रूचि नहीं लेगा (Lerner etc 1975)। अपराध बोध (Guilt feeling) यदि आपके अन्दर यह भावना आ जाती है कि पीड़ित व्यक्ति का दुख आपके ही कारण है तब आपके मन में अपराध बोध की स्थिति उत्पन्न होगी। यह आपको पीड़ित व्यक्ति की सहायता करने के लिये प्रेरित करेगी (Katzer etc 1978)।

9.7 परोपकारिता एवं प्रसामाजिक व्यवहार के सिद्धांत-(Theory of Altruism & Prosocial Behavior)

परोपकारिता या सहायता परक व्यवहार की व्याख्या के लिये कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है। ऐसे सिद्धन्तों से इस बात पर प्रकाश पड़ता है कि लोग दूसरों की सहायता क्यों करते

हैं?

i. **सामाजिक विनिमय सिद्धांत (Social Exchange Theory)**-इस सिद्धांत का प्रतिपादन थिबोट और केली ने किया है। सामाजिक व्यवहार, सामाजिक अर्थशास्त्र पर आधारित होता है। हम किसी की सहायता करके उससे सहायता, किसी को प्रेम करके उससे प्रेम पाना चाहते हैं ,हम किसी पर परोपकार करके उससे भी समय आने पर सहयोग एवं सहायता की आशा करते हैं (Foa and Foa 1975)। मायर्स (1988) के अनुसार ''सामाजिक विनिमय सिद्धन्त का अभिग्रह है कि मानवीय अन्तःक्रियाएं आदान प्रदान का वह रूप हैं जिनमें व्यक्ति पुरस्कार (लाभ) तो अधिक प्राप्त करना चाहता है परंतु नुकसान न्यूनतम उठाना चाहता है। (Social exchange theory assumes that human interactions are transactions that aim to maximize one's costs.) इससे स्पष्ट है कि व्यक्ति

अपने सामाजिक क्रियाकलापों में लागत न्यूनतम लगाना चाहता है। हानि न्यूनतम चाहता है, लाभ या पुरस्कार अधिक पाना चाहता है। इसे समाज का न्यूनाधिक सिद्धन्त (Minimax Principle) कहा जाता है। परोपकारिता का प्रदर्शन सदैव इसी आधार पर हो यह आवश्यक नहीं हैं। फिर भी इस मानसिकता का काफी प्रभाव पड़ता है। यदि रक्तदानकर्ता को लगता है कि रक्तदान करने से आर्थिक लाभ है, प्रशंसा प्राप्त होगी या प्रतिष्ठा बढेगी तो वे रक्तदान बड़ी उत्सुकता से करेंगे । हानि की दशा में रक्तदान पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। समाज में अनेक उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं कि लोगों ने अपने स्वार्थ की बात सोचे बगैर समाज सेवा की है।

ii. **सामाजिक मानक सिद्धन्त (Social Norm Theory)-** प्रत्येक समाज में कुछ न कुछ मानक प्रचलित होते हैं। व्यक्तियों को इन मानकों का अनुपालन करना पड़ता है । अनुपालन न करने पर उनकी आलोचना होती हैं। दण्ड का भागी होता है। मानक व्यक्ति को उचित व्यवहार करने के लिए प्रेरित करते हैं। परोपकारिता की दृष्टि से निम्नलिखित दो प्रकार के मानक अधिक महत्वपूर्ण हैं-

- पारस्परिक मानक (Reciprocity Norms) इसका आशय यह है कि परोपकारिता करने वाले यह सोचकर सहायता परक व्यवहार करते हैं कि जिनकी सहायता वह कर चुके हैं वे भी उनकी सहायता करेगें, न कि कष्ट देंगें। "(Mayers 1988)"Reciprocity norm refers to an expectation that people will help , not hurt , those who have helped them " (Myers 1988). गाउल्डन (1960) के अनुसार लोग उसे नुकसान नहीं पहुँचाना चाहते हैं जिनसे उन्हें नुकसान नहीं हुआ है। लोग उसकी सहायता करना चाहते हैं जिसने उसे अतीत में निराश नहीं किया है। उपकार के बदले उपकार से बड़ा कोई धर्म नहीं है यह मान्यता व्यक्ति को परोपकार करने के लिए प्रेरित करती रहती है। यदि सहायता परक व्यवहार अपेक्षाकृत अधिक लाभकारी या त्यागपूर्ण और अप्रत्याशित है तो उसका प्रभाव लोगो पर और अधिक पड़ता है (Morse et.al 1977)। इससे स्पष्ट है कि परोपकारी व्यवहार पारस्परिकता से काफी अधिक प्रोत्साहित होता है।
- सामाजिक उत्तरदायित्व का मानक (Social responsibility norm) सामाजीकरण के माध्यम से व्यक्ति में सामाजिक चेतना एवं उत्तरदायित्व की भावना विकसित होती है। उसे उन उत्तरदायित्वों का निर्वहन करना पड़ता है। यह मानक व्यक्ति को यह सिखाता है कि उनकी भी सहायता करनी चाहिए जिनके बदले में सहायता नही भी प्राप्त हो सकती है। मायर्स (1988) के अनुसार सामाजिक उत्तरदायित्व के मानक का आशय है कि लोग अपने आश्रितों की सहायता करेगें । उत्तरदायित्व की भावना के कारण ही कभी कभी लोग अपने दुश्मन की भी सहायता करते हैं। (Social responsibility norm is an expectation that people will help those dependent upon them" Myers1988)

iii. **सामाजिक जैविकी सिद्धांत (Social biology) -**सामाजिक जैविकी वह विज्ञान है जिसमे सामाजिक व्यवहारों के जैविक या अनुवांशिक आधारों का पता लगाने का प्रयास किया जाता है (Dawkins 1976, Campbell 1975 Barash 1979)। इसकी मान्यता विकासवादी परिकल्पना (Evolutationary hypothesis) पर आधारित है। समाज जैविक शास्त्रियों द्वारा इस व्यवहार को

निःस्वार्थ या आत्मबलिदानी व्यवहार (Self sacrificial) के नाम से पुकारा जाता है। परोपकारिता व्यवहार संबन्धी समाज जैविक सिद्धांत के मुख्य दो आधार हैं:-

a. **सगोत्र चयन (Kin Selection)-**आवश्कयता पड़ने पर व्यक्ति पहले अपने बच्चों की सहायता करता है। परिवार या पड़ोसी की सहायता बाद में करता है। अपरिचित व्यक्ति की सहायता सबसे अन्त में की जाती है। इसे संगोत्र चयन कहते हैं। सहायतापरक व्यवहार में इसी कारण पक्षपात पाया जाता है (Barash 1979,Ruston et.al 1984, Form and Nosow 1985) ऐसा करने के पीछे कारण यह होता है, कि लोग आपस में समान जीन्स के अस्तित्व को सुरक्षित बनाये रखने में अधिक रूचि रखतें हैं। विल्सन(1978) का मत है कि सगोत्र चयन वास्तविक अर्थों में परोपकारिता नहीं है। इससे तो सभ्यता एवं समाज की विधिवत रक्षा नहीं की जा सकती है। यह सद्भाव एवं सामजस्य को सीमित कर देगा।

b. **पारस्परिकता (Reciprocity)-**अनुवांशिक समानता या आपसी स्वार्थ के कारण लोग एक दूसरे की सहायता करते हैं। अर्थात परोपकारिता से स्वार्थ सिद्धि भी होती है। सहायता करने वाला बदले में सहायता पाने की आशा रखता है (Binhan 1980) । यदि सहायता पाने वाला सहायता करने वाले के बदले में सहायता नहीं करता है तो उसकी निन्दा होती है या वह दण्डित भी किया जा सकता है।पारस्परिकता प्रभाव छोटे समूह में काफी अधिक पाया जाता है (Barash1979,Amato 1983 Korte 1980)।यह दृष्टिकोण पूर्णतः तर्कसंगत नहीं लगता हैं। ऐसे अनेक लोग हैं जिन्होंने अपना सारा जीवन दूसरों की भलाई , समाज के कल्याण एवं गरीबों की सेवा में लगा दिया हैं , बदले में कुछ भी नही चाहा। महात्मागांधी , बुद्ध , राजाराम मोहन राय एवं मदर टरेसा आदि ऐसी ही विभूतियां हैं। इस प्रकार प्रचलित नैतिक एवं धार्मिक मांन्यताऐं समाज जैविक सिद्धांत के समक्ष चुनौती के रूप में हैं। अर्थात व्यक्ति अपनों और अपने स्वार्थ के लिये ही नही प्रेरित रहता उसमे परोपकार की भी विशेषता पायी जाती हैं (Campbell 1975 , Batson 1983)। राबर्ट ट्राइवर्स (1971) का विचार है कि यदि एक समाज के सभी सदस्यों का जीवन संकट मे हो और समाज के सदस्य संकट से मुक्ति पाने के लिऐ व्यक्तिगत प्रयास अलग अलग करे तो संकट से मुक्ति पाना कठिन हो जायेगा। दूसरी ओर यदि समाज के सभी सदस्य संकट से मुक्ति पाने के लिये पारस्परिक व्यवहार/सहयोग करे तो निश्चय ही सभी सदस्यों को संकट से मुक्ति मिल जायेगी। ट्राइवर्स ने बताया कि जब एक चिम्पेन्जी को भोजन मिलता है तो वह अपने अन्य साथी चिम्पैन्जियों को भोजन उपलब्ध कराने के लिए शोर मचा कर बुलाता है। इसी प्रकार की पारस्परिकता अन्य चिम्पैन्जियों में भी पायी जाती है। दूसरी बार जब समूह के किसी दूसरे चिम्पैन्जी को भोजन प्राप्त होता है तो वह भी शोर मचा कर अपने साथी चिम्पैन्जियों को भोजन के लिए बुलाता है। यह पारस्परिकता मानव समाज में भी पायी जाती है इसी पारस्परिकता के कारण व्यक्ति समाज में सहायतापरक और परोपकारी व्यवहार करता है।

प्रबलन या पुनर्वलन सिद्धांत (Reinforcement Theory)-यदि परोपकारिता या सहायता परक व्यवहार से व्यक्ति को आत्मसंतोष होता है, प्रशंसा प्राप्त होती है, या उसे भला आदमी समझा जाता है तो परोपकारी व्यवहार

में वृद्धि होती है। वहीं यदि सहायता करके कष्ट पाता है तो उसे हानि होती है। जोखिम की संभावना बढती है तो उसके परोपकारिता/सहायतापरक व्यवहार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति ऐसे व्यवहार से बचना चाहता है। बैन्डुरा (1973) के अनुसार:-प्रतिरूप/मॉडल के अच्छे व्यवहारों को पुरस्कृत करने पर दर्शक उसका अनुकरण करते हैं परंतु दण्ड मिलने पर अनुकरण नहीं करते हैं। इसी प्रकार लाभ की सम्भावना होने पर सहायता परक व्यवहार बढता है तथा हानि की सम्भावना होने पर इसमें कमी आती है। (Piliavin etc 1981) हास और पेज (Hauss and Page 1972) ने सड़क पर जा रहे कुछ व्यक्तियों से एक दुकान का पता पूछा कुछ व्यक्तियों ने सही पता बता दिया। इन व्यक्तियों की प्रशंसा की गयी। दूसरे व्यक्तियों ने बताने के दौरान ही बीच में टोककर कहा कि आप क्या बता रहे हैं, मेरी समझ में नहीं आ रहा है। रहने दीजिए मै किसी और से पूछ लूंगा। पता बताने वाले ऐसे व्यक्ति के लिए यह दण्ड की अवस्था थी। हास और पेज ने पाया कि जिनकी प्रशंसा की गई थी उनमें से 90 प्रतिशत प्रयोज्यों ने सहायतापरक परोपकारी व्यवहार किया। दूसरी ओर दण्ड की दशा में 40 प्रतिशत प्रयोज्यों ने ही सहायतापरक परोपकारी व्यवहार किया। इस प्रकार स्पष्ट हैं कि पुरस्कार एवं दण्ड के आधार पर व्यक्ति सहायतापरक और परोपकारी व्यवहार सीखते हैं साथ ही साथ पुरस्कार व दण्ड के आधार पर व्यक्ति सहायतापरक व परोपकारी व्यवहार भी करते हैं। यद्यपि परोपकारिता में वृद्धि के लिए प्रबलन उपयोगी है परन्तु यह विचार भी पूर्णतः तर्कसंगत नहीं है क्योंकि अनेकों लोग दूसरों की सहायता निःस्वार्थ भाव से करते हैं। वस्तुतः परोपकारिता एक तरह का निःस्वार्थ आत्म बलिदानी व्यवहार है। (Myers1988)

9.8 परोपकारिता व्यवहार में वृद्धि करना (Increasing Alturism)

परोपकारिता या सहायता परक व्यवहार समाज के लिए काफी उपयोगी है। अतः इसके प्रोत्साहित किये जाने की नितान्त आवश्यकता है। इस व्यवहार की वृद्धि से मानवता की रक्षा में मदद मिलेगी। परोपकारिता की बृद्धि के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं।

i. **अस्पष्टता कम करना (Reducing Ambiguity)-** परिस्थिति की अस्पष्टता परोपकारी व्यवहार उत्पन्न करने में बाधा डालती हैं। अतः परोपकारी व्यवहार उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि पीड़ित व्यक्ति की परिस्थिति को बिल्कुल ही स्पष्ट रखा जाये। उपस्थित दर्शक यह ठीक ढंग से समझ सकें कि पीड़ित व्यक्ति क्यों और कैसे इस आपातकालीन स्थिति में फंस गया है। इतनी स्पष्टता प्राप्त कर लेने से पीड़ित व्यक्ति के प्रति सहायतापरक व्यवहार की उन्मुखता में वृद्धि हो जाती है। पीड़ित व्यक्ति की परिस्थिति को समझ न पाने की दशा में उपस्थित लोग एक दूसरे का मुँह देखते रहते हैं। सहायता के लिए कोई आगे नहीं आता हैं। यद्यपि कुछ लोगों के पहल करने पर अन्य लोग भी सहायता के लिए आगे आ जाते हैं। (Latane and Nida 1981)

ii. **उत्तरदायित्व की भावना में वृद्धि करना (Increasing responsibility)** लोगों में मानवता, मानवीय संवेदना या उत्तरदायित्व की भावना बढ़ाकर परोपकारी व्यवहार को बढ़ाया जा सकता है। ऐसा भी पाया जाता है कि यदि पीड़ित व्यक्ति सज्जन है तो उसके प्रति दयाभाव शीघ्रता से उत्पन्न हो जाता है। (Berkowitz 1964)

iii. **परोपकारिता माडलिंग (Modeling Altruism)** सहायतापरक व्यवहारों की माडलिंग कराकर तथा उसके लिए कर्ता को पुरस्कृत करके परोपकारी व्यवहार में सरलता से बृद्धि की जा सकती है। कुछ लोगों को पीड़ित की सहायता करते हुए देखकर अन्य काफी लोग भी वैसा करने लगते हैं। इससे सहायतापरक व्यवहार में वृद्धि होती है (London 1970,Rosenhan 1970)। टेलीविज़न पर सहायता परक व्यवहार का प्रदर्शन करने पर दर्शकों पर इसका बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है (Hearold 1979, Ruston 1979)।

iv. **आत्म प्रेरणा (Self-Motivation)** यदि लोगों में किसी तरह सहायतापरक व्यवहार के लिए स्वयं की सोच या प्रेरणा पैदा हो जाये तो इससे सहायतापरक व्यवहार में वृद्धि होती है (Baston 1979) सामाजिक दबाव या वाह्य प्रलोभन की अपेक्षा आत्मप्रेरणा अधिक प्रभावशाली होती है (Piliavin etc 1982 Thomas et al.1981 Coleman 1985)। इसके लिए सामाजिक प्रशंसा भी लाभकारी है।

परोपकारिता अधिगम (Learning about Altruism) परोपकारिता में बाधक तत्व की जानकारी कर उसको समाप्त करके सहायतापरक व्यवहार को बढ़ाया जा सकता है (Beaman 1978) क्योंकि बाधक तत्वों के बारे में जानकारी हो जाने पर पीड़ित व्यक्ति के प्रति संवेदनशीलता एवं सहानुभूति बढ़ जाती है। प्रसामाजिक मूल्यों के साथ बच्चों का पालनपोषण (Raising children with prosocial values) - बच्चों में आन्तरिक नियंत्रण को ठीक ढंग से विकसित किया जाये तो उसमें सहायतापरक व्यवहार करने की क्षमता बढ़ जाती हैं। यह कार्य उन्हें एक उचित दुलार प्यार की स्थिति में रखकर पालन पोषण करने से ही सम्भव हैं। हाफमैन 1975 के अनुसार "ऐसे बच्चे जिनमें सहायतापरक व्यवहार करने की प्रवृत्ति होती है उनके माता पिता में से किसी एक में कम से कम ऐसे व्यवहार दिखाने की तत्परता अधिक दिखायी पड़ती है।

v. जिन बच्चों में सिर्फ सामाजिक नियम के प्रति अनुक्रिया करना सिखाया जाता है और जिन्हें ऐसे नियमों को तोड़ने के लिए दण्ड मिलता है, उनमें बाह्य उद्दीपनों या संकेतों से निर्देशित होने की उन्मुखता अधिक होती है। ऐसे बच्चों में प्रतिसामाजिक मूल्य तेजी से नहीं विकसित होते हैं और वे सहायतापरक व्यवहार दिखाने में हिचकते हैं।

vi. परोपकारिता की शिक्षा (Teaching Altruism) LVko (Staub 1975) ने कई ऐसे प्रयोग किये हैं कि जिनमें बच्चों को सहायतापरक व्यवहार करने के लिए सफलतापूर्वक सिखाया गया। कुछ बच्चों को अन्य बच्चों द्वारा अनुचित व्यवहार करने से रोकने के लिए प्रोत्साहित किया गया। ऐसा करते करते इनमें स्वयं परोपकारी व्यवहार करने की तीव्र उन्मुखता उत्पन्न हो गयी। इनके कुछ अन्य प्रयोग में पांचवे एवं छठे वर्ग के छात्रों को पहले और दूसरे वर्ग के छात्रों को परोपकारी व्यवहार सिखलाने का उपदेश देने को कहा गया। ऐसा कई दिनों तक करने के बाद देखा गया कि इनमें परोपकारी व्यवहार करने की उन्मुखता उन लोगों की अपेक्षा अधिक पायी गयी जिन्हें उपदेश देने का मौका नहीं दिया गया था।इससे स्पष्ट है कि परोपकारिता या सहायतापरक व्यवहार में विभिन्न प्रकार से वृद्धि भी की जा सकती है।

अभ्यास प्रश्न

1. बिना स्वार्थ दूसरों के कल्याण के प्रति चिन्तित रहना _____कहा जाता है।
2. सामाजोपयोगी व्यवहार में _____की प्रत्याशा हो सकती है।
3. न्यूनतम लागत से अधिक लाभ या पुरस्कार पाने वाले व्यवहार को सामाजिक व्यवहार का _____कहते है।
4. सभी परोपकारी व्यवहार प्रसामाजिक व्यवहार है परन्तु सभी प्रसामाजिक व्यवहार _____ नहीं हो सकते।
5. परोपकारिता के लिए _____प्रेरित करते हैं।
6. पारस्परिकता एवं सगोत्र चयन से प्रभावित होकर किया गया सहायतापरक व्यवहार _____के अन्तर्गत आता है।
7. सबसे पहले अपने परिवार के सदस्यों , उसके बाद पड़ोसियों और अन्त में अपरिचित व्यक्ति की सहायता _____सिद्धांत के अन्तर्गत आती है।
8. परोपकारिता की माडलिगं कराकर परोपकारी भावना में _____ की जा सकती है।
9. किसी पीड़ित की सहायता के लिए एक व्यक्ति के आगे आने पर दूसरे लोगों का सहायता के लिए आगे आना _____कहा जाता है।
10. सहायता की पुकार ,सामान्य अनुरोध से _____ती है।
11. सहायतापरक व्यवहार में दर्शक प्रभाव की खोज _____ने की है।
12. परोपकारी व्यवहार की व्याख्या के लिए सामाजिक विनिमय सिद्धांत का प्रतिपादन _____ने किया।

9.9 सारांश

- प्रसामाजिक व्यवहार वह व्यवहार है जिससें व्यवहार करने वाले को स्पष्ट लाभ नहीं होता है बल्कि उन्हें कुछ जोखिम या हानि भी उठानी पड़ती है। ऐसे व्यवहार का आधार आचरण या सामाजिक व्यवहार के नैतिक मानक होते हैं।
- प्रसामाजिक व्यवहार को प्रतिसामाजिक व्यवहार या समाजोपयोगी व्यवहार भी कहते हैं। सहायतापरक व्यवहार प्रसामाजिक व्यवहार की एक श्रेणी है।
- परोपकारी व्यवहार एक सहायतापरक व्यवहार है इसमें कोई स्वार्थ या लाभ की इच्छा नहीं रहती है। ऐसे व्यवहार आत्मचेतना तथा नैतिक मान्यताओं द्वारा प्रेरित होते हैं।
- परिस्थिति जन्य निर्धारक, सामाजिक निर्धारक तथा व्यक्तिपरक आदि प्रसामाजिक व्यवहार सहायतापरक एवं परोपकारी व्यवहार के प्रमुख निर्धारक तत्व हैं।

- परोपकारी व्यवहार व्याख्या करने के लिए कई तरह के सिद्धन्तों का प्रतिपादन किया गया है। सामाजिक विनिमय सिद्धांत, सामाजिक मानक सिद्धांत, सामाजिक जैविकीय सिद्धांत, तथा पुनर्वलन सिद्धांत प्रमुख हैं।
- व्यक्ति अपने सामाजिक क्रियाकलापों में लागत न्यूनतम लगाना चाहता है। नुकसान, न्यूनतम उठाना चाहता है जबकि लाभ या पुरस्कार अधिकतम् पाना चाहता है। इसे ही सामाजिक व्यवहार का न्यूनाधिक सिद्धन्त कहते हैं।
- सामाजिक विनिमय सिद्धांत के अनुसार परोपकारिता व्यवहार प्रायः हानि लाभ के आकलन द्वारा निर्धारित होता है।
- सामाजिक मानक सिद्धांत के अनुसार मानक व्यक्ति को उचित व्यवहार करने के लिए प्रेरित करते हैं। यह मानक पारस्परिक व्यवहार के लिए भी हो सकते हैं। और सामाजिक उत्तरदायित्व से सम्बन्धित भी हो सकते हैं।
- समाज जैविकी मान्यताएं विकासवादी परिकल्पना पर आधारित हैं। समाज जैविकीय शास्त्रियों द्वारा इस व्यवहार को निःस्वार्थ या आत्मबलिदानी व्यवहार के नाम से पुकारा जाता है। आवश्यकता पड़ने पर व्यक्ति पहले अपने बच्चों की सहायता करता है, बाद में परिवार तथा पड़ोसी की सहायता करता है अपरिचित व्यक्ति की सहायता सबसे अन्त में की जाती है।
- परोपकारी या सहायतापरक व्यवहार प्रवलन या पुरंस्कार द्वारा भी प्रभावित होता है। यदि परोपकारिता व्यवहार करने से व्यक्ति को आत्मसंतोष , प्रशंसा प्राप्त होती है या उसे भला आदमी समझा जाता है तो परोपकारिता में बृद्धि होती है। यदि वह सहायता करके कष्ट पाता है, हानि होती है, जोखिम उठाता है तो उसके सहायतापरक व्यवहार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- प्रतिसामाजिक मूल्यों के साथ बच्चों का पालनपोषण, परिस्थिति स्पष्टता को कम करके,उत्तरदायित्व की भावना को बढ़ावा देकर आत्मप्रेरण,परोपकारिता माडलिंग, परोपकारिता अधिगम या परोपकारिता की शिक्षा देकर परोपकारी व्यवहार में बृद्धि की जा सकती है।

9.10 शब्दावली

1. **प्रतिसामाजिक** -प्रतिसामाजिक या समाजोपयोगी, समाज के लिए उपयोगी।
2. **प्रजाति -** वर्ग एक जाति या धर्म के लोग।
3. **अपराधबोध -** किसी व्यक्ति की भावना जिससे वह पीड़ित व्यक्ति के कष्ट का कारण स्वयं को मानता हो, अपराध बोध कही जाती है।
4. **समाज जैविकी -** जैविक या अनुवांशिक आधारों पर सामाजिक व्यवहार।
5. **सगोत्र चयन -** समान जीन्स के अस्तित्व सुरक्षित रखना।
6. **आत्म प्रेरणा -** स्वयं की सोच या प्रेरणा।
7. **अधिगम -** सीखना।

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. परोपकारिता
2. प्रतिफल
3. न्यूनाधिक सिद्धांत
4. परोपकारी व्यवहार
5. सामाजिक मानक
6. समाज जैविकी व्यवहार
7. संगोत्र
8. वृद्धि
9. दर्शन प्रभाव
10. अधिक प्रभाव
11. लाताने तथा डार्ले (1970)
12. थिवोट और केली (1959)

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह आर. एन. -2007-2008 आधुनिक समाज मनोविज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा- 7
2. सिंह आर. एन. (2005) आधुनिक समाज मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मंन्दिर आगरा -2
3. सिंह ए.के - (2002) समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा मोती लाल बनारसी दास दिल्ली
4. सिंह ए.के (2000) उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान मोती लाल बनारसी दास दिल्ली
5. श्रीवास्तव डी. एन.- (दसवां संस्करण) समाजिक मनोविज्ञान साहित्य प्रकाशन आगरा
6. श्रीवास्तव डी. एन एवं अन्य .-(2000-2001) आधुनिक समाज मनोविज्ञान एच. पी . भार्गव बुक हाउस आगरा।
7. भटनागर ए.बी.एवं अन्य -डेवलपमेन्ट आफ लर्नर एण्ड टीचिंग लर्निगं प्रोसेस विनय राखेजा C/O लाल बुक डिपो मेरठ
8. रोवर्ट , ए बैरन एवं डान बैरन (नौवा संस्करण) पीयर्सन एडूकेशन (सिंगापुर) प्रा. लि. इण्डियन ब्रांच 482 एम. आइ्र पटपरगंज दिल्ली 110092 इंडिया।
9. त्रिपाठी आर.बी. एवं सिंह आर. एन. (2002) व्यक्तित्व का मनोविज्ञान
10. भार्गव ,सुमित गंगा सरन एण्ड ग्रेण्ड सन्स सी. के. 37/44 बी बॉसफाटक वाराणसी
11. मुहम्मद सुलेमान (2006) सामान्य मनोविज्ञान, मूल प्रक्रियाऐं एवं संज्ञानात्मक प्रक्रियाये। मोती लाल बनारसी दास दिल्ली
12. अग्रवाल, विमल (2010-11)मनोविज्ञान एस.बी.पी.डी. पब्लिकेशन आगरा।

9.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्रसामाजिक और परोपकारिता व्यवहार का अर्थ स्पष्ट कीजिए ?
2. परोपकारिता व्यवहार के सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।
3. परोपकारिता से आप क्या समझते हैं ? इसके निर्धारक तत्वों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए ?
4. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-
    i. परोपकारिता एवं विनिमय
    ii. परोपकारिता एवं प्रबलन
    iii. परोपकारिता एवं माडलिंग
    iv. दर्शक प्रभाव
    v. अपराध बोध

इकाई 10 - आक्रामकता तथा हिंसा, आक्रामकता के सिद्धांत हिंसा के कारण

(Aggression and Violence, Theories of Aggression, Causes of Violence)

इकाई संरचना-

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 आक्रामकता तथा हिंसा का अर्थ

10.4 आक्रामकता एवं हिंसा का स्वरूप या विशेषता

10.5 आक्रामकता के सिद्धान्त

10.5.1.1 मूल प्रवृति का सिद्धांत

10.5.1.2 कुण्ठा आक्रामकता का सिद्धांत

10.5.1.3 सामाजिक अधिगम का सिद्धांत

10.6 आक्रामकता एवं हिंसा के कारण /कारक

10.7 सारांश

10.8 शब्दावली

10.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

10.11 निबन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

वैज्ञानिक व तकनीकी विकास के कारण सामाजिक परिवर्तन तीव्र गति से हो रहे हैं । इस परिवर्तन व विकास के कारण सामाजिक जीवन और व्यवहार बदल रहे हैं। आदमी का जीवन बड़ा व्यस्त हो गया है। उसकी इच्छाऐं बढ रही हैं। असीमित इच्छाओं के कारण जीवन में अशान्ति भी बढ रही है। जीवन में अलगाव आक्रोश (Hostility) हिंसा (Violence) हत्या (Murder) आतंकवाद (Terrorism) और युद्ध (Battle) संम्बन्धी व्यवहारों का प्रदर्शन काफी बढता हुआ दिखाई दे रहा है। इन व्यवहारों में 'आक्रामकता' दिखाई देती है। आक्रामकता एवं हिंसा का व्यवहार मनुष्य तथा पशुओं दोनों में पाया जाता है। आक्रामकता का व्यवहार वह व्यवहार है जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों को चोट पहुँचाना,पीड़ा देना या दण्ड देना चाहता है।

सभी व्यक्तियों में आक्रामकता कुछ न कुछ मात्रा में पायी जाती है। आक्रामकता की अभिव्यक्ति में जब हथियारों का उपयोग किया जाता है तो आक्रामक व्यवहार हिंसा और विध्वंस का रूप धारण कर लेता है।

आक्रामकता का यह रूप मानव जाति के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। विश्व का कोई भी देश इससे अछूता नहीं है। आज आक्रामकता एवं हिंसा सार्वभौमिक समस्या बन गयी है। इसके अध्ययन में समाज मनोवैज्ञानिकों ने विशेष अभिरूचि दिखायी है ताकि इन अध्ययनों से इन विध्वंसक व्यवहारों को नियंत्रित करने हेतु उपयोगी उपाय किये जा सकें।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

1. आक्रामकता का अर्थ जान सकेंगे।
2. आक्रामकता एवं हिंसा को समझ सकेंगे।
3. आक्रामकता की प्रकृति से अवगत हो सकेंगे।
4. आक्रामकता के सिद्धान्त से परिचित हो सकेंगे।
5. हिंसा के कारणों को जान सकें।
6. आक्रामकता नियंत्रण की जानकारी प्राप्त कर सकें।

10.3 आक्रामकता एवं हिंसा का अर्थ एवं स्वरूप

आक्रामकता-

- **मिशेल (1981) के अनुसार** "किसी को क्षति पहुँचाने के लिए प्रेरित व्यवहार को आक्रामकता कहते हैं।'' (उससे नुकसान हो सकता है या नहीं भी हो सकता है। (Aggression is behavior motivated by the intent to hurt (which may or maynot inflict harm)- Michel,1981)
- **हिलगार्ड (1987) इत्यादि के अनुसार,** "आक्रामकता वह व्यवहार है जिसका उद्देश्य किसी व्यक्ति को शारीरिक या मौखिक रूप से चोट पहुँचाना या सम्पत्ति को नष्ट करना होता है"। (Aggression is the behavior that is intended to injure another person (Physically or verbally) or to destroy property" Hillgard etc.)
- **मार्यस (1988) के अनुसार,** "आक्रामकता ऐसा शारीरिक या मौखिक व्यवहार है जो किसी को चोट पहुँचाने के उद्देश्य से किया जाता है"। (Aggression is defined as thephysical or verbal behavior that is intended to hurt same oneMayer's)

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि आक्रामकता एक ऐसा व्यवहार है जो जानबूझ कर दूसरों को या उसकी सम्पत्ति को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया जाता हैं। अतः बिना उद्देश्य की परख किये किसी व्यवहार को आक्रामक नहीं कहा जा सकता हैं।

एक दन्त चिकित्सक द्वारा सड़े दाँत को निकालना आक्रामक व्यवहार नहीं कहा जा सकता है। क्योंकि उसका उद्देश्य नुकसान पहुचाना नहीं हैं दूसरी तरफ एक हत्यारे द्वारा मंत्री पर गोली चलाने पर मंत्री के बच जाने पर भी यह आक्रामक व्यवहार कहलायेगा, क्योंकि हत्यारे के उक्त व्यवहार का उद्देश्य क्षति पहुँचाना था।आक्रामक

व्यवहार प्रकट भी हो सकता है या अप्रकट भी हो सकता है। मंत्री पर हत्या की दृष्टि से गोली चलाना यह प्रकट आक्रामक व्यवहार है। एक राजनैतिक नेता अपने विरोधी नेता के प्रति तटस्थता का भाव रखते हुए भी इस ढंग से प्रचार कर सकता है जिससे वह अपने विरोधी नेता को हरा कर चुनाव जीत सके। यहाँ उद्देश्य छिपा हुआ है। अतः इसे साधानात्मक आक्रामकता (Instrumental aggression) कहा जाता है । चूँकि कि आक्रामकता से पीड़ित व्यक्ति बचाव का भी प्रयास करता है (Baron and byrne 1987), इसका अर्थ यह हुआ कि यदि पीड़ित उस आक्रामक व्यवहार से बचने की कोशिश नही करता है तो उसे आक्रामक व्यवहार नहीं कहा जायेगा। यह एक अवांछित व्यवहार है। समाज इसे अनुचित मानता है। आक्रामकता का प्रदर्शन शारीरिक रूप में जैसे- मार पीट लूटपाट एवं अन्य प्रकार की हिंसा या मौखिक रूप से भी होता है जैसे बातों के माध्यम से किसी को कष्ट पहुँचाना। आक्रामक व्यवहार हमेशा जीवित प्राणी के ही प्रति प्रदर्षित होता है। यदि एक व्यक्ति घर की चीजों को फेंक कर अपने क्रोध को प्रदर्षित कर रहा है तो इसका व्यवहार तब तक आक्रामक नहीं कहलायेगा जब तक कि किसी जीवित प्राणी को हानि या चोट न पहुँचे।

हिंसा-आक्रामक व्यवहार और हिंसा संबंधी व्यवहार परस्पर एक दूसरे से संबन्धित है। हिंसा को परिभाषित करते हुए श्रीवास्तव ने लिखा है कि, हिंसा में व्यक्ति शारीरिक बल या पाश्विक बल का प्रयोग करता है जिससे किसी व्यक्ति को चोट या सम्पत्ति का नुकसान हो। हिंसा के इस अर्थ के आधार पर कहा जा सकता है कि हिंसा एक प्रकार की प्रचण्ड आक्रामकता है। हर प्रकार का आक्रामक व्यवहार हिंसात्मक नही होता है। केवल प्रचण्ड हमला या आक्रामकता को ही हिंसात्मक व्यवहार के अतर्गत रखा जाता है ।व्यक्ति में आक्रामक व्यवहार पहले उत्पन्न होता हैं जब आक्रामक व्यवहार प्रचण्ड आक्रामकता के रूप में बदलता हैं तब व्यक्ति पाश्विक बल के साथ आक्रमण करता है। इस प्रकार का प्रचण्ड आक्रमणकारी व्यवहार हिंसा कहलाता है। समाज में आजकल हिंसात्मक व्यवहार बढ़ रहा है इसी से अनेक देशों में आतंकवादी हमले हो रहे हैं। भारत में 2002 में संसद पर भी आतंकवादी हमला हो चुका है । इसके अतिरिक्त अन्य आतंकवादी हमलों की मार भी झेलनी पड़ी है। अमेरिका के विश्व व्यापार केन्द्र और सुरक्षा बिल्डिगं पेंटागन पर हुऐ आतंकवादी हिंसात्मक हमले विश्व प्रसिद्ध हैं।

10.4 आक्रामकता एवं हिंसा का स्वरूप एवं विशेषताएं

i. **हानिकारक व्यवहार (Harmful Behaviour)-**आक्रामकता हानिकारक व्यवहार है। इसका उद्देश्य किसी को नुकसान पहुँचाना होता है। क्षति शारीरिक रूप में या मौखिक भी हो सकती है जैसे गाली देना या अपमानित करना। इसमें सम्पत्ति को भी क्षति पहुँचायी जा सकती है।

ii. **सार्वभौमिक गोचर (Universal Phenomena)-**हिंसा तथा आक्रामकता आज हर देश में समस्या बन चुकी है। किसी न किसी मात्रा में हर समाज में आक्रामकता तथा हिंसा का ताण्डव देखने को मिल रहा है।

iii. **सक्रियता एवं निष्क्रियता (Active or Inactive)-**आक्रामकता का प्रदर्शन सक्रिय या निष्क्रिय रूप में भी हो सकता है। किसी को सीधे कष्ट पहुँचाना सक्रिय आक्रामकता है। जब कि किसी के मार्ग में बाधा पैदा करना निष्क्रिय आक्रामकता है ।

iv. **उद्देश्यपूर्ण व्यवहार (Intentional behavior)-**आक्रामकता उद्देश्यपूर्ण होती है। व्यक्ति ऐसा व्यवहार जानबूझ कर करता है ताकि दूसरा व्यक्ति पीड़ित हो या उसको नुकसान पहुँचे।

v. **पीड़ित व्यक्ति द्वारा बचाव (Defence by victim)-**चूंकि कि आक्रामकता तथा हिंसा से लोगों को नुकसान पहुँचता हैं, वे पीड़ा अनुभव करते हैं। अतः ऐसे व्यवहारों से बचाव का प्रयास करते हैं। जैसे हिंसा का जवाब हिंसा से देना या हिंसात्मक परिस्थिति से हट ना।

vi. **वैयक्तिक भिन्नताएं (Individual Differences)-**आक्रामकता की प्रवृत्ति सभी में पाई जाती है। यह सभी में समान नहीं होती है। किसी में अधिक किसी में कम पायी जाती है।

vii. **आक्रामकता के प्रकार (Types of Aggression)-**विद्वेषी आक्रामकता या प्रकट आक्रामकताः इस प्रकार की आक्रामकता क्रोध से उत्पन्न होती है। इसके अन्तर्गत क्रोध के प्रभाव में आकर किसी प्राणी या व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से मारना पीटना या अन्य प्रकार का नुकसान पहुँचाना आता है।
साधनात्मक आक्रामकता (**Instrumental Aggression**) या परोक्ष आक्रामकता (**Implicit Aggression**) छिप छिप कर किसी को हानि पहुँचाने को साधनात्मक आक्रामकता कहते हैं। यह एक तरह का शीत युद्ध है। दो देशों के बीच युद्ध साधनात्मक आक्रामकता है।

10.5 आक्रामकता के सिद्धांत

आक्रामक व्यवहार की व्याख्या अनेक सिद्धांतों के आधार पर की गई है। आक्रामक व्यवहार के तीन आधार है:-

i. जैविक आधार
ii. मनोवैज्ञानिक आधार
iii. वातावरण जनित आधार

मनोवैज्ञानिक आधार या वातावरण जनित आधार पर आक्रामकता सिद्धांत का वर्णन निम्न प्रकार प्रस्तुत है:-

10.5.1 मूल प्रवृत्ति का सिद्धांत (Instinct Theory)

कुछ मनोवैज्ञानिक तथा विचारक आक्रामक व्यवहार को जन्मजात मानते हैं। ऐसे विद्वानों का मत है कि प्राणियों में लड़ाई, संघर्ष, मार-पीट या हत्या आदि करने की जन्मजात मूलप्रवृत्ति पाई जाती है। मायर्स (1988) के अनुसार मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार जन्मजात अनार्जित होता है तथा किसी प्रजाति के सभी सदस्यों में प्रदर्शित होता है।'' (Instinctive behavior is innate unlearned behavior pattern exhibited by all member of species –(Myers 1988)) आक्रामक व्यवहार को जन्मजात मानने वालों में फ्रायड तथा लारेन्ज का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है -

i. फ्रायड का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत (Freud's Psychanalytic Theory)
फ्रायड ने अपने सिद्धांत में जीवन व मृत्यु दो मूल प्रवृत्तियों की कल्पना की है। 'जीवन प्रवृत्ति' रचनात्मक तथा उपयोगी कार्यों का संचालन करती है। मृत्यु ,प्रवृत्ति आक्रामकता, हिंसा एवं विध्वंसात्मक कार्यों का संचालन करती है। मृत्यु प्रवृत्ति' दूसरों को ही आक्रामकता या हिंसा का कार्य करने के लिए प्रेरित नही करती बल्कि व्यक्ति विशेष को अपने ही प्रति विध्वंसक कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। व्यक्ति द्वारा आत्महत्या का प्रयास इसी मूल प्रवृत्ति का परिणाम है। विध्वंसक कार्यों पर जीवन मूलप्रवृत्ति द्वारा नियंत्रण का भी प्रयास किया जाता है।

ii. **लॉरेन्ज का सिद्धांत (Lorenz's Theory)** इसे आचारशास्त्रीय सिद्धांत भी कहा जाता हैं।

लारेन्ज भी आक्रामकता को जन्मजात व्यवहार मानते हैं। प्राणी आक्रामक व्यवहारों का प्रयोग अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए करते हैं। बलशाली पशु कमजोर पशुओं को मार कर भगा देते हैं। पशुओं की आक्रामकता के आधार पर मानव आक्रामकता को भी समझने का प्रयास किया है । इनका मत है कि यदि यह खर्च नहीं होती हैं तो इसकी मात्रा बढ़ती जाती है। यह प्रक्रिया तब तक जारी रहती है जब तक उसका प्रदर्शन या विस्फोट नहीं हो जाता है। या जब तक उसे निर्मुक्त (Release) मद्ध करने के लिए कोई उचित कारण या परिस्थिति नहीं मिल जाती है। इस प्रकार मूल प्रवृत्ति सिद्धांत के समर्थक आक्रामकता को प्राणी या व्यक्ति की जन्मजात विशेषता मानते हैं। इसका परिवेशीय या वातावरणीय अनुभवों से सम्बन्ध नहीं है।

मूल प्रवृत्ति सिद्धांत की आलोचना

आधुनिक शोधकर्ताओं के अनुसार आक्रामकता को जन्मजात मानना अवैज्ञानिक है। यदि यह जन्मजात होती तो सभी प्राणी में पायी जाती। फिलिपीन्स की टासडे (Tasaday) जनजाति पूर्णतः शान्त हेाती है जबकि दक्षिण अफ्रिका की यानोमैमो (Yanomamo) जनजाति बहुत आक्रामक होती है (Nance 1975 Eibl –Eibesfeldt 1979)। और भी ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो आक्रामकता को वातावरणीय प्रभाव से प्रभावित मानते हैं (Hornstein1976) यदि आक्रामकता जन्मजात होती तो इसमें परिवर्तन या परिमार्जन सम्भव नहीं होता जबकि अनुकूल परिस्थितियां पैदा करके आक्रामकता में परिमार्जन किया जा सकता है (Dunlop1919 Watson 1919)। मूल प्रवृत्तियों की संख्या स्वयं इसके समर्थक भी निश्चित नहीं कर पाये हैं। (Barash 1979) कूओ (Kuo 1930) ने चूहे और बिल्ली के बच्चां को एक साथ पाल कर, यह देखा कि बिल्ली के बच्चे बड़े होने पर चूहों के बच्चों को कम मारते हैं। इससे भी आक्रामकता के जन्मजात होने का खण्डन होता है। बिल्ली चूहों की जन्मजात दुश्मन होती है कूओं ने इसे असत्य सिद्ध कर दिया। पुरस्कार या दण्ड द्वारा आक्रामकता को दमित किया जा सकता है, अर्थात इस पर अधिगम आदि का प्रभाव पड़ता है। इससे भी इसके जन्मजात होने का खण्डन होता है। (Bandura 1973)|

10.5.2 कुण्ठा-आक्रामकता सिद्धांत (Frustration Aggression Theory)

डोलार्ड आदि के अनुसार आक्रामकता सदैव किसी कुण्ठा का परिणाम होती है और कुण्ठा सदैव आक्रामकता को जन्म देती है। (Aggression is always a consequence of frustration and "Frustration always leads to some form of aggression.)

यहां पर कुण्ठा का तात्पर्य लक्ष्योन्मुख व्यवहार में बाधा या रूकावट पैदा करने से है। व्यक्ति तथा लक्ष्य के बीच बाधा उत्पन्न होने से व्यक्ति में निराशा उत्पन्न होती है। यही कुण्ठा की दशा है। कुण्ठा से ग्रस्त व्यक्ति आक्रामक व्यवहार करता है। लक्ष्य जितना ही प्रबल होगा बाधा उत्पन्न होने पर कुण्ठा की तीव्रता उतनी ही प्रबल होगी। कुण्ठा की पुनरावृत्ति होने पर आक्रामकता अन्तर्नोद मे वृद्धि होने लगती है। स्पष्ट है कि इस सिद्धांत में मूलपवृत्ति सिद्धांत के विपरीत, आक्रामकता की उत्पत्ति तथा उसमें वृद्धि के लिए कुण्ठा पैदा करने वाली दशाओं को उत्तरदायी माना गया है। इस सिद्धांत की यह भी परिकल्पना है कि आक्रामकता का सीधा प्रभाव कुण्ठा स्रोत पर पड़ता है। स्रोत के उपस्थित न होने पर आक्रामकता का विस्थापन हो जाता है। जैसे:- कोई अधिकारी अपने निचले स्तर के कर्मचारी को भला बुरा कहता है परंतु पूरा गुस्सा नहीं उतार पाता है अतः वह घर आकर अपनी

पत्नी पर झल्लाता है, पत्नी अपना गुस्सा बच्चों पर उतारती है। बच्चा क्रोध में अपने कुत्ते को मारता है, तब तक डाकिया आता है, क्रोधित कुत्ता उसे ही काट लेता है। इससे स्पष्ट है कि यदि कुण्ठा के कारण या स्रोत पर आक्रामकता का प्रदर्शन करना संभव नहीं हो पाता है तो व्यक्ति अपना गुस्सा किसी अन्य व्यक्ति या वस्तु पर उतार सकता है।

कुण्ठा आक्रामकता सिद्धांत का संशोधन (**Revision of Frustration Aggression Theory**) इसमें संशोधित रूप के अनुसार कुण्ठा की दशा में कभी कभी आक्रामकता बढती है, कभी कभी ऐसा नहीं भी होता है। यदि कुण्ठा के बारे में व्यक्ति की धारणा है कि दूसरे पक्ष ने जानबूझ कर ऐसा नहीं किया तो आक्रामकता में वृद्धि नहीं होती है। कुण्ठा आक्रामकता सिद्धांत में कुण्ठा और आक्रामकता के संबन्ध को आवश्यकता से अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। जैसे अमुक व्यक्ति ने जैसा व्यवहार किया वैसा न किया होता, तो आक्रामकता बढ जाती , क्योंकि यह सोच लेता है कि अमुक व्यक्ति ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया। इसी प्रकार आक्रामकता से संबन्धित वस्तु, संकेत या व्यक्ति की उपस्थिति में आक्रामकता बढ जाती है। जैसे किसी क्रोधित व्यक्ति के सामने कोई औजार (हथियार) पड़ जाये तो उसका गुस्सा और भी बढ़ जाता है। अतः कुण्ठा आक्रामकता सिद्धांत का परिमार्जित रूप अपेक्षाकृत अधिक उचित है।

कुण्ठा आक्रामकता सिद्धांत की आलोचना **(Criticism of Frustration Aggression Theory)** कुण्ठा आक्रामकता परिकल्पना काफी प्रासंगिक लगती हैं फिर भी इसमें कुछ दोष पाये जाते हैं ।

a. यह आवश्यक नहीं है कि कुण्ठा की दशा में सदैव आक्रामकता का प्रदर्शन ही होगा (Baron 1977 Zillman 1979) , कभी कभी ऐसा नहीं भी होता है।
b. कुण्ठा आक्रामकता का एक प्रमुख कारण है , परन्तु एक मात्र कारण नहीं है (Bass 1961)
c. हर कुण्ठा आक्रामकता उत्पन्न नहीं करती है , परंतु आक्रामकता से संबन्धित वस्तु ,संकेत या व्यक्ति मौके पर उपस्थित है तो आक्रामकता बढ जाती है (Berkowitz 1968,1981)
d. कुण्ठा आक्रामकता सिद्धांत अपने मूल रूप की अपेक्षा परिमार्जित रूप में अधिक प्रासंगिक पाया गया है। (Myers1988)

10.5.3 सामाजिक अधिगम सिद्धांत (Social Learning Theory)

अनेक आधुनिक विचारकों का मत है कि आक्रामक व्यवहार सामाजिक अधिगम एवं अनुभवों का परिणाम है। ऐसे विद्वानों में वैण्डुरा एवं वाल्टर्स आदि का नाम प्रमुख है। इनके अनुसार बच्चे या वयस्क दूसरों के द्वारा किये जाने वाले आक्रामक व्यवहार को देखकर वैसा ही करना सीखते हैं। यदि वे देखते हैं कि आक्रामक व्यवहार करने वाला पुरस्कार पा रहा है या प्रशंसित हो रहा है तो आक्रामक व्यवहार का अनुकरण सुगमता से कर लिया जाता है। दण्ड की दशा में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पशुओं पर किये गये प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि उन्हें प्रशिक्षित करके अधिक से अधिक आक्रामक बनाया जा सकता हैं। किन्तु निराशा की तीव्रता बढ जाने से उनमें सुस्त व दब्बू हो जाने की सम्भावना बढती है। बच्चे भी यदि समझते हैं कि आक्रामक व्यवहार द्वारा लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता हैं तो वे आक्रामकता का प्रदर्शन अधिक करने लगते हैं इसे प्रेक्षणात्मक अधिगम कहते हैं। मॉडल की आक्रामकता को देखने से बच्चों का संकोच कम होगया। आक्रामकता की प्रवृत्ति बढ़ गई। बच्चों में आक्रामक

व्यवहार विकसित करने में परिवारिक स्रोत एवं सामाजिक परिवेश प्रमुख भूमिका निभाते हैं। परिवार में आक्रामकता प्रशंसित होने पर बच्चों में आक्रामकता आती है। बच्चों को दण्डित करने पर भी आक्रामकता बढ़ती है। ये आगे चल कर आक्रामकता द्वारा दूसरों को नियंत्रित तथा अनुशासित करना चाहते हैं तथा कहा भी जाता है कि आक्रामकता, आक्रामकता को ही जन्म देती है। समाज में किशोरों के गैंग के आक्रामक व्यवहार को देखते देखते उनसे कम उम्र वाले बच्चों में भी आक्रामकता बढ़ जाती है। सामाजिक परिवेश में जन संचार के माध्यम भी आते हैं। धारावाहिकों मे मारधाड़ तथा हिंसक घटनाएं बच्चों में आक्रामकता बढ़ाने में विशेष भूमिका निभा रही हैं। इन माध्यमों द्वारा आक्रामकता प्रेक्षण का बच्चों को प्रायः अवसर मिल रहा है। संक्षेप में सामाजिक अधिगम सिद्धांत आक्रामक व्यवहार को सीखा हुआ या अर्जित व्यवहार मानता है यदि कोई बालक या व्यक्ति किसी मॉडल व्यक्ति को आक्रामक व्यवहार करके पुरस्कार, प्रशंसा या लक्ष्य प्राप्त करते हुऐ देखता है तो वह भी आक्रामकताप्रदर्शित करके अपना लक्ष्य प्राप्त करना चाहेगा।

सामाजिक अधिगम सिद्धांत की आलोचना:-

a. इसमें सामाजिक अधिगम को ही आक्रामकता के लिए उत्तरदायी माना गया है। जैविक कारकों की अनदेखी की गयी है , जबकि अनेक अध्ययनों से जैविक कारकों से भी आक्रामकता के संबन्धों की पुष्टि होती है। जैसे मस्तिष्क के कुछ भागों को उद्दीप्त करने पर व्यक्ति में क्रोध बढ़ जाता है (Mayer 1976)। इसी प्रकार रक्त में शर्करा का स्तर कम होने पर भी आक्रामक व्यवहार बढ़ जाता है।
b. आक्रामकता का प्रेक्षण करने से सभी प्रयोज्य बच्चे आक्रामकता का प्रदर्शन करेंगे , यह आवश्यक नहीं हैं। कुछ बच्चे ऐसा नहीं करते हैं।
c. यह तर्क कि आक्रामकता, आक्रामकता को जन्म देती है पूर्णतः सत्य नही है। ऐसा देखा गया है कि दण्ड अधिक कठोर देने पर व्यक्ति दब्बू हो जाता है। (Ginsberg and Allen 1942)
d. आक्रामक व्यवहार सीखने के कारण की अपेक्षा, आक्रामकता सीखने की प्रक्रिया की व्याख्या अधिक अच्छे ढंग से होती है।

10.6 आक्रामकता एवं हिंसा के कारण या कारक

आक्रामकता सिद्धांतों के विवेचन से स्पष्ट है कि आक्रामकता अनेक कारकों से प्रभावित होती है। आक्रामकता संबन्धी व्यवहार का घटित होना इसके निर्धारकों को जटिल अन्तः क्रियात्मक प्रभावों पर निर्भर करता है।

i. **विकर्षणात्मक घटनाऐं (Aversive Events)**- पीड़ा, तापमान या कोलाहल स्वयं एक ऐसी घटनाएं है जो आक्रामकता एवं हिंसा को भड़काने में योगदान करतीं हैं।पीड़ा बढने के साथ साथ हिंसक व्यवहार भी बढ़ जाता हैं (Azrim, 1967) चूहों को विद्युत आघात देने से वे हिंसक व्यवहार करने लगते हैं। वह अपनी प्रजाति सहित अन्य प्रजाति के चूहों एवं गेंद पर आक्रमण करते पाये गये। इस पीड़ा से यदि पलायन करने का अवसर मिले तो वे भाग भी सकते हैं। पीड़ा मनुष्य में भी आक्रामकता उकसाने का कार्य करती है। यह पीड़ा मानसिक हो या शारीरिक इससे आक्रामकता की संभावना बढती है।
ii. **तापमान एवं कोलाहल** -तापमान एवं कोलाहल आक्रामकता के प्रमुख कारण हैं। उच्च तापमान, तीव्र कोलाहल, वायु प्रदूषण एवं धूम्रपान की स्थिति में आक्रामकता बढ़ जाती है। तीव्र गर्मी में व्यक्ति के

आक्रामकता के लक्षण और भी बढ़ जाते हैं (Griffitt 1970, Griffitt and Veitch 1971, Bell 1980)। गर्मी के दिनों में शहरों में दंगोंए हत्याओं एव लूटपाट की घटनाओं में काफी वृद्धि हो जाती है (Carlsmith and Anderson 1979, Cotton 1981, Fray 1985)। सामान्यतः उच्च तापमान तथा कोलाहल की दशा में चिड़चिड़ापन तथा आक्रामकता बढ़ जाती है। किसी किसी प्रयोग में सहयोगी प्रयोज्य यह मन बना लेते हैं कि जल्दी जल्दी कार्य समाप्त करके गर्मी से छुटकारा पा लेना है, तो वह आक्रामक व्यवहार में नहीं उलझते हैं ।(Baron 1977)

iii. **आक्रमण-**आक्रमण से प्रतिशोधी आक्रमण उत्पन्न होता है। यही कारण है कि जब एक देश दूसरे पर आक्रमण करता है तो दूसरा भी उस पर बदले में आक्रमण करता है।

iv. **उदोलन-**उत्तेजन स्तर व्यक्ति में आक्रामकता उत्पन्न करता है। अध्ययनों से पता चला है कि उत्तेजना के विभिन्न स्रोत जिनका आक्रामकता से समान्यतः केाई संबंध नहीं होता है, विशेष परिस्थितियों में आक्रामकता उत्पन्न करते हैं। स्केटर एवं सिंगर (1962) ने अपने अध्ययन में पाया कि एक ही तरह की ड्रग कई समूहों को देने पर सबमें समान उदोलन का प्रभाव नहीं पाया गया। आक्रामक लोगों के साथ रखे गये समूह में ड्रग लेने के बाद आक्रामकता अधिक पायी गई। जो लोग मनमौजी व्यक्तियों के साथ रखे गये वे ड्रग लेने के बाद मस्त दिखायी पड़े। जब उन्हें बता दिया कि ड्रग लेने के बाद उनमें संवेगात्मक उदोलन हो सकता है तो उनमें आक्रामकता या मस्ती के भाव नाम मात्र ही दिखाई पड़े। ऐसी स्थिति में प्रयोज्यों ने उदोलन को ड्रग का परिणाम मान लिया। इससे स्पष्ट हुआ कि शारीरिक, भावनात्मक या संवेगात्मक उदोलन से आक्रामकता पैदा हो सकती है, परन्तु ऐसी दशा में यह भी महत्वपूर्ण है कि व्यक्ति उदोलन के लिए किस कारक को उत्तरदायी मानता है । (ग्रीन इत्यादि 1972) यदि कोई व्यक्ति उदोलन उत्पन्न करने वाले स्रोत को गलत रूप में उत्तरदायी मान बैठता है तो उसमें आक्रामकता और भी बढ़ जाती है (Reisenzein 1983, Zillman and Bryant 1974 , Bryant and Zillman 1979, Zillman et.al.1972) जैसे यदि पहले से ही क्रोधित व्यक्ति को यह पता लग जाये कि समस्या का कारण अमुक व्यक्ति है, तो उसका क्रोध और भी बढ़ जाता है। भले ही वह वास्तव में क्रोध के उदोलन के लिए उत्तरदायी न हो। अनेक अध्ययनों से निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि अश्लील या लैंगिक गतिविधियों या उनसे संबन्धित सामग्री का अवलोकन करने पर उदोलन में वृद्धि हो जाती है, इससे महिलाओं के प्रति आक्रामकता बढ़ जाती है। इन अध्ययनों से प्रायः यही निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि पुरूष के सामने लैंगिक उदोलन के उत्पन्न करने वाली सामग्रियाँ जैसे पोस्टर, पॉम्फलेट, पत्रिकाऐं फिल्में आदि प्रदर्षित करने से महिलाओं के प्रति यौन आक्रामकता बढ़ जाती है।

v. **टेलीविजन अवलोकन-** आजकल फिल्मों एवं अधिकांश धारावाहिकों में मारपीट झगड़े , लूट मार, हत्या एवं बलात्कार की घटनाएं प्रायः दिखाई जाती हैं। आक्रामक एवं हिंसक दृश्यों को देखने से विभिन्न प्रकार के आक्रामक व्यवहारों में तेजी से वृद्धि हो रही है। बच्चे जिस तरह के हिंसक दृश्यों को देखते हैं वे उसी प्रकार की आक्रामकता का प्रदर्शन भी करते हैं। बन्डूरा एव वाल्टर्स (1963) के अनुसार, आक्रामक एवं हिंसक फिल्में देखने पर बच्चों में सामान्य परिस्थिति की तुलना में आक्रामकता काफी अधिक बढ गई है। इसी प्रकार फिलिप्स (1983) का निष्कर्ष यह है कि हैवीवेट चैम्पियन की

प्रतियोगिता देखने के पश्चात अमेरिका में (1973-1978) में दिन प्रतिदिन की हत्याओं की संख्या में वृद्धि हो गई। इससे स्पष्ट है कि आक्रामक एवं हिंसक घटनाओं के निरीक्षण से दर्शको में मारपीट, लूटपाट एवं हत्या आदि की प्रवृत्ति को बढावा मिलता है। आक्रामक एवं हिंसक घटनाओं के अवलोकन से दर्शकों में संकोच की भावना समाप्त हो जाती है। समाज द्वारा आक्रामकता के नकारात्मक मूल्यांकन का भय समाप्त हो जाता है । इस मनोवैज्ञानिक दशा को फेस्टिंगर इत्यादि (1952) ने अवैयक्तिकता का नाम दिया है। इससे वह हिंसक कार्य में अधिक सक्रिय हो जाता है। समूहों में मारपीट , तोड़फोड़ या प्रदर्शन करने वालों में यह भावना काफी प्रबल हो जाती है । इस प्रकार आक्रामक एवं हिंसक व्यवहारों का अवलोकन करने से दर्शकों में भी ऐसी भावना पैदा हो जाती है।

vi. **कुण्ठा-** लक्ष्य से वंचित हो जाने पर अथवा लक्ष्य प्राप्ति में व्यवधान उत्पन्न होने पर व्यक्ति कुण्ठा या निराशा का अनुभव करने लगता है। कुण्ठा आक्रामकता को जन्म देती है। फलतः वह आक्रामकता जैसे मारपीट, झगड़ा, सामान नष्ट करना आदि का प्रदर्शन करने लगता है। वह कुण्ठा उत्पन्न करने वाले व्यक्ति पर सीधे आक्रमण कर सकता है। इसमें असफल होने पर वह आक्रामकता का विस्थापन भी कर सकता है।

vii. **मादक पदार्थ-** मादक पदार्थ सेवन से आक्रामकता एवं हिंसा बढ़ाने में सहायता मिलती है। उदाहरण के लिऐ शराब पी लेने से आक्रामकता में वृद्धि हो जाती है। इस प्रकार थोड़ी मात्रा में गांजा लेने पर भी आक्रामकता में वृद्धि होती है, परन्तु यदि गांजे की मात्रा बढ़ा दी जाये तो आदमी शान्त हो जाता है। (Taylor and Leonord1983, Taylor etc 1976, Bailey etc 1983)

viii. **जैविक कारक -** कुछ जैविक या अनुवांशिक विशेषताऐं आक्रामकता में सहायता करती हैं (Megargee1966) । आक्रामकता पर व्यक्तित्व संबन्धी कुछ कारकों का प्रभाव पाया गया है। कुछ विद्वानों का निष्कर्ष है कि कम बुद्धि परंतु लम्बे व तगड़े लोगों में आक्रामकता अधिक पायी जाती है। ऐसे भी निष्कर्ष हैं कि मस्तिष्क संरचना असामान्य होने पर आक्रामकता का प्रदर्शन अधिक होता है। (Delgado1969)

अभ्यास प्रश्न

1. किसी को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया गया व्यवहार _____कहा जाता है ।
2. यदि आक्रामक उद्देश्य छिपा हुआ हो तो उसे_____कहते हैं ।
3. फ्रायड के अनुसार आक्रामकता का कारण _____है ।
4. लारेन्ज के अनुसार प्राणी आक्रामक व्यवहार _____करता है।
5. आक्रामकता सदैव कुण्ठा का परिणाम होती है यह _____का कथन है।
6. आक्रामकता के सामाजिक अधिगम सिद्धांत का श्रेय _____को दिया जाता है।
7. पीड़ा में वृद्धि से आक्रामकता में _____होती है ।
8. तापमान एवं ध्वनि प्रदूषण _____में वृद्धि करते हैं।

9. दूरदर्शन पर _____का अवलोकन बच्चों मे आक्रामकता बढ़ा रहा है।
10. समाज द्वारा आक्रामक व्यवहारों का नकारात्मक मूल्यांकन कोई संकोच/भय न होना कहलाती है_____।

10.7 सारांश

आक्रामक व्यवहार उस व्यवहार को कहा जाता है जो कि सिर्फ हानि या क्षति ही नहीं पहुचा सकता है बल्कि हानि या क्षति पहुँचाने का उद्देश्य भी रखता है। मूलप्रवृत्ति सिद्धांत के समर्थक आक्रामकता को प्राणी या व्यक्ति की जन्मजात विशेषता मानते हैं। इसका परिवेशीय या वातावरणीय अनुभवों से संबंध नहीं हैं। डोलार्ड के अनुसार आक्रामकता सदैव किसी कुण्ठा का परिणाम हेाती है। इसमें कुण्ठा या आक्रामकता के संबन्ध पर अधिक जोर दिया गया है। सामाजिक अधिगम सिद्धांत आक्रामक व्यवहार को सीखा हुआ या अर्जित व्यवहार मानता है। पीड़ा तापमान, एवं कोलाहल, आक्रमण आदि विकर्षणात्मक घटनाऐं आक्रामकता एवं हिंसा भड़काने में योगदान करती हैं। शारीरिक भावनात्मक या संवेगात्मक उदोलन से आक्रामकता पैदा होती है। अश्लील या लैंगिक गतिविधियों या उनसे संबधित सामग्रियों का अवलोकन करने पर उदोलन में वृद्धि होती है। आक्रामक एवं हिंसक फिल्में देखने से बच्चों में सामान्य परिस्थिति की तुलना में आक्रामकता काफी बढ़ जाती है। अवैयक्तिकता की भावना आ जाने पर उस पर संकोच का प्रभाव घट जाता है एवं प्रतिबन्धों के प्रभाव से मुक्त हो जाने पर अधिक हिंसक व्यवहार करता है। मादक पदार्थ एवं कुछ जैविक या अनुवांशिक विशेषताऐं जैसे व्यक्तित्व , लंबे तगड़े आकार एवं मस्तिष्कीय संरचना का असामान्य होना आदि आक्रामकता वृद्धि में सहायता करती है। प्रचंड आक्रामकता हिंसा कहलाती है।

10.8 शब्दावली

1. **क्षति** - हानि , नुकसान
2. **सार्वभौमिक** - सर्वव्यापक , पूरे विश्व में
3. **साधनात्मक** -अव्यक्त , छिपा हुआ
4. **कुण्ठा** - निराशा
5. **प्रेक्षणात्मक अधिगम** - देखकर सीखना
6. **विकर्षणात्मक -** कष्टपूर्ण, अलगाव संबधी
7. **उदोलन** - उत्तेजना
8. **अवैयक्तिकता** - अमानवीय व्यवहार करने में व्यक्ति के संकोच की भावना का समाप्त होना।

10.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. आक्रामकता
2. साधनात्मक आक्रामकता
3. मृत्यु मूलप्रवृत्ति
4. रक्षार्थ

5. डोलार्ड
6. वैण्डुरा
7. वृद्धि
8. आक्रामकता
9. आक्रामकता मॉडलों
10. अवैयक्तिकता की प्रवृत्ति

10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह आर. एन. - आधुनिक समाज मनोविज्ञान 2007-2008, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा-
2. 2. सिंह आर. एन.(2005) आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंन्दिर आगरा-2
3. सिंह ए.के - 2002 समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा मोती लाल बनारसी दास दिल्ली
4. सिंह ए.के. (2000) उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान मोती लाल बनारसी दास दिल्ली
5. श्रीवास्तव, डी. एन.समाज मनोविज्ञान दसवां संस्करण, साहित्य प्रकाशन आगरा
6. श्रीवास्तव, डी. एन एवं अन्य,(2000-2001) आधुनिक समाज मनोविज्ञान, एच.पी .भार्गव बुक हाउस आगरा।
7. भटनागर ए.बी.एवं अन्य, डेवलपमेन्ट आफ लर्नस एण्ड टीचिंग लर्निगं प्रोसेस ,विनय राखेजा C/O लाल बुक डिपो मेरठ
8. रोवर्ट , ए बैरन एवं डान बैरन (नौवा संस्करण) पीयर्सन एडूकेशन , (सिंगापुर) प्रा. लि. इण्डियन ब्रांच 482 एम. आइ दृई पटपरगंज दिल्ली 110092 इंडिया।
9. त्रिपाठी आर.बी. एवं सिंह आर. एन. (2002) व्यक्तित्व का मनोविज्ञान ,सुमित भार्गव , गंगा सरन एण्ड ग्रेण्ड सन्स सी. के. 37/44 बी बॉसफाटक वाराणसी
10. मुहम्मद सूलेमान (2006) सामान्य मनोविज्ञान, मूल प्रक्रियाऐं एवं संज्ञानात्मक प्रक्रियाएं ।
11. मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली
12. अग्रवाल विमल (2010-11) मनोविज्ञान एस.बी.पी.डी. पब्लिकेशन आगरा।

10.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. आक्रामकता को स्पष्ट कीजिए एवं उसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।
2. क्या आक्रामकता जन्मजात है? आक्रामकता के मूलप्रवृत्ति सिद्धान्त के परिपेक्ष्य में स्थिति को स्पष्ट कीजिऐं।
3. आक्रामकता कुण्ठा का परिणाम है। इस कथन की वैद्यता की जाँच कुण्ठा आक्रामकता के सिद्धांत के संदर्भ में कीजिए।
4. आक्रामकता के सामाजिक अधिगम सिद्धांत की विवेचना कीजिए।
5. आक्रामकता एवं हिंसा के निर्धारकों का संक्षेप में वर्णन कीजिए
6. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-

i. उदोलन
ii. हिंसा एवं टेलीविजन
iii. विकषर्णात्मक घटनाएं